मुद्रक
सुराना प्रिन्टिंग वर्क्स
२०५ अपर चितपुर रोड कलकत्ता-७

दो शब्द

रत्नगर्भा भारतभूमि रत्नों के लिए विश्वविख्यात है। अगणित रत्नों की जन्मदात्री भारतभूमि मे अभी तक रत्नों के शोध पूर्ण प्रामाणिक ग्रन्थों का अभाव सा ही रहा है।

मैंने "रत्नप्रकाश" नामक पुस्तक लिखकर रत्नों की उपयोगिता प्रामाणिकता तथा अन्य आवश्यक विषयों पर प्रकाश डालने का यथाशक्य प्रयास किया है। हमारे प्राचीन साहित्य के एतद्विषयक ग्रन्थों की शोध होकर प्रकाश मे लाना नितान्त आवश्यक था। श्री अगरचन्दजी, भंवरलालजी नाहटा की शोध से फेरू ग्रन्थावली की ६०० वर्ष प्राचीन पाण्डुलिपि प्रकाश में आई और उसका पुरातत्वाचार्य पद्मश्री मुनि जिनविजयजी द्वारा मूल रूप मे प्रकाशन हो गया है।

इस सन्दर्भ मे ठक्कुर फेरू की रत्नपरीक्षा के हिन्दी अनुवाद के साथ-साथ अन्य दो ग्रन्थ व विद्वानों के इस विषय के विविध ज्ञानवर्द्धक लेख जौहरी भाइयों के लिए अत्यन्त उपयोगी अ मार्गदर्शक सिद्ध होंगे। आशा है जौहरी लोग व अन्य इस विषय के जिज्ञासुवर्ग इन ग्रन्थों को अपनाएंगे और लाभान्वित होकर इसे प्रकाश में लाना सार्थक करेंगे।

—राजरूप टांक

अनुक्रमणिका

—❀—

दो शब्द — १

भूमिका — सम्पादकीय — १ से १६

ठक्कुर फेरू कृत रत्नपरीक्षा का परिचय
डा. मोतीचन्द्र एम. ए. पी. एच. डी. — १ से ५७

रत्नों की वैज्ञानिक उपादेयता और परिचय
पद्मभूषण पं० सूर्यनारायण व्यास — ५८ से ७४

चिकित्सा में रत्नों का उपयोग — श्री राधाकृष्ण नेवटिया — ७५-८

रत्नपरीक्षा (हिन्दी अनुवादसह) — ठक्कुर फेरू — १ से ४

रत्नपरीक्षा — मुनि तत्त्वकुमार — ४१ से ८८

रत्नपरीक्षा — वा. रत्नशेखर — ८९ से १५५

परिशिष्ट

१ नवरत्न परीक्षा — १५७

२ मोहरां री परीक्षा — १५८

३ कृत्रिम रत्न — १६६

४ नवरत्न रत्न — १६७

———

भूमिका

रत्न परीक्षा सम्बन्धी भारतीय साहित्य

रत्न वहुत मूल्यवान वस्तु को कहा जाता है। साधारणतया उच्च कोटि के खनिज-पाषाणादि, जो वहुत अल्प परिमाण में मिलता हो, सार गुण युक्त, सुन्दर और तेजस्वी हो उसको 'रत्न' सज्ञा दी जाती है। यद्यपि कई ग्रन्थों में रत्नों के प्रकार (सख्या) ८४ वतलाये गये हैं पर उनमें से ९ ग्रहों के ९ रत्न प्रधान हैं, अवशिष्ट उपरत्न हैं। इन ९ रत्नों की प्रधानता एव ९ की संख्या के महत्त्व के कारण ही सम्राट विक्रम की सभा के नवरत्न, अकवरी दरवार के नवरत्न आदि प्रधान पुरुषों की सख्या एव सज्ञा पायी जाती है। किसी विशिष्ट प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति एवं पदार्थ की उपमा भी 'रत्न' के रूप में दी जाती है क्योंकि रत्न शोभा वढाने वाला और तेजस्वी होता है।

प्राचीन भारतीय साहित्य में विभिन्न प्रकार के रत्नों के नाम वेदादि वहुसख्यक ग्रन्थों में उल्लिखित मिलते हैं। प्राचीन जैन आगमों में अनेक मणि रत्नों के नाम प्रसंग प्रसग पर दिये गये हैं, जिसमें से कुछ के उल्लेख यहाँ दिये जाते हैं।

१—पन्नवणा सूत्र में—

गोमेज्जए य रुयए अके फलिहेय लोहियक्खेय।
मरगय मसारगल्ले भुयमोयग इंदनीलेय ॥३॥
चदण गेरूय हंसगब्भ पुलए सोगंधिए य वोद्धव्वे।
चंदप्पभ वेरुलिये जलकंते सूरकंते य ॥४॥

२—तीर्थंकरों की माताएं १४ महास्वप्न देखती हैं, उनमें ११ वां स्वप्न रत्न राशि है। उस राशि के कुछ रत्नों के नाम ये हैं—

पुलग वइरिंदनील सासग कक्केयण लोहियक्ख मरगय मसारगल्ल पवाल फलिह सोगंधिय हंसगब्भ अंजण चंदप्पह वररयणेहिं।

(कल्पसूत्र)

अर्थात्—पुलक, वज्रहीरा नीलम, सस्यक, कर्केतन, लोहिताक्ष मरकत मसारगल्ल प्रवाल स्फटिक सौगन्धिक हंसगर्भ चन्द्रकान्तादि श्रेष्ठ रत्न।

जैन आगमों में भी रत्नों के नाम दिये हैं। पन्नवणा में वैडूर्य मणि मौक्तिकादि १४ प्रकार के रत्नों का भी उल्लेख[1] मिलता है। यों चक्रवर्ती के १४ रत्न माने गये हैं पर यहाँ रत्न का अर्थ है—स्वजातीय में सर्वोत्तम वस्तु (स्वजातीय मध्येसमुत्कर्षपदि वस्तुनि)।

रत्नों के सम्बन्ध में भारतीय साहित्य बहुत ही विशाल है। स्वतन्त्र ग्रन्थों के अतिरिक्त अर्थशास्त्र, राजनीति, ज्योतिष, वैद्यकादि अनेकों ग्रन्थों में रत्नों का विवरण मिलता है जिनकी संक्षिप्त जानकारी यहाँ देनी अभीष्ट है। पुराणों आदि में तो रत्न परीक्षा विषयक पर्याप्त विवरण पाया जाता है। अग्नि पुराण (२४६) गरुड़ पुराण (१ ६८-८)

१—रयणाणि पयम्मीणं सुवण्ण तउ तंब रयय लोहाइं।
सीसय हिरण्ण पासाण वइरमणि मोत्तियं पवालं ॥२५४॥
संखो तिणिस अगुरुचन्दणाणि वत्थामिलाणि कट्ठाणि।
तह चम्मदन्तवाला गंधा दव्वोसहाइं च ॥२५५॥

देवी भागवत (८, ११-१२) और महाभारत (१०) विष्णु धर्मोत्तर धृत माव प्र० तन्त्रसार में रत्न विषयक चर्चा है।

रत्न परीक्षा सम्बन्धी स्वतत्र ग्रन्थों में अगस्त्य ऋषि का अगस्तिमत व अगस्तीय 'रत्न परीक्षा' ग्रन्थ सबसे अधिक प्रसिद्ध रहा है। इस ग्रन्थ के अनेक अनुवाद गद्य और पद्य में राजस्थानी, हिन्दी, गुजराती आदि भाषाओं में होते रहे हैं। सस्कृत और प्राकृत ग्रन्थकारों ने भी रत्न परीक्षा सम्मन्धी जो ग्रन्थ लिखे हैं उनमें भी इसी ग्रन्थ को प्रधान आधार माना है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र, शुक्रनीति आदि ग्रन्थों में भी रत्न परीक्षा की चर्चा है। बुद्धभट्ट और सुरमिति रत्न विज्ञान के पारंगत मनीषी थे। ठक्कुर फेरू ने अपनी प्राकृत रत्नपरीक्षा में 'अगस्ति, बुद्धभट और सुरमिति की रचनाओं के आधार से मै यह ग्रन्थ बना रहा हूँ' लिखा है। कल्याणी के चालुक्य राजा सोमेश्वर (११२८-३८ ई०) रचित नवरत्न परीक्षा, रत्नसंग्रह, रत्नसमुच्चय, लघु रत्नपरीक्षा, मणि-महात्म्य प्रकाशित है। चण्डेश्वर की रत्नदीपिका भी अच्छी प्रसिद्ध रही है। रत्न परीक्षा समुच्चय और अप्पय दीक्षित की रत्नपरीक्षा भी इस विषय के अच्छे ग्रन्थ हैं। वराहमिहर की बृहत् संहिता (अध्याय ८० से ८३) आदि ज्योतिष एवं कई वैद्यक आयुर्वेद ग्रन्थों में भी रत्नों का विवरण पाया जाता है।

महाराणा राजसिंह के नाम से ढुंढिराज रचित राज रत्नाकर ग्रन्थ भी इस विषय का उल्लेखनीय ग्रन्थ है। नारायण पंडित का नवरत्न परीक्षा और मानतुंगसूरि का मानतुंग शास्त्र अपर नाम 'मणिपरीक्षा' आदि और भी बहुत से संस्कृत ग्रन्थ इस सम्बन्ध में रचे गये। जिनमें

से कई ग्रन्थों के रचयिताओं के नाम नहीं मिलते। गोंडल के भुवनेश्वरी पीठ से प्रकाशित भुवनेश्वरी कथा के प्रथम अध्याय में रत्नों के प्रकारों का अच्छा वर्णन है।

जयपुर के दिगम्बर जैन तेरापन्थी भंडार में एक सर्व-रत्न-परीक्षा नामक संस्कृत ग्रन्थ भी है, जो अपूर्ण मिला है। इसी भण्डार में पद्य रत्न परीक्षा नामक एक अपभ्रंश ग्रन्थ की प्रति है। कोटा भण्डारादि में भी वि विरचित रत्नपरीक्षा की प्रतियाँ हैं पर कई ग्रन्थ ऐसे हैं जिनके नाम उनके रत्नपरीक्षा सम्बन्धी होना सूचित करते हैं पर वास्तव में वे ग्रंथ ज्योतिष आदि अन्य विषयों के भी निकल सकते हैं अतः जहाँ तक उन ग्रन्थों की प्रतियों को देख न लिया जाय वहाँ तक निश्चित नहीं कहा जा सकता।

रत्नों के फलाफल के साथ ज्योतिष का भी गाढ़ सम्बन्ध है इसलिये ज्योतिष के भी कई ग्रन्थ रत्नों की पर्याप्त जानकारी देते हैं।

अनूप संस्कृत लायब्रेरी में नारायण पण्डित कृत नवरत्नपरीक्षा मानतुंग रचित मणि स्थान लक्षण अगस्त्य रचित मुक्ता परीक्षा मुक्ता परीक्षा एवं रत्नपरीक्षा राजस्थानी टीका सहित की प्रतियाँ हैं। मद्रास ओरियण्टल सीरीज से 'रत्नदीपिका रत्नशास्त्रं च' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुका है।

प्राकृत भाषा में रत्नपरीक्षा का एक मात्र ग्रन्थ ठक्कुर फेरु रचित उपलब्ध है जिसकी उन्होंने अपने पुत्र हेमपाल के लिए सं १३७२ में अलाउद्दीन के विजय राज्य में रचना की थी। ठक्कुर फेरु अलाउद्दीन का भण्डारी था। अतः उसने तत्कालीन रत्नों के सम्बन्ध में जो

द्रव्य परीक्षा ग्रन्थ लिखा है, वह तो भारतीय साहित्य में एक अजोड़ और अपूर्व ग्रन्थ है। उनका रत्नपरीक्षा भी केवल पुराने ग्रन्थों पर ही आधारित नहीं है पर ग्रन्थकार का अपना अनुभव भी उसमें सम्मिलित है। इसीलिए इस ग्रन्थ का महत्त्व रत्नपरीक्षा सम्बन्धी ग्रन्थों में सबसे अधिक है। दूसरे ग्रन्थकारों ने तो अधिकाश अगस्ति की रत्नपरीक्षा, रत्नदीपिका, रत्नपरीक्षा समुच्चय आदि प्राचीन ग्रन्थों के आधार से ही अपने ग्रन्थ लिखे हैं। ग्रन्थकारक स्वय जौहरी नहीं थे, इसीलिये उनमें स्वानुभव क्वचित् ही मिलेगा। राजाओं और जौहरियों के लिये ही उन ग्रन्थों की रचना हुई है।

रत्नपरीक्षा सम्बन्धी हिन्दी साहित्य भी उल्लेखनीय है, यहाँ उनमें से ज्ञात ग्रन्थों का विवरण दिया जाता है।

हिन्दी भाषा में रत्नपरीक्षा सम्बन्धी ग्रन्थों में सं० १५६८ में लिखित रत्नपरीक्षा और रत्नपरीक्षा समुचय के राजस्थानी (गुजराती-प्रधान) गद्यानुवाद सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। गुजरात विद्यासभा, अहमदाबाद के संग्रहालय में उसकी ८२ पत्रों की प्रति है। कविवर दलपतराम हस्तलिखित पुस्तक नी सूची के पृष्ठ २१८ में उसका विवरण निम्नप्रकार पाया जाता है।

७४७ रत्नपरीक्षा (ग्रन्थ गद्य मांछे) सं० १५६८, १ थी १७।१६ ४४।

आरम्भ—सविअ मुनिश्वरि विहुहाथ जोडी नमस्कार करी × × सुक्त ऋषीश्वर इसिउ पूछिउ × ×

अत—× जे रतन (?) दोष सहित हुइ तेहनु थोडु मूल कहीउ।

चे सुपथमि वेधि हुई तेतनु मनु मूल कहीए। कार्य सदमी शुभ मु देहि—हुई १ इति श्री *अगस्ति मुनि प्रणीता रत्नपरीक्षा समाप्त।*

७४७ म रत्नपरीक्षा समुच्चय सं० १६६८। ४६ पी ८२
(भय गद्य मांहि)

आरम—××× पद्मराग मणि करी श्री सूर्य प्रसन्न हुई। मोतीइ करी चन्द्रमा प्रसन्न हुई। परवाले मंगल प्रसन्न हुए, मरकत मणि बुध प्रसन्न हुई ×× इति मौक्तिक परीक्षा समाप्त ×× सं १६६८ मार्गशीर्ष वदि ५ बुधे। उदीच्यवेन विद्याधर सुतर्ड लिखत कल्याणमस्तु।

अन्त —+ सर्व संपत संपूर्ण करे मन वाञ्छ करइ। अनइ विघ्न समस्तु विनाश करसे। १ इति विद्रुम परीक्षा। इति श्री रत्नपरीक्षा। समुच्चय समाप्त। स १६६८ वर्षे माघ सुदि ९ अनन्तर १ लिखी

वासरे अद्य श्री पत्तनवास्तव्य उदीच्य ज्ञातीय शुभे विद्याधरसुतर (प्र) णी लिखत रत्नपरीक्षा ग्रन्थ। (खंड पृ ८२)

अगस्ति की रत्नपरीक्षा के पद्यानुवाद की स १७३५ में लिखित प्रति अनूप संस्कृत लायब्रेरी में एवं हमारे संग्रह में है। यह पद्यानुवाद १७ वीं शताब्दी में बनाये गये होंगे।

स १६६१ में राजस्थान के सुप्रसिद्ध प्रेमाख्यानी हिन्दी कवि जान ने 'पाहन परीक्षा' हिन्दी और तुर्की दोनों मतों के अनुसार बनाया इसलिये इस ग्रंथ का अपना विशिष्ट महत्व है।

> पाहन की परीक्षा कछु जैसे ग्रंथ बखान,
> को सुहरो किम काम को प्रगट कहत कवि जान।
> हिन्दी तुर्की मति मथौ कह्यो खण्ड बखानि
> कहत जान जानत नहीं सीख कहत सुजानि॥

बीकानेर भण्डार की प्रति में इस ग्रन्थ का नाम 'रत्नपरीक्षा' भी लिखा है। उसमें इस ग्रन्थ के ४६ पद्य है। रचनाकाल की सूचना वाला पद्य इसमें नहीं है। कलकत्ता के स्व० बाबू पूरणचन्दजी नाहर के गुटका नं० ३९ में रचनासमयोल्लेख वाला पद्य भी है।

इसके बाद रत्नसागर[1] नाम के कवि ने सं० १७५५ के पौष वदि ४ शनिवार को रत्नपरीक्षा ग्रंथ का प्रारम्भ किया। इस ग्रंथ को भ्रम-वश सन् १९०५ की खोज रिपोर्ट में गुरुप्रसाद रचित और रत्नसागर ग्रन्थ का नाम बतला दिया है। वास्तव में ग्रन्थ के अन्तमें जो 'गुरु प्रसाद' शब्द आता है उसका अर्थ गुरु के प्रसाद से रचा गया ही अभिप्रेत है।

औरो रत्न अनेक है, असुर देह संजात।
कछु कहे लखि ग्रंथ मति, 'गुरूप्रसाद' अवदात॥

इस गुरु प्रसाद शब्द को गुरयदास पढकर खेमराज श्रीकृष्णदास बम्बई ने सं० १९६९ में इस ग्रन्थ को छपाया तब उसे गुरुदास विरचित लिख दिया गया। थोडी सी भूल में ग्रन्थ का नाम कुछ का कुछ प्रसिद्धि में आ गया। हमने जब इस ग्रन्थ की सं० १८४० लिखित

१—इसी (रत्नसागर) नाम से इसका सर्व प्रथम प्रकाशन सं० १९६२ में मनीषि समर्थदान ने राजस्थान यंत्रालय, अजमेर से किया था राजस्थान समाचार पत्र में भी इसका कुछ अंश छपा होगा। ग्रन्थ में १५ तरग है। वेंकटेश्वर प्रेस से यह संस्करण शुद्ध और सस्ता था। इसका मूल्य ≡) मात्र था।

प्रति को जयपुर से पं० मथुरानाथजी से मंगाकर देखा और मिलान किया तब इस भ्रम का संशोधन हो सका। इस ग्रन्थ में १६ तरंग है। प्रत्येक तरंग के अन्त में "इतिश्री रत्नपरीक्षायां रत्नसागर विरचितायां अमुक तरंगः" ऐसा स्पष्ट उल्लेख है। इसलिये इस ग्रन्थ का रचयिता गुरुदास नहीं रत्नसागर ही समझना चाहिये।

यह ग्रन्थ भी अगस्ति के रत्नपरीक्षा पर ही आधारित है। सं० १६ ६ के खोज विवरण में यह ग्रन्थ 'नीलम परीक्षा' तक में ही समाप्त हो जाता है और उसे १४ वी तरंग बतलाया गया है पर वास्तव में छपे हुए ग्रन्थानुसार इस में पीछे और भी पाठ रह जाता है और ग्रन्थ १६ तरंगों में पूरा होता है। प्रारम्भ के चार पद्य इस प्रकार है—

मनसा वाचा कर्मणा, यथाशक्ति भजु तोइ।
मथि सागर रत्नहि कयो, दे बंछी मति मोहि॥
सतरहसौ पचपन मनौ मन आई तजि दंभ।
चौथ शनिश्चर पोष वदि पुष्य फरु आरम्भ॥
एक समय सब ऋषिन मिलि मुनि अगस्त पे आइ।
हाथ जोड़के पूछीयो करि अस्तुम मन भाइ॥
रत्नपरीक्षा करि कृपा कहिये सुमति सुजान।
जाते सबही रत्न को जाने नर परवान॥

विवरण में इन पद्यों से पहिले दुहा और दिया है।

जैनी का भी रत्नादि जवाहरात के व्यापार में बहुत बड़ा हाथ रहा हुआ है। मध्य कई शताब्दियों से शासकों और मुस्लिम बादशाहों के ये ही विशिष्ट जौहरी रहे हैं। इसलिये उनकी आवश्यकता पूर्ति के

लिये दो ग्रन्थ जैन यतियों ने व एक जैनेतर कवि कृष्णदास ने बनाया है। विवरण इस प्रकार है।

१—स० १७६१ मिगसर सुदि ५ गुरुवार को सूरत में अचलगच्छीय वाचक रत्नशेखर ने ५७० पद्यों का हिन्दी में रत्नपरीक्षा ग्रन्थ बनाया। उसकी रचना भीमसाहि के पुत्र शकरदास के लिये की गई है। इसकी प्रति बीकानेर के वृहत् ज्ञानभडार में है।

२—सं० १८४५ में खरतर गच्छीय तत्वकुमार मुनि ने श्रावण वदि १० सोमवार को बगदेशवर्ती राजगज के चडालिया गोत्रीय आशकरण के लिए इसकी रचना की है। इन दोनों रचनाओं को इसी ग्रन्थ में प्रकाशित किया जा रहा है।

तृतीय ग्रन्थ स० १६०४ कार्तिक वदि २ को बीकानेर के बोथरा गोत्रीय जोहरी कृष्णचन्द्र जो दिल्ली में रहते थे, उनके लिये कृष्णदास नामक कवि ने रचा है। इसकी पद्य सख्या १३७ है। यह कवि श्रीकृष्ण जी का भक्त था। इसकी एकमात्र हस्तलिखित प्रति स्व० पूरणचन्दजी नाहर के संग्रहस्थ गुटके में है।

इन तीनों ग्रन्थों का विवरण मेरे सपादित राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज के द्वितीय भाग के पृष्ठ ५६ से ५६ में दिया गया है।

रत्नपरीक्षा सम्बन्धी अन्य चार ग्रथ मिलते हैं, जिनमें से एक की रचना रामचन्द्र नामक कवि ने रत्नदीपिका के आधार से की है। यह अज्ञात रचना काल का ७० पद्यों का ग्रन्थ है। सा० दामोदर के वंशज धारीमल्ल के लिए इसकी रचना हुई है।

दूसरा ग्रन्थ नवलसिंह कवि रचित जौहरिन तरंग है। यह ५९९ छन्दों में सं० १८०५ में रचा गया। इसका विशेष परिचय मुनि कान्तिसागरजी ने नवलसिंह कृत जौहरिन तरंग लेख में दिया है जो ब्रजभारती एवं नागरी प्रचारणी पत्रिका के वर्ष ५८ अंक १ में प्रकाशित हुआ है।

तीसरे महत्वपूर्ण ग्रन्थ का परिचय पं० मोतीलाल मेनारिया सम्पादित राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज के भाग १ पृ० १४ में दिया गया है। रत्नविषयक उपलब्ध हिन्दी ग्रन्थों में यह सबसे बड़ा है। सं० १८५९ में लिखित १४८ पत्रों की प्रति उदयपुर के सज्जन वाणी विलास संग्रहालय में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ ९९ अध्यायों में विभक्त है। रचना में रत्न-मणियों के विवरण प्राप्ति का प्रसंग इस प्रकार दिया है—

एक दिन स्नान करने के पश्चात् राजा अम्बरीष जब वस्त्राभूषण धारण करने लगते हैं तब उनके मन में यह विचार उठता है कि इन सुन्दर-सुन्दर रत्न मणियों की उत्पत्ति कैसे हुई होगी। राजा अपनी सभा जाते हैं और अपने पंडितों से इस विषय में पूछताछ करते हैं। इसे पाराशर ऋषि कहते हैं महाराज! मैंने वेदपुराण आदि को गाया है और रत्न मणियों के नाम भी सुने हैं पर उनका भेद मुझे अभी तक नहीं मिला। हाँ व्यास मुनि इस भेद को अवश्य जानते हैं आप यदि उनके पास चलें तो आपके प्रश्नों का उत्तर मिल सकता है। इस पर राजा अम्बरीष और पाराशर दोनों व्यासजी के आश्रम में पहुँचते हैं। वहाँ पर यही प्रश्न अम्बरीष व्यासजी से करते हैं। व्यासजी राजा के

वचनों को सुनकर बहुत प्रसन्न होते हैं और कहते हैं राजन। रत्नमणियों के रहस्य को शिवजी ने ब्रह्मा और विष्णु के सामने पार्वती को बतलाया था वह मुझे स्मरण है, सुनाता हूँ। तदनन्तर मन में शिवजी का ध्यानकर व्यासजी रत्न मणियों का वर्णन प्रारम्भ करते हैं।

चौथे ग्रथ की सूचना मात्र ही डा० मोतीलाल मेनारिया ने बहुत वर्ष पूर्व दी थी उसकी अपूर्ण प्रति ही उन्हें मिली है विशेष विवरण प्राप्त न हो सका।

शिल्पससार ३० अप्रेल १६५५ के अक में निम्नोक्त ग्रथ और बतलाये हैं .—

१—रत्नप्रदीप—हीरे, माणक, मोती वगैरह की जानकारी मराठी लेखक प० ल० खोवेटे जलगाव (खानदेश) खोवेटेजी का इस विषय पर और भी एक ग्रन्थ है।

२—रस प्रकाश सुधारक अध्याय

३—पदार्थ वर्णन खनिज पदार्थ (मराठी) ले० बालाजी प्रभाकर— (१८६१) रत्नोप० पृ० ५३ से ७१

४—मणि मोहरा विधान अर्थात् रत्नपरीक्षा ले० अभयचन्द जाजू

५—रत्नपरीक्षक—घासीराम जैन, सुदर्शन यन्त्रालय, मथुरा

६—रत्नदीपक—ले० लक्ष्मीनारायण वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई

७—वैदिक मैगिजन लाहोर से कोनेरी राव साहब का नोलेज विसमोनस् दिसम्बर १६२३

८—उद्यम १६२५ में प्र० रत्नोपरत्न व उनके उपयोग लेख (नागपुर)

इस प्रकार रत्नपरीक्षा सम्बन्धी भारतीय साहित्य का संक्षिप्त परिचय देनेके पश्चात् प्रस्तुत ग्रन्थ की जन्म कथा कही जाती है।

हमने १८ वर्ष पूर्व कलकत्ता की नित्य विनय-मणि-जीवन जैन लायब्रेरी से प्राप्त फेरू ग्रन्थावली की सं. १४०४ में लिखित प्रति से सम्पादित कर पुरातत्त्वाचार्य पद्मश्री मुनि जिनविजयजी को प्रकाशनार्थ भेजी थी जिसे मुद्रण उन्होंने राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के ग्रन्थाङ्क ६ में ३ वर्ष पूर्व प्रकाशित की। उस समय हमने द्रव्यपरीक्षा, रत्नपरीक्षादि ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद भी किया और डा. वासुदेवशरण अग्रवाल पं. भगवानदास जैन और डा. मोतीचन्दजी आदि को निरीक्षणार्थ भेज दिया।

कन्नाणा निवासी श्रीमाल धांधिया गोत्रीय परम जैन चन्द्रांगज ठक्कुर फेरू सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के मन्त्रिमण्डल में एक विशिष्ट अनुभवी और बहुश्रुत विद्वान थे। उन्होंने ज्योतिष, गणित, वास्तुशास्त्र, रत्नशास्त्र, धातूत्पत्ति और मुद्राविषयक विज्ञान पर विशिष्ट ग्रन्थों की रचना की थी। इनकी सर्वप्रथम रचना 'युगप्रधान चतुष्पदिका' है जो सं. १३४७ में वाचनाचार्य राजशेखर के समीप कन्नाणा में कलिकाल केवली श्रीजिनचन्द्रसूरि के समय में रची गई थी। इसके पश्चात् वे दिल्ली में सुलतान अलाउद्दीन के मंत्रिमंडल में खजाने-रत्नागार टंकशाल आदि में काम करते रहे। सं. १३७२ विजयादशमी के दिन इन्होंने वास्तुसार की रचना कन्नाणापुरमें की और इसी वर्ष दिल्ली में स्वपुत्र हेमपाल के लिए शाही खजाने के रत्नों के विशाल अनुभव से रत्नपरीक्षा रचना हुई। ठक्कुर फेरू ने सं. १३७५ में अपने भाई और पुत्र के लिए टंकशाल के विशिष्ट अनुभव से द्रव्यपरीक्षा नामक मुद्रा विषयक अनुपम ग्रन्थ की रचना की और सं. १३८ में दिल्ली से श्रीमाल सेठ रयपति

द्वारा दादासाहब श्रीजिनकुशलसूरिजी के नेतृत्व में निकले हुए महातीर्थ शत्रुञ्जय के संघ में सम्मिलित हुए थे। ठक्कुर फेरू की प्राकृत रत्नपरीक्षा को हम अनुवाद सहित इस ग्रन्थ में दे रहे हैं। प० भगवानदासजी प्रकाशित वास्तुसार प्रकरण में रत्नपरीक्षा की गाथा २३ से १२७ तक छपी है, जिसके बीच की ६१ से ११६ तक की गाथाए धातोत्पत्ति की हैं, पाठ भेद भी प्रचुर है। इसके अनुसार रत्नपरीक्षा ग्रन्थ १२७ गाथाओं का होता है पर इसकी बीच की बहुत सी गाथाए छूट गई हैं और १३२ गाथाए होती हैं। पाठान्तरों को यथास्थान गाथांक सहित कोष्टक में दे दिया गया है।

इसके पश्चात खरतर गच्छीय सागरचन्द्रसूरि शाखा के दर्शनलाभ गणि शिष्य मुनि तत्त्वकुमार कृत रत्नपरीक्षा (स० १८४५ रचित) फिर अचल गच्छीय अमरसागरसूरि शिष्य वाचक रत्नशेखर कृत रत्नपरीक्षा भी दी गई है। परिशिष्ट में नवरत्न परीक्षा, मोहरा परीक्षा (राजस्थानी गद्य में) देकर कृत्रिम रत्नों और नवरत्नरस का नोट दिया गया है। हमारी प्रार्थना पर सुप्रसिद्ध विद्वान डा० मोतीचन्दजी ने कृपा करके ठक्कुर फेरू की रत्नपरीक्षा का परिचय बड़े ही परिश्रम पूर्वक और विस्तार से लिख भेजा था जिसे हमने रत्नपरीक्षादि सप्त-ग्रन्थ संग्रह में प्रकाशित करवा दिया था पर हिन्दी पाठकों को विशेष लाभ मिले इस दृष्टिकोण से हम उसे इस ग्रन्थ में भी दे रहे हैं। हीरे की उत्पति स्थानों में बुद्धभट्ट, मानसोल्लास, रत्नसंग्रह, और ठक्कुर फेरू की रत्नपरीक्षा में जिस मातंग स्थान का उल्लेख है, इसका ठीक पता नहीं चलता पर वेलारी जिले के हम्पी स्थान में रत्नकूट में से संलग्न मातंग पर्वत की ओर संकेत हो तो

आश्चर्य नहीं। क्योंकि जनश्रुतियां हमें ऐसा अनुमान करने को प्रेरित करती हैं।

जयपुर निवासी जौहरी श्री राजरूपजी टांक ने रत्नपरीक्षा विषयक इस ग्रंथ को प्रकाशित करने की इच्छा व्यक्त की। आप जवाहिरात के अच्छे अनुभवी और सुयोग्य ज्ञाता हैं। आपने "रत्नप्रकाश" नामक एक महत्वपूर्ण ग्रंथ हिन्दी भाषा में प्रकाशित कर जौहरी भाइयों का बड़ा उपकार करने के साथ साथ हिन्दी साहित्य की एक महत्वपूर्ण कमी की पूर्ति की है। इस ग्रंथ के प्रकाशन के लिये भी आप अनेकशः साधुवादार्ह हैं। पद्मभूषण पं सूर्यनारायणजी व्यास का रत्नों की वैज्ञानिक उपादेयता और परिचय" तथा राधाकृष्णजी नेवटिया का चिकित्सा में रत्नों का उपयोग नामक लेख भी साभार प्रकाशित किया जा रहा है। इस सामग्री से ग्रंथ की उपयोगिता में अवश्य ही अभिवृद्धि हुई है। डा वासुदेवशरण अग्रवाल, डा मोतीचन्द्र और पं भगवानदास जैन आदि ने भी ग्रंथ के विषय में सत्परामर्शादि द्वारा जो आत्मीयता दिखाई है अविस्मरणीय है।

अगरचन्द नाहटा
भँवरलाल नाहटा

की तालिका में (कामसूत्र १ । ३ । १६) रूप्य रत्न-परीक्षा और मणिरागाकर ज्ञान विशेष कलाएं मानी गई हैं। जयमंगला टीका के अनुसार रूप्य-रत्न परीक्षा के अन्तर्गत सिक्कों तथा रत्न हीरा मोती इत्यादि के गुण दोषों की पहचान व्यापार के लिये होती थी। मणिरागाकर ज्ञान की कला में गहनों के जड़ने के लिये स्फटिक रंगने और रत्नों के आकारों का ज्ञान आ जाता था। दिव्यावदान (पृ ३) में भी इस बात का उल्लेख है कि व्यापारी को आठ परीक्षाओं में जिन में रत्नपरीक्षा भी एक है निष्णात होना आवश्यक था। पर इस रत्नपरीक्षा ने किस युग में एक शास्त्र का रूप ग्रहण किया इसका ठीक-ठीक पता नहीं चलता। कौटिल्य के कोष-प्रवेश्य रत्नपरीक्षा प्रकरण से तो ऐसा मालूम पड़ता है कि मौर्य युग में भी किसी न किसी रूप में रत्नपरीक्षा शास्त्र का वैज्ञानिक रूप स्थिर हो चुका था। रोम और भारत के बीच में ईसा की आरम्भिक सदियों में जो व्यापार चलता था उसमें रत्नों का भी एक विशेष स्थान था। इसलिये यह अनुमान करना शायद गलत न होगा कि भारतीय व्यापारियों को रत्नों का अच्छा ज्ञान रहा होगा और किसी न किसी रूप में रत्नपरीक्षा शास्त्र की स्थापना हो चुकी होगी। जो भी हो इसमें जरा भी संदेह नहीं कि ईसा की पांचवीं सदी के पहले रत्नपरीक्षा का सृजन हो चुका था।

यह समझ लेना भूल होगा कि रत्न-परीक्षा शास्त्र केवल जौहरियों की शिक्षा के लिये ही बना था। इसमें शक नहीं कि जैसा दिव्यावदान में कहा गया है व्यापारियों के पुत्र पूर्ण और सुप्रिय (दिव्यावदान पृ २६ २६) को और और विद्याओं के साथ साथ रत्नपरीक्षा भी पढ़ना पड़ा था। इससे इस बात का पता है कि प्राचीन भारत में राजा और रईस रत्नों के पारखी होते थे।

यह आवश्यक भी था क्योंकि व्यापारियों के सिवा ये ही रत्न खरीदते थे और संग्रह करते थे। यह जैसा कि हमें साहित्य से पता चलता है, काव्यकारों को भी इस रत्नशास्त्र का ज्ञान होता था और वे बहुधा रत्नों का उपयोग रूपकों और उपमाओं में करते थे, गो कि रत्न सम्बन्धी उनके अलंकार कभी कभी अतिरंजित होकर वास्तविकता से बहुत दूर जा पहुँचते थे। जैसा कि हमें मृच्छकटिक के चौथे अंक से पता चलता है, कि जब विदूषक वसंतसेना के महल में घुसा तो उसने छठे परकोटे के आँगन के दालानों में कारीगरों को आपस में वैडूर्य, मोती, मूँगा, पुखराज, नीलम, कर्कोतन, मानिक और पन्ने के सम्बन्ध में बातचीत करते देखा। मानिक सोने से जड़े (बध्यन्ते) जा रहे थे, सोने के गहने गढ़े जा रहे थे, शंख काटे जा रहे थे और काटने के लिये मूँगे सान पर चढ़ाये जा रहे थे। उपर्युक्त विवरण से इस बात का पता चल जाता है कि शूद्रक को रत्नपरीक्षा का अच्छा ज्ञान रहा होगा। कलाविलास के आठवें सर्ग में सोनारों के वर्णन से भी इस बात का पता चलता है कि क्षेमेन्द्र को उनकी कला और रत्नशास्त्र का अच्छा परिचय था।

रत्नपरीक्षा शास्त्र का जितना ही मान था, उतना ही वह शास्त्र कठिन माना जाता था। इसीलिये एक कुशल रत्नपरीक्षक का समाज में काफी आदर होता था। रत्नपरीक्षा के ग्रन्थ उसका नाम बड़े आदर से लेते हैं। अगस्तिमत[१] (६७–६८) के अनुसार गुणवान मण्डलिक जिस देश में होता है, वह धन्य

---

१ – देखिये, लेलेपिदर आदिया, श्रीलुई फिनो, पारी १८९६। मैंने इस भूमिका को लिखने में श्री फीनो के ग्रन्थ से सहायता ली है जिस का मैं आभार मानता हूँ। श्री फीनो ने अपने इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ में उपलब्ध रत्न शास्त्रों को एक जगह इकट्ठा कर दिया है।

आश्चर्य नहीं। क्योंकि अनुश्रुतियाँ हमें ऐसा अनुमान करने को प्रेरित करती हैं।

जयपुर निवासी जौहरी श्री राजरूपजी टांक ने रत्नपरीक्षा विषयक इस ग्रंथ को प्रकाशित करने की इच्छा व्यक्त की। आप जवाहिरात के अच्छे अनुभवी और सुयोग्य ज्ञाता हैं। आपने "रत्नप्रकाश" नामक एक महत्वपूर्ण ग्रंथ हिन्दी भाषा में प्रकाशित कर जौहरी भाइयों का बड़ा उपकार करने के साथ साथ हिन्दी साहित्य की एक महत्वपूर्ण कमी की पूर्ति की है। इस ग्रंथ के प्रकाशन के लिये भी आप अनेकशः साधुवादार्ह हैं। पद्मभूषण पं. सूर्यनारायणजी व्यास का रत्नों की वैज्ञानिक उपादेयता और परिचय" तथा राधाकृष्णजी नेवटिया का चिकित्सा में रत्नों का उपयोग नामक लेख भी साभार प्रकाशित किया जा रहा है। इस सामग्री से ग्रंथ की उपयोगिता में अवश्य ही अभिवृद्धि हुई है। डा. वासुदेवशरण अग्रवाल, डा. मोतीचन्द्र और पं. भगवानदास जैन आदि ने भी ग्रंथ के विषय में वक्तव्यादि द्वारा जो आत्मीयता दिखाई है अविस्मरणीय है।

अगरचंद नाहटा,
भँवरलाल नाहटा

ठक्कुर फेरूकृत रत्नपरीक्षाका परिचय

— —·—

लेखक—डॉ. मोतीचन्द्र, एम. ए. पीएच्. डी.

(क्युरेटर, प्रिन्स ऑफ वेल्स मुजिअम, बम्बई)

***

अमरकोश (२।१।३—४) में पृथ्वी के अडतीस नामों में वसुधा, वसुमती और रत्नगर्भा नाम आये हैं जिनमे इस देश के रत्नो के व्यापार की ओर ध्यान जाता है। प्लिनी ने (नेचुरल हिस्ट्री ३७। ७६) भी भारत के इस व्यापार की ओर इशारा किया है। इसमें जरा भी सदेह नहीं कि १८ वी सदी पर्यंत जब तक कि, ब्राजिल की रत्नो की खानें नही खुलीं थीं, भारत ससार भर के रत्नो का एक प्रधान बाजार था। रत्नो की खरीद बिक्री के बहुत दिनो के अनुभव से भारतीय जौहरियों ने रत्नपरीक्षा शास्त्र का सृजन किया। जिसमें रत्नों के खरीद, बेच, नाम, जाति, आकार, घनत्व, रग, गुण, दोष, कीमत तथा उत्पत्तिस्थानों का सागोपाग विवेचन किया गया। बाद में जब नकली रत्न बनने लगे तब उन्हे असली रत्नों से विलग करने के तरीके भी बतलाये गये। अत में रत्नो और नक्षत्रो के सम्बन्ध और उनके शुभ और अशुभ प्रभावों की ओर भी पाठकों का ध्यान दिलाया गया।

रत्नपरीक्षा का शायद सबसे पहला उल्लेख कौटिल्य के अर्थशास्त्र (२। १०। २३) में हुआ है। इस प्रकरण में अनेक तरह के रत्न, उनके प्राप्तिस्थान तथा गुण और दोष की विवेचना है। कामसूत्र की चौंसठ कलाओं

की तालिका में (कामसूत्र १ । ३ । १६) रूप्य-रत्न-परीक्षा और मणिरागाकर ज्ञान विशेष कलाएँ मानी गई है। जयमंगला टीका के अनुसार रूप्य-रत्न परीक्षा के अन्तर्गत सिक्कों तथा रत्न हीरा मोती इत्यादि के गुण दोषों की पहचान व्यापार के लिये होती थी। मणिरागाकर ज्ञान की कला में गहनों के गढ़ने के लिये स्फटिक रंगने और रत्नों के आकारों का ज्ञान आ जाता था। दिव्यावदान (पृ ३) में भी इस बात का उल्लेख है कि व्यापारी को आठ परीक्षाओं में जिन में रत्नपरीक्षा भी एक है निष्णात होना आवश्यक था। पर इस रत्नपरीक्षा ने किस युग में एक शास्त्र का रूप ग्रहण किया इसका ठीक-ठीक पता नहीं चलता। कौटिल्य के कोष-प्रवेश्य रत्नपरीक्षा प्रकरण से तो ऐसा मालूम पड़ता है कि मौर्य युग में भी किसी न किसी रूप में रत्नपरीक्षा शास्त्र का वैज्ञानिक रूप स्थिर हो चुका था। रोम और भारत के बीच में ईसा की आरम्भिक सदियों में जो व्यापार चलता था उसमें रत्नों का भी एक विशेष स्थान था। इसलिये यह अनुमान करना शायद गलत न होगा कि भारतीय व्यापारियों को रत्नों का अच्छा ज्ञान रहा होगा और किसी न किसी रूप में रत्नपरीक्षा शास्त्र की स्थापना हो चुकी होगी। जो भी हो इसमें जरा भी संदेह नहीं कि ईसा की पाँचवीं सदी के पहले रत्नपरीक्षा का सृजन हो चुका था।

यह समझ लेना भूल होगा कि रत्न-परीक्षा शास्त्र केवल जौहरियों की शिक्षा के लिये ही बना था। इसमें शक नहीं कि जैसा दिव्यावदान में कहा गया है व्यापारियों के पुत्र पूर्ण और सुप्रिय (*दिव्यावदान पृ २१ २६*) को और और विद्याओं के साथ साथ रत्नपरीक्षा भी पढ़ना पड़ा था। हमें इस बात का पता है कि प्राचीन भारत में राजा और रसिक रत्नों के पारखी होते थे।

यह आवश्यक भी था क्योंकि व्यापारियों के सिवा ये ही रत्न खरीदते थे और संग्रह करते थे। यह जैसा कि हमें साहित्य से पता चलता है, काव्यकारों को भी इस रत्नशास्त्र का ज्ञान होता था और वे बहुधा रत्नों का उपयोग रूपकों और उपमाओं में करते थे, गो कि रत्न सम्बन्धी उनके अलंकार कभी कभी अतिरंजित होकर वास्तविकता से बहुत दूर जा पहुचते थे। जैसा कि हमें मृच्छकटिक के चौथे अंक से पता चलता है, कि जब विदूषक वसंतसेना के महल में घुसा तो उसने छठे परकोटे के आंगन के दालानों में कारीगरों को आपस में वैडूर्य, मोती, मूंगा, पुखराज, नीलम, कर्केतन, मानिक और पन्ने के सम्बन्ध में बातचीत करते देखा। मानिक सोने में जड़े (बध्यन्ते) जा रहे थे, सोने के गहने गढ़े जा रहे थे, शंख काटे जा रहे थे और काटने के लिये मूंगे सान पर चढ़ाये जा रहे थे। उपर्युक्त विवरण से इस बात का पता चल जाता है कि शूद्रक को रत्नपरीक्षा का अच्छा ज्ञान रहा होगा। कलाविलास के आठवें सर्ग में सोनारों के वर्णन में भी इस बात का पता चलता है कि क्षेमेन्द्र को उनकी कला और रत्नशास्त्र का अच्छा परिचय था।

रत्नपरीक्षा शास्त्र का जितना ही मान था, उतना ही वह शास्त्र कठिन माना जाता था। इसीलिये एक कुशल रत्नपरीक्षक का समाज में काफी आदर होता था। रत्नपरीक्षा के ग्रन्थ उसका नाम बड़े आदर से लेते हैं। अगस्तिमत[१] (६७-६८) के अनुसार गुणवान मण्डलिक जिस देश में होता है, वह धन्य

---

१ — देखिये, लेलेपिदर आंदिया, श्रीलुई फिनो, पारी १८९६। मैंने इस भूमिका को लिखने में श्री फीनो के ग्रन्थ से सहायता ली है जिस का मैं आभार मानता हूं। श्री फीनो ने अपने इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ में उपलब्ध रत्न शास्त्रों को एक जगह इकट्ठा कर दिया है।

है। ग्राहक को उसे बुलाकर आसन दे देकर तथा गंध माल्यादि से सत्कार करना चाहिये। बुद्धभट्ट (१४–१५) के अनुसार रत्नपरीक्षकों को शास्त्रज्ञ एवं कुशल होना चाहिये। इसीलिये उन्हें रत्नों के मूल्य और मात्रा के जानकार कहा गया है। देश काल के अनुसार मूल्य न आंकने वाले तथा शास्त्र से अनभिज्ञ जौहरियों की विद्वान कदर नहीं करते। ठक्कुर फेरु (१ ६—१ ७) का भाव भी कुछ ऐसा ही है। उसके अनुसार मण्डलिक को शास्त्रज्ञ आंखवाला अनुभवी देश काल और भाव का ज्ञाता और रत्नों के स्वरूप का जानकार होना आवश्यक था। हीनांग कोप आदि सत्यरहित और बदनाम व्यक्ति जानकार और मान्य होने पर भी असली जौहरी कभी नहीं हो सकता। अगस्तिमत (६६) ने भी यही भाव प्रकट किये हैं।

अगस्तिमत (२४—६६) के अनुसार चतुर जौहरी को मंडलिन् कहा गया है। यह नाम शायद इसलिए पड़ा कि जौहरी अपना काम करते समय मंडल में बैठता था। यह भी संभव है कि यहां मंडल से मंडली यानी समूह का मतलब हो। अगस्ति मत (६१—६६) के अनुसार जौहरी रत्नों का मूल्य आंकता था। उसे देश में मिलनेवाले आठ खानों तथा विदेशी और द्वीपों से आए हुए रत्नों का ज्ञान होता था। उसे रत्नों की जाति राग रंग पति दोष गुण आकार, दीप भाव (छाया) और मूल्य का पता होता था। । वह आकर (पूर्वी मध्यमाध्व) पूर्वदेश कश्मीर, मध्यदेश सिंहल तथा सिंध नदी की घाटी में रत्न खरीदता था तथा रत्न बेचने और खरीदने वाले के बीच मध्यस्थ का काम करता था। अगस्ति मत (७२ के अनुसार वह रत्न विक्रेता से हाथ मिलाकर अंगुलियों के इशारे से उसे रत्न के मूल्य का पता दे देता था। उसी के एक क्षेपक (११ २१) के अनुसार १ २ ३ ४ संख्याओं का क्रमशः तर्जनी से दूसरी अंगुलियों को पकड़ने से

बोध होता था। अगूठे सहित चारों अगुलिया पकडने से ५ की संख्या प्रकट होती थी। कनिष्ठा आदि के तलस्पर्श से क्रमश ६, ७, ८ और ९ की सख्याओ का बोध होता था, तथा तर्जनी से १० का। फिर नखो के छूने से क्रमश ११, १२, १३, १४ और १५ का बोध होता था। इसके बाद हथेली छूने पर कनिष्ठादि से १६ से १९ तक की सख्याओ का बोध होता था। तर्जनी आदि का दो, तीन, चार और पाच बार छूने से २० से ५० तक की सख्याओ का बोध होता था। कनिष्ठा आदि के तलो को को ९ बार तक छूने से ६० से ९० तक अको की ओर इशारा हो जाता था, तथा आधी तर्जनी पकडने से १००, आधी मध्यमा पकडने से १०००, आधी अनामिका पकडने से अयुत, आधी कनिष्ठिका से १०००००, अगूठे से प्रयुत, कलाई से करोड। मुगलकाल में तथा अब भी अगुलियो की साकेतिक भाषा से जौहरी अपना व्यापार चलाते है।

प्राचीन साहित्य में भी बहुधा जौहरियो के सम्बन्ध में उल्लेख मिलते है। दिव्यावदान (पृ० ३) में कहा गया है कि किसी रत्न की कीमत आकने के लिए जौहरी बुलाये जाते थे। अगर वे रत्न की ठीक ठीक कीमत नही आक सकते थे तो उसका मूल्य वे एक करोड कह देते थे। बृहत्कथाश्लोकसग्रह (१८, ३६६) से पता चलता है कि सानुदास ने पाड्य मथुरा में पहुच कर वहा का जौहरी बाजार देखा और वहा एक क्रेता और विक्रेता को, एक जौहरी, से, एक रत्नालकार का मूल्य आकने को कहते सुना। सानुदास को उस गहने की ओर ताकते हुए देखकर उन्होंने समझा कि शायद यह निगाहदार था। उससे पूछने पर उसने गहने की कीमत एक करोड बता कर कह दिया कि बेचने और खरीदनेवाले की मर्जी से सौदा पट सकता था। वे दोनों एक दूसरे जौहरी के पास पहुचे जिसने कहा कि गहने की कीमत सारा ससार था पर नासमझ के लिए उसका

मोल एक दाम था। सानुदास की जानकारी से प्रसन्न होकर राजा ने उसे अपना रत्नपरीक्षक नियुक्त कर दिया।

प्राचीन साहित्य में अनेक ऐसे उल्लेख आए हैं जिनसे पता चलता है कि रत्नों के व्यापार के लिए भारतीय जौहरी देश और विदेश की बराबर यात्रा करते थे। दिव्यावदान (पृ २२९—३१) की एक कहानी में बतलाया गया है कि रत्नों के व्यापारी मोती वैदूर्य शंख मूगा चांदी सोना अकीक, जमुनिया और दक्षिणावर्त शंख के व्यापारी के लिए समुद्र यात्रा करते थे। नियमिक यात्रा उन्हें सिंहलद्वीप में बसने वाले राक्षसी रत्नों से होशियार कर देता था तथा उन्हें आदेश दे देता था कि वे खूब समझ कर माल खरीदें। ज्ञाताधर्म कथा (१७) और उत्तराध्ययन सूत्र की टीका (११७३) से भी रत्नों के इस व्यापार की ओर संकेत मिलता है। उत्तराध्ययन टीका में एक ईरानी व्यापारी की कहानी दी गई है जो ईरान से इस देश में सोना चांदी रत्न और मूगा छिपा कर लाना चाहता था। आवश्यक चूर्णि (पृ ११२) में रत्नव्यापार के लिए एक बनिए का पारसकल जाने का उल्लेख है। महाभारत (२।२८।२६—२९) के अनुसार दक्षिण समुद्र से इस देश में रत्न और मूगे आते थे। ईसा की प्रारंभिक सदियों में तो भारत से रोम को हीरे, सार्ड कोहिनूर अकीक सार्डोनिक्स वाबागोरी, क्राइसाप्रेस ब्लडस्टोन, एकमणि हैलियोट्राप ब्लोसिरस कसौटी पत्थर बदर पुलियाँ एकचुरैल जमुनिया स्फटिक बिल्लौर, कोरंड नीलम मानिक लालबाबकर्द गार्नेट, पुरानी मोती इत्यादि पहुंचते थे (मोतीचन्द्र, सार्थवाह, पृ १२८ १२९)

—२—

प्राचीन रत्नपरीक्षा का क्या रूप रहा होगा यह तो ठीक-ठीक नहीं कहा जा

सकता, पर उस सम्बन्ध के जो ग्रंथ मिले हैं उनका विवरण नीचे दिया जाता है।

१—अर्थशास्त्र—कौटिल्य ने कोश-प्रवेश्य रत्नपरीक्षा (अर्थशास्त्र, २-१०-२९) मे रत्नपरीक्षा के सम्बन्ध की कुछ जानकारियां दी हैं। कोश में अधिकारी व्यक्तियो के सलाह से ही रत्न खरीदे जाते थे। पहले प्रकरण में मोती के उत्पत्ति स्थान, गुण, दोष तथा आकार इत्यादि का वर्णन है। इसके बाद मणि, सौगंधिक, वैडूर्य, पुष्पराग, इन्द्रनील, नंदक, स्रवन्मध्य, सूर्यकान्त, विमलक, सस्यक, अंजनमूल, पित्तक, सुलभक, लोहितक, अमृतांशुक, ज्योतिरसक, मैलेयक, अहिच्छत्रक, कूर्प, पूतिकूर्प, सुगन्धिकूर्प, क्षीरपक, शुक्तिचूर्णक, सिलाप्रवालक, चूलक शुक्रपुलक तथा हीरा और मूंगा के नाम आए हैं। इनमें से बहुत से रत्नों की ठीक-ठीक पहचान भी नहीं हो सकती क्यो कि बाद के रत्नशास्त्र उनका उल्लेख तक नही करते।

२—रत्नपरीक्षा— बुद्धभट्ट की की रत्नपरीक्षा का समय निश्चित करने के पहले वराहमिहिर की बृहत्संहिता के ८० से ८३ अध्यायों की जानकारी जरूरी है। इन अध्यायों में हीरा, मोती और मानिक के वर्णन हैं। पन्ने का वर्णन तो केवल एक श्लोक में है। बुद्धभट्ट की रत्नपरीक्षा और बृहत्संहिता के रत्नप्रकरण की छानबीन करके श्री फिनों (वही पृ० ७ से) इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि दोनो की रत्नों की तालिकाओ तथा हीरे और मोती का भाव लगाने की विधि इत्यादि में बडी समानता है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि दोनों ग्रंथों ने समान रूप मे किसी प्राचीन रत्नशास्त्र से अपना मसाला लिया। गरुडपुराण ने भी बुद्धभट्ट का नाम हटाकर ६८ से ७० अध्यायो में रत्नपरीक्षा ग्रहण कर लिया। बहुत संभव है कि शायद बुद्धभट्ट का समय ७—८ वीं सदी या इसके पहले भी हो सकता है।

३—अगस्तिमत—अगस्तिमत और रत्नपरीक्षा का विषय एक होते हुए भी दोनों में इतना भेद है कि दोनों एक ही अनुभूति की बहुत दिनोंसे अलग हुई धारा जान पड़ते हैं। श्री फिनो (पृ ११) के अनुसार अगस्तिमत का समय बुद्धभट्ट के बाद यानी छठी सदी के बाद माना जाना चाहिए। शायद उसका लेखक दक्षिण का रहनेवाला जान पड़ता है। संभव है कि अगस्तिमत का आधार कोई ऐसा रत्नशास्त्र रहा हो जिसकी ख्याति दक्षिण में बहुत दिनों तक थी। ग्रन्थ के अनेक उद्धरणों से ऐसा पता चलता है कि रत्नशास्त्र के प्राचीन सिद्धान्तों को निबाहते हुए भी ग्रन्थकार ने अपने अनुभवों का सहारा लिया है। अभाग्य वश ग्रन्थकार के व्याकरण और शैली में निष्णात न होने से उनके भाव समझने में बड़ी कठिनाई पड़ती है।

४—नवरत्नपरीक्षा—नवरत्नपरीक्षा के दो संस्करण मिलते हैं। छोटे संस्करण में सोम भूभुज् का नाम तीन जगह मिलता है जिसके आधार पर यह माना जा सकता है कि इसके रचयिता कल्याणी का पश्चिमी चालुक्य राजा सोमेश्वर (११२८ ११३८ ई) था। इस कथन की सचाई इस बात से भी सिद्ध होती है कि मानसोल्लास के कोशाध्यायमें (मानसोल्लास भा १ पृ ६४ से) जो रत्नों का वर्णन है वह सिवाय कुछ छोटे मोटे पाठभेदों के नवरत्न जैसा ही है। नवरत्नपरीक्षा का दूसरा संस्करण बीकानेर और तंजोरकी हस्तलिखित प्रतियों में मिलता है। इसमें धातुपथ मुद्राप्रकार और कृत्रिम रत्नप्रकार प्रकरण अधिक हैं। संभव है कि स्मृतिसारोद्धार के लेखक नारायण पंडित ने इन प्रकरणों को अपनी ओर से जोड़ दिया हो।

५—अगस्तीय रत्नपरीक्षा—अगस्तीय रत्नपरीक्षा वास्तव में अगस्ति

मत का सार है। पर विस्तार में कहीं-कहीं नई बातें आ गई हैं। अभाग्यवश इसका पाठ बहुत भ्रष्ट और अशुद्ध है।

उपर्युक्त ग्रंथो के सिवाय रत्नसग्रह, अथवा रत्नसमुच्चय, अथवा समस्तरत्नपरीक्ष २२ श्लोकों का एक छोटासा ग्रंथ है। लघुरत्नपरीक्षा में भी २० श्लोक हैं जिनमें रत्नों के गुण दोषों का विवरण है। मणिमाहात्म्य में शिव पार्वती सवाद के रूप में कुछ उपरत्नों की महिमा गाई गई है।

६–फेरू रचित रत्नपरीक्षा—ठक्कुर फेरू रचित रत्नपरीक्षा का कई कारणों से विशेष महत्त्व है। पहली बात तो यह है कि यहर त्नपरीक्षा प्राकृत में है। ठक्कुर फेरू के पहले भी शायद प्राकृत में रत्नपरीक्षा पर कोई ग्रंथ रहा हो, पर उसका अभी तक पता नहीं। दूसरी बात यह है कि ग्रंथकार श्रीमाल जाति में उत्पन्न ठक्कुर चद के पुत्र ठक्कुर फेरू का सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी (१२९६—१३१६) के खजाने और टक्साल से निकटतर सम्बन्ध था। उसका स्वय कहना है कि उसने बृहस्पति, अगस्त्य और बुद्धभट्ट की रत्नपरीक्षाओ का अध्ययन करके और एक जौहरी की निगाह से अलाउद्दीन के खजाने में रत्नो को देख कर, अपने ग्रंथ की रचना की (३—५), उसके इस कथन से यह बात साफ मालूम पड जाती है कि कम से कम ईसा की १३ वी सदी के अत में बुद्धभट्ट की रत्नपरीक्षा, वराहमिहिर के रत्नो पर के अध्याय और अगस्तिमत, रत्नशास्त्र पर अधिकारी ग्रंथ माने जाते थे और उनका उपयोग उस युग के जौहरी बराबर करते रहते थे। जैसा हम आगे चल कर देखेंगे, ठक्कुर फेरू ने रत्नपरीक्षा की प्राचीन परम्परा की रक्षा करते हुए भी तत्कालीन मूल्य, नाप, तोल तथा रत्नो के अनेक नए स्रोतों का उल्लेख किया है जिनका पता हमें फारसी इतिहासकारो से भी नहीं चलता।

— १ —

प्राचीन रत्नशास्त्रों में खानोंसे निकले रत्नों के सिवाय मोती और मूंगा भी शामिल हैं जो वास्तव में पत्थर नहीं कहे जा सकते। साधारणतः जवाहरात के लिए रत्न और मणि और कभी-कभी उपल शब्द का व्यवहार किया गया है। संस्कृत साहित्य में रत्न शब्द का व्यवहार कीमती वस्तु और कीमती जवाहरात के लिए हुआ है। वराहमिहिर (बृ सं ८ ।२) के अनुसार रत्न शब्द का व्यवहार हाथी घोड़ा स्त्री इत्यादि के लिए पुष्कल है रत्नपरीक्षा में इसका व्यवहार केवल कंकणादि रत्नों के लिए हुआ है। मणि शब्द का व्यवहार कीमती रत्नों के लिए हुआ है पर बहुधा यह शब्द मनिया गुरिया अथवा मनके लिए भी आया है।

वेदों में रत्न शब्द का प्रयोग कीमती वस्तु और खजानों के अर्थ में हुआ है। ऋग्वेद में तीन जगह (हिन्दी पृ० १२) सप्त रत्नों का उल्लेख है। मणि का अर्थ ऋग्वेद में तावीज की तरह पहननेवाले रत्नों से है (ऋग्वेद १।३। ७ अ वे १।२९२ २।४।१ इत्यादि) मणि तागे में पिरोकर गले में पहनी जाती थी। (वाजसनेयी सं १ । ० तैत्तिरीयसं ६।४।१।१) इसमें भी संदेह नहीं कि वैदिक आर्यों को मोती का भी ज्ञान था। मोती (कृशन) का उपयोग शृङ्गार के लिये होता था [ऋग्वेद २।३५।४ १।३५।१ अथर्ववेद ४।१ ।१ ३]

सुव्यवस्थित रत्नशास्त्रों के अनुसार नव रत्नों में पांच महारत्न और चार उपरत्न हैं। वज्र मुक्ता माणिक्य नीलम और मरकत महारत्न हैं। गोमेद पुष्पराग वैडूर्य (लहसुनिया) और प्रवाल उपरत्न हैं। माणिक और नीलम के कई भेद गिनाये गये हैं। वराहमिहिर (८२।१) तथा बुद्धभट्ट (११४)

के अनुसार मानिक के चार भेद यथा—पद्मराग, सौगंधि, कुरुविंद और स्फटिक हैं। अगस्तिमत (१७३) क अनुसार मानिक के तीन भेद हैं, यथा–पद्मराग, सौगंधिक, कुरुविंद। नवरत्नपरीक्षा (१०६–११०) में इनके सिवाय नीलगंधि भी आ गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा में (४६ से) मानिक का एक नाम मांसपिंड भी है। ठक्कुर फेरू के अनुसार (५६) मानिक के साधारण नाम माणिक्य और चुन्नी है, अब भी मानिक के ये ही दो नाम सर्वसाधारण में प्रचलित हैं। मानिक के निम्नलिखित भेद गिनाए गए हैं–पद्मराय (पद्मराग), सौगंधिय (सौगंधिक), नीलगंध, कुरुविन्द और जामुणिय।

रत्नपरीक्षाओं में नीलम के तीन भेद गिनाये गये हैं–नील साधारण नीलम के लिये व्यवहृत हुआ है तथा इन्द्रनील और महानील उसकी कीमती किस्में थीं। ठक्कुर फेरू ने (८१) नीलम की केवल एक किस्म महिंदनील (महेन्द्रनील) बतलाया है।

प्राचीन रत्नपरीक्षाओं में पन्ने के मरकत और तार्क्ष्य नाम आये हैं। पर ठक्कुर फेरू [७२] ने पन्ने के निम्नलिखित भेद दिये हैं—गारुडोदार, कीडउठी बासउती, मूगउनी, और धूलिमराई।

उपर्युक्त नव रत्नों की तालिका प्राय सब रत्नशास्त्रों में आती है पर अगस्तिमत [३२५–२६] में स्फटिक और प्रभ जोडकर उनकी सख्या ग्यारह कर दी गयी है। बुद्धभट्ट ने उस तालिका में पाच निम्नलिखित रत्न जोड दिये हैं— यथा शेष [ओनेक्स] कर्केतन [थ्राइ सोव न्याल] भीष्म, पुल्क [गार्नेट] रुधिराक्ष [कर्निलियल] शेष का ही अरबी जज्ञ रूपान्तर है। यह पत्थर भारत और यमन से आता था। इसके बहुत से रग होते है जिनमें सफेद और काला प्रधान है। भारत में इस पत्थर का पहनना अशुभ माना जाता था। भीष्म

कोई सफेद रंग का पत्थर होता था। बुद्धभट्ट (२१२-७९) के अनुसार कर्क एक सिकाइट किए हुए मारकत का पत्थर होता था जो युक्तिकल्पतरु के अनुसार स्फटिक का एक भेद मात्र था। सोमलक नीलमामल सफेद पत्थर था और पुष्प कर्केतन के किस्म का पीला पत्थर था।

वराहमिहिर की रत्नों की तालिका में बाईस नाम गिनाये गए हैं पर एक ही रत्न की अनेक किस्में देखते हुए उनकी संख्या कम कर दी जा सकती है। जैसे शशिकान्त स्फटिक का ही एक भेद है महानील और इन्द्रनील नीलम हैं तथा सौगन्धिक और पद्मराग माणिक के ही भेद हैं। इस तरह रत्नों की संख्या घट कर उन्नीस हो जाती है यथा स्फटिक के सहित वज्र रत्न कर्केतन पुलक रुधिराक्ष तथा विमलक राजमणि शंख ब्रह्ममणि ज्योतिरस और सस्यक। ज्योतिरस और सस्यक का उल्लेख अर्थशास्त्र (२ । ११ । २९) में भी हुआ है। शंख से शायद यहाँ दक्षिणावर्त शंख का अनुमान किया जा सकता है। ज्योतिरस शायद जेस्पर या हेलियोट्रोप था।

उपर्युक्त रत्नों के सिवाय पिरोजा (पेरोज पीरोज) लाजवर्द और लहसुन यानी लहसुनिया या वैदूर्य के नाम भी आये हैं। रत्नसंग्रह (१९) में मसार गर्भ [सं-मुसारगर्भ मुसल्गर्भ मुसारकल्प पालि-मसारगल्ल, मुसारगल्ल] को दूध पानी अलग करनेवाला श्यामरंग का चमकीला तथा दुष्ट दोषों का अपहर्ता कहा गया है। रत्न-कल्पद्रुम ने इसे इन्द्रनीलमणि कहा है जो ठीक नहीं। महाभारत [२ । ४७ । १४] में मगधराज द्वारा युधिष्ठिर को अश्मसार का बना पात्र देने का उल्लेख है जिसकी पहचान शायद मसारगर्भ से की जा सकती है। मसारगर्भ की पहचान चीनी मन नै-पू यानी अमुलियों से की जाती है पर अश्मसार पन्ना भी हो सकता है। क्योंकि आसाम का पड़ोसी बर्मा पन्ना के लिये प्रसिद्ध है।

ठक्कुर फेरुकृत रत्नपरीक्षा [१४-१५] में नवरत्न यथा पद्मराग, मुक्ता, विद्रुम, मरकत, पुखराज, हीरा, इन्द्रनील, गोमेद और वैडूर्य गिनाये हैं। इनके सिवाय ल्हसणिया [६२-६३] फलह [स्फटिक, ६५-६६] कर्केतन [६८] भीसम [भीष्म, ६६] नाम आये हैं। ठक्कुर फेरू ने लाल, अकीक और फिरोजा को पारसी रत्न वतलाया है [१७३], इस तरह ठक्कुर फेरू के अनुसार रत्नों की सख्या सोलह वैठती है।

पर वर्णरत्नाकर के रचयिता ज्योतिरीश्वर ठक्कुर [आरम्भिक १४ वी सदी के समय में लगता है कि १८ रत्न और ३२ उपरत्न माने जाते थे [वर्णरत्नाकर, पृ० २१, ४१, श्री सुनीतिकुमार चटर्जी द्वारा सम्पादित, कलकत्ता १९४०]। रत्नों की तालिका में गोमेद, गरुडोद्गार, मरकत, मुकुता, मासखण्ड, पद्मराग, हीरा, रेणुज, मारासेस, सौगविक चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त, प्रवाल, राजावर्त, कषाय और इन्द्रनील के नाम आये हैं। इस तालिका में रत्नपरीक्षा के महारत्नों में गोमेद, मरकत, मुक्ता, हीरा, पद्मराग, इन्द्रनील, प्रवाल और सूर्यकान्त हैं। मासखण्ड, सौगधिक, [शायद चुन्नी], तो पद्मराग या मानिक के ही भेद हैं। इसी तरह चन्द्रकान्त सूर्यकान्त और कषाय स्फटिक के भेद हैं। मारासेस जिसका सम्बन्ध शेप [ओनेक्स] से हो सकता है, तथा लाजवर्द की गणना रत्नो में किस प्रकार की गयी यह कहना सम्भव नही।

उपमणियो की तालिका वर्णरत्नाकर में दो जगह आई है [पृ० २१, ४१] इनमें [१] कूर्म, [२] महाकूर्म, [३] अहिछत्र, [४] श्यावर्ग(सं) घ, [५] व्योमराग, [६] कीटपक्ष, [७] कुरू [कूर्म] विंद, [८] सूर्यभा (ना) ल, [९] हरि (री) तसार, [१०] जीविउ (जीवित), [११] यवयाति (यवजाति), [१२] शिखि (खी) निल, [१३] वशपत्र, [१४]

षू (षू) हिमरक्त [१५] मस्सार [१६] अंशुकान्त [१७] स्फटिक [१८] कर्केतर [१९] पारिपात्र [२] नन्दक [२१] शंख (गु) नक [२२] लोहितक [२३] सौगन्धिक [२४] शुक्तिचूर्ण [२५] पुलक [२६] पुल्य (त्य) क [२७] शुभ्रनील [२८] पुष्प (ब) वक्ष [२९] पीतराग, [३] कर्पूरक (सर) [३१] कर्पूरक [३२] काच।

उपमणियों की उपर्युक्त तालिका में कुछ मणियों पर ध्यान दिलाना आवश्यक है। इसमें मूर्ध और महाकूर्म तो मणियों की श्रेणी में नहीं आते। कपूर की उपमणियों का व्यापार बहुत पुराना है और इसका उल्लेख पेरिप्लस में अनेक बार हुआ है (शाफ, पेरिप्लस आफ दि एरीथ्रियन सी पृ १५ इत्यादि) आदित्यक का उल्लेख हमारा ध्यान कौटिल्य (२।११।२९) के आदित्यवर्ण रत्न की ओर ले जाता है। हिमरक्त से यहाँ शायद पन्ने के लाल से मतलब है और इस तरह यह उन्मुर केक की हिमरतें भी शायद वह हो। मस्सार से यहाँ शायद सीप्य से मतलब है। अंशुकान्त से शायद वसुनियां का मतलब है। अंजन, पुलक नन्दक और शुक्तिचूर्णक के नाम भी अर्थशास्त्र में आए हैं। कर्केतर से यहाँ कर्केतन का तथा लोहितक से लोहिताक्ष का मतलब है। पुल्यक से हमारा ध्यान कौटिल्य के पुल्योहृत चांदी की ओर खींच जाता है (१२।१४।३२)। काच से काच मणि की ओर इशारा है।

सन् १४२१ में लिखित पृथ्वीचन्द्र चरित (प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह पृ ९५ बड़ोदा १९२) में रत्नों और उपरत्नों की निम्नलिखित तालिका दी गयी है—पद्मराग पुष्पराग (पुखराज) माणिक्य लीलकिया मरकतोद्गार, मणि, मरकत कर्केतन वज्र वैडूर्य चन्द्रकान्त सूर्यकान्त जलकान्त शिवकान्त चन्द्रप्रभ तारकप्रभ ममभाव अशोक वीतशोक अपराजित गंगोदक महाप्रभाव

सगर्भ, पुलिक, सौगंधिक, सुभग, सौभाग्यकर, विषहर, धृतिकर, पुष्टिकर, शत्रुहर, अंजन ज्योतिरस, शुभरुचि, शूलमणि, अंशुकालि, देवानन्द, रिष्टरत्न, कीटपख, कसाउला, धूमराइ, गोमूत्र, गोमेद, लसणीया, नीला, तृणधर, खगराइ, वज्रधार, पट-कोण, कणी, चापडी, पिरोजा, प्रवाला, मौक्तिक ।

उपर्युक्त तालिका के अध्ययन से इस बात का पता चलता है कि ग्रन्थ-कार ने उसमें रत्नो और उपरत्नो के सिवाय उनके भेद, गुण, दोष इत्यादि की भी गिनती कर ली है। जैसे पद्मराग, माणिक, सीघलिया और सौगंधिक मानिक के भेद हैं। मरकत के भेद में ही गरुडोद्गार, मणि, मरकत, धूमराइ और कीटपख आ जाते हैं। स्फटिक के भेदो में चन्द्रकान्त, जलकान्त, शिवकान्त, चन्द्रप्रभ, भाकरप्रभ, प्रभानाथ, गंगोदक, हंसगर्भ, कसाउला (काषाय) आजाते हैं। पुखराज, कर्क्केतन, वज्र, वैडूर्य, अशोक, वीतशोक पुलक, अंजन, ज्यो-तिरस, अंशुकालि, मसारगल्ल, रिष्टरत्न, गोमूत्र, गोमेद, लहसनिया, नीला, पिरोजा, मोती, मूंगा अलग अलग रत्न या उपरत्न है। अपराजित, सुभग, सौभाग्यकर, विपहर, धृतिकर, पुष्टिकर, शत्रुहर, देवानन्द, तृणधर, रत्नों के गुण से सम्बन्ध रखते हैं। वज्रधार, षट्कोण, कणी और चापडी रत्नो की बनावट से सम्बन्धित हैं।

यहा बौद्ध और जैन शास्त्रों में आई रत्नो की तालिकाओ की ओर भी ध्यान दिला देना आवश्यक मालूम होता है। चुल्लवग्ग[1] (९ । १ । ३) में मुत्ता, मणि, वेलूरिय, शख, शिला, पवाल, रजत, जातरूप, लोहितक और मसार-गल्ल के नाम आए है। मिलिन्द प्रश्न (पृ० ११८) में इंदनील, महानील, जोतिरस, वेलुरिय, उम्मापुप्फ, सिरीस, पुप्फ, मनोहर, सूरियकन्त, चन्दकन्त, वज्र, कज्जोपमक, फुस्सराग, लोहितक और मसारगल्ल के नाम आये हैं। सुखावती

व्यूह (६६) में वैडूर्य स्फटिक सुवर्ण रूप अश्मगर्भ लोहितिका और मुसार गल्ल नाम आये हैं। दिव्यावदान में रत्नों की दो तालिकाएं हैं। एक में (पृ ६१) मुक्ता वैडूर्य शंख, शिला प्रवाल्ड रजत जातरूप अश्मगर्भ मुसारगल्व लोहितिका और दक्षिणावर्त के नाम हैं और दूसरी में (पृ ६७) पुष्पराग पद्मराग वज्र वैडूर्य मुसारगल्व लोहितिका, दक्षिणावर्त शंख शिला और प्रवाल के नाम हैं। जैन प्रज्ञापना सूत्र (भगवानदास हर्षचन्द्र द्वारा अनूदित १ पृ ७७ ७८) में वइर वज्र (अक्षण) पवाल गोमेज्ज रुयक अंक फलिह, लोहियक्ख मरकत मसारगल्ल भुयमोयग इन्दनील हंसगब्भ पुलक सौगंधिक चन्द्रप्रभ वैडूर्य जलकान्त और सूर्यकान्त के नाम आये हैं। फलिह से की तालिका में मिलाये शायद स्फटिक से मतलब है। मिलिंद प्रश्न की तालिका में कर्कपुष्प से शायद लसुनिया का किरीटपुष्पक से (अ धा २।११।२९) शायद किसी तरह के वैडूर्य का बोध होता है। कामोपमक से शायद चिन्तामणि रत्न की ओर इशारा है जो सब काम पूरा करता था। वराहमिहिर का (बृ सं ८ । ६) ब्रह्ममणि भी शायद चिन्तामणि ही हो। सुखावती व्यूह के अश्मगर्भ से शायद पन्ने का मतलब हो (अमरकोष २।९। ९२)। प्रज्ञापना सूत्र में भुयमोचक से शायद कहर मुहरे का और हंसगर्भ से किसी तरह के स्फटिक का बोध होता है।

अर्थशास्त्र (२।११।२९) में जैसा हम पहले देख आये हैं अनेक रत्नों के उल्लेख हैं। इन में मोती हीरा पद्मराग वडूर्य पुष्पराग गोमेदक नीलम चन्द्रकान्त और सूर्यकान्त इत्यादि रत्नों की श्रेणी में आ जाते हैं। कौट मौलेयक और पारसमुद्रक से मणियों की उत्पत्ति स्थान का बोध होता है। कूट पर्वत तो का पता नहीं पर मौलेयक रत्न का नाम शायद बलूचिस्तान में मूलाकाव

में बहनेवाली मूलानदी से पडा हो (मोतीचन्द्र जे० यू० पी० एच० एस० १७ भा० १, पृ० ६३)

लगना है कि प्राचीन साहित्य में रत्नो की तालिका देने की कुछ रीति सी चल गयी थी। तामिल के सुप्रसिद्ध काव्य शिलप्पदिकारम् में भी एक जगह रत्नों का उल्लेख आया है (शिलप्पदिकारम् १४।१८०-२०० श्री दीक्षितार द्वारा अग्रेजी अनुवाद मद्रास १९३९) मथुरे में घूमता घामता कोवलून जौहरी बाजार में पहुचा। वहा उसने चार वर्ण के निर्दोष हीरे, मरकत, पद्मराग, माणिक्य, नीलबिंदु, स्फटिक, पुष्पराग, गोमदक और मोती देखे।

— ३ —

प्राय रत्नशास्त्रों में (अगस्तिमत ४, ६३ बुद्धभट्ट ११ का पाठ भेद) रत्नों की परख आठ तरह से, यथा—(१) उत्पत्ति (२) आकर (३) वर्ण अथवाछाया (४) जाति (५) गुण—दोष (६) फल (७) मूल्य और (८) विजाति (नकल) के आधार पर की गयी है। इस का विस्तार नीचे दिया जाता है।

(१) **उत्पत्ति**—यहा उत्पत्ति से रत्नों की वास्तविक अथवा पारलौकिक उत्पत्ति से तात्पर्य है। रत्नों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्राय सब शास्त्रों का मत है कि वे एक वज्राहत असुर से पैदा हुए। बुद्धभट्ट (२, १२) के अनुसार एक पराक्रमी त्रिलोक विजेता दानवराज बलि था। एक समय उसने इन्द्र को जीत लिया। खुली लडाई में उससे पार न पा सकने के कारण देवताओ ने उससे यज्ञ में बलि-पशु बनने का वर माँगा। उसके एवमस्तु कहने पर सौत्रामणि यज्ञ में देवताओं ने उसे स्तम्भ से बाँध दिया। उसकी विशुद्ध जाति और कर्म से उसके शरीर के सारे अवयव रत्नो में परिणित हो गए। ऐसा होने पर देव और

नागों में अब विष रत्नों के लिए छीनाझपटी होने लगी। इस छीनाझपटी में समुद्र, नदी पर्वत वन इत्यादि में रत्न गिरकर आकर रूप में परिवर्तित हो गये। इन रत्नों से राक्षस विष सर्प और व्याधियों से तथा पाप कर्म में जन्म तथा दुर्भिक्ष से रक्षा होती है। अगस्तिमत (१—१) में भी कहानी का यही रूप है। केवल फरक इतना है कि यहां में असुर के सिर पर इन्द्र ने वज्र मारा और कटा हुआ सिर से ही रत्नों की सृष्टि हुई। उसके सिर से ब्राह्मण भुजाओं से क्षत्रिय, नाभि से वैश्य और पैरों से शूद्र रत्नों की उत्पत्ति हुई। नवरत्न परीक्षा (८ से) में दैत्य का नाम बल दिया गया है। बलासुर को हराने के लिए इन्द्र ने उससे उसके शरीरदान का वर माँगा। ब्राह्मण वेषधारी इन्द्र की प्रार्थना स्वीकार कर लेने पर यह जानकर कि उसका शरीर अभेद्य है इन्द्र ने उसके मस्तक पर वज्र से प्रहार किया। उसके शरीर से तरह तरह के रत्न निकले। देव, नाग सिद्ध यक्ष राक्षस और किन्नरों ने तो बहु रत्न तत्काल ग्रहण कर लिया बाकी रत्न पृथ्वी पर फैल गए।

ठक्कुर फेरु (९ १६) की रत्नोत्पत्ति सबंधी अनुश्रुति का रूप भी बुद्धभट्ट वाली अनुश्रुति जैसा ही है। एक दिन असुर बलि इन्द्रलोक को जीतने गया वहां देवताओं ने उससे यज्ञ-पशु बनने की प्रार्थना की जिसे उसने स्वीकार कर लिया। उसकी हड्डियों से हीरे, दांतों से मोती—लहू से माणिक पित्त से पन्ना, आँखों से नीलम हृदय से वैदूर्य मज्जा से कर्केतन, नखों से लहसुनिया मेद से स्फटिक मांस से मूंगा चमड़ेसे पुखराज तथा वीर्य से भीष्म पैदा हुए। असुर बल के शरीर से निकले रत्नों में से सूर्य ने पद्मराग, चन्द्र ने मोती मंगल ने मूंगा बुध ने पन्ना बृहस्पति ने पुखराज, शुक्र ने हीरा शनि ने नीलम राहु ने गोमेद और केतु ने वैदूर्य ग्रहण कर लिए और इसीलिए इन रत्नों को

धारण करने वाले उपर्युक्त ग्रहों से पीडा नहीं पाते। चोखे रत्न ऋद्धिदायक और सदोष रत्न दरिद्रता देने वाले होते हैं।

पर रत्नों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में उपर्युक्त मत ही प्रचलित नहीं था, इसका निराकरण वराहमिहिर (८०—३) ने कर दिया है। उनके अनुसार एक मत से रत्न दैत्य बल से उत्पन्न हुए, दूसरों का कहना है कि दधीचि से। कुछ इस मत के हैं कि उनकी उत्पत्ति पत्थरों के स्वभाववैचित्र्य से है। ठक्कुर फेरू (१२) के अनुसार भी कुछ लोग ऐसे थे जिनका मत था कि रत्न पृथ्वी के विकार हैं। जैसे सोना, चाँदी, ताबा आदि धातु हैं वैसे ही रत्न भी।

एक दूसरे विश्वास के अनुसार मनुष्य, सर्प तथा मेंढक के सर में मणि होती थी। (अगस्तिमत, ६३—६७) वराहमिहिर, (८५—५) के अनुसार सर्पमणि गहरे नीले रग की और बडी चमकदार होती थी।

(२)आकर—रत्नों की खान को आकर कहा गया है। वराहमिहिर (८०—१७) के अनुसार नदी, खान और छिटफुट मिलने की जगह आकर हैं। बुद्धभट्ट (१०) ने आकरों में समुद्र, नदी, पर्वत और जगल गिनाए हैं।

(३)वर्ण,छाया—प्राचीन ग्रन्थों में रत्नों के रग को छाया कहा गया है। पर बाद के शास्त्रों में वर्ण के लिए छाया शब्द का व्यवहार हुआ है। बहुधा शास्त्रकार रत्नों की छाया की उपमा जानी पहचानी वस्तुओं से देते हैं।

(४)जाति—रत्नशास्त्रों में इस शब्द का तीन अर्थों में प्रयोग हुआ है। यथा असली रत्न, रत्न की किस्म और जाति। अन्तिम विश्वास के अनुसार रत्नों में भी जातिभेद होता था। यह विश्वास शायद पहिले पहल हीरे तक ही सीमित था। इसके अनुसार ब्राह्मण को सफेद हीरा, क्षत्रिय को लाल, वैश्य को पीला

और शूद्रों को भी काला हीरा पहनने का विधान था । बाद में यह विश्वास और रत्नों के सम्बन्ध में भी प्रचलित हो गया × ।

(५) गुण, दोष—रत्नों के सम्बन्ध में इन शब्दों का प्रयोग उनकी सुन्दरता और चमत्कार लेकर हुआ है । पहले अर्थ में वे रत्न के गुण और दोष परक हैं । दूसरे अर्थ में वे रत्न के बुरे और भले प्रभाव के द्योतक हैं ।

रत्नों के गुण निम्नलिखित हैं—महत्ता (भारीपन) गुरुत्व गौरव (वजन) काठिन्य, स्निग्धता राग रंग भाव (अर्चिष द्युति कांति प्रभाव) और स्वच्छता ।

(६) फल—सभी रत्नों के फल की विवेचना की गयी है । अच्छे रत्न स्वास्थ्य दीर्घजीवन धन और गौरव देने वाले सर्प, जंगली जानवर, पानी आग, बिजली चोट बिमारी इत्यादि से मुक्ति देने वाले तथा मैत्री कायम रखने वाले माने गए हैं । उसी तरह खराब रत्न दुख देने वाले माने गए हैं ।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि रत्नों के बिमारी अच्छा करने के गुणों का रत्न शास्त्रों में उल्लेख नहीं है । रत्नों के फलों की जाँच पड़ताल से यह भी पता चलता है कि उनके लिखने में दिमागी कसरत को अधिक प्रश्रय दिया गया है । पर इसमें संदेह नहीं कि शास्त्रकारों ने रत्न-फल के सम्बन्ध में लोकविश्वासों की भी चर्चा कर दी है । हीरे का गर्भनाशक फल और पन्ने का सर्पविष हरण इसी कोटि के विश्वास हैं ।

× यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि दिव्य शरीर का रत्नों में परिणत होजाने का विश्वास वैदिक है (जे आर ए एस १८६४ पृ ५५८–५६)। ईरानियों का भी कुछ ऐसा ही विश्वास था (जे आर ए एस १८६५ पृ २ २–२ ३)।

(७)रत्नों के मूल्य-उनके तौल और प्रमाण पर आश्रित होते थे। प्राचीन ग्रंथों में रत्नो का मूल्य रूपको और कार्पापणो में निर्धारित किया गया है। यह पता नही चलता कि रत्नो का मूल्य सोना अथवा चादी के सिक्को में निर्धारित होता था, पर कार्षापण के उल्लेख से इनका दाम चादी के सिक्को ही में मालूम पडता है। अगस्तिमत के एक क्षेपक(१२) से पता चलता है कि गोमेद और मूगे का दाम चादी के सिक्को में होता था, तथा वैडूर्य और मानिक का सोने के सिक्को में। ठक्कुरफेरु (१३७) ने वडे हीरे, मोती, मानिक और पन्ने का मूल्य स्वर्णटकोमें वतलाया है।आधे मासे से चार मासे तक के लाल, लहसुनिया, इन्द्रनील और फिरोज़ा के दाम भी स्वर्णमुद्राओं में होते थे (१२१--२३)। एक टांक में १० से १०० तक चढ़नेवाले मोतियों का दाम रूप्य टकों में होता था (१२४-१२६)। उसी तरह एक रती में १ से दो थान चढने वाले हीरे का मूल्य भी चादी के टकों में कहा गया है (१२७-२८)। गोमेद, स्फटिक, भीष्म, कर्केतन, पुखराज, वैडूर्य-इन सव के मूल्य भी द्रम्म में होते थे (१३०)।

मानसोल्लास (१,४५७-४६४) में रत्न तोलने की तुला का सुन्दर वर्णन है। उसके तुलापात्र कासे के बने होते थे। उनमें चार छेद होते थे। जिनमें डोरिया पिरोई जाती थीं। कासे की दाडी १२ अगुल की होती थी। जिसके दोनो वगल मुद्रिकायें होती थी। दाडी के ठीक वीचोंवीच पॉच अगुल का काटा होता था। जिसका एक अगुल छेद में फसा दिया जाता था। काटे के दोनों ओर तोरण की आकृति वनाई जाती थी। जिसके सिर पर कुण्डली होती थी। उसी में डोरी लगती थी। तराजू साधने के लिए एक कलज तौल का माल एक पलडे में और पानी दूसरे पलडे में भरा जाता था। जव काटा तोरण के ठीक वीचमें वैठ जाता था तो तराजू सध गई मानी जाती थी।

(८) विजाति—इससे अंक से कृत्रिम रत्नों को अर्थात् नकली रत्नों की तरह दिखने वाले पत्थरों से अभिप्राय है। ऐसे नकली रत्न भारत और सिंहल में बहुतायत से बनते थे। नवरत्न परीक्षा (१७४-१८१) के अनुसार इस भांति कांच और सिन्दूर को सफेद सेंहुड़ा गाय के दूध में सान कर फिर उसे गूण से बांध और बांस में भर कर मिट्टी के बरतन में बीजों के साथ पका कर फिर उसे निकाल कर धीमी आंच पर रख देते थे फिर उसे तेल में बोरते थे। इससे बांस के भीतर नकली मूंगा बन जाता था। इन्द्रनील बनाने के लिए एक कुप्पे में एक भाग नील का चूर्ण और दो भाग लाल का चूर्ण मिलाकर खूब हिलाते थे। फिर पूर्वोक्त विधि से नकली इन्द्रनील बना लेते थे। नकली मरकत बनाने के लिए मंजीठ, ईंगुर और नील समभाग में लेकर उसे शीशे की कुप्पी में खूब मिलाते थे। फिर उनके रवे अलग करके उन्हें आग में पकाया जाता था। माणिक्य सीसे के चूर्ण और ईंगुर के मेल से उपर्युक्त विधि से बनता था।

इस प्रकरण में रत्न-परीक्षाओं के आधार पर उनमें आए रत्नों के उपर्युक्त आठ विशेषताओं की जांच पड़ताल करके यह बतलाने का प्रयत्न किया गया है कि ठक्कुर फेरू ने अपनी रत्नपरीक्षा में कहां तक प्राचीनता का उपयोग किया है और कहां उसने रत्न सम्बन्धी अपने अनुभवों का।

हीरा—हीरा रत्नों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इसकी विशेषता यह है कि यह सब रत्नों को काट सकता है। उसे कोई रत्न नहीं काट सकता। प्रायः सब शास्त्रों के अनुसार हीरे की उत्पत्ति असुरबल की हड्डियों से हुई। इसका नाम वज्र इसलिए पड़ा कि इन्द्र से वज्राहत होने पर ही यह निकला।

प्रधान रत्नशास्त्र हीरेकी खानें आठ या दस मानते हैं। पर कौटिल्य (अनुवाद, पृ० ७८) में हीरे की खानों के कुछ दूसरे ही नाम हैं। यथा सभाराष्ट्रक (विदर्भ या वरार) में मध्यम राष्ट्रक (कोसल यानी दक्षिण कोसलमें) काश्मक (शायद अश्मक) [हैदराबाद की गोलकुण्डा की खान] इन्द्रवानक (कलिंग, ओडीसा) की तो पहचान टीकाकारों ने की है। काश्मक की पहचान टीकाकारने बनारसी हीरे से की है। जिससे बनारस के हीरे तराशों का अड्डा होंने की ओर संकेत हो सकता है। श्रीकटनक हीरा वेदोत्कट पर्वत में मिलता था। श्रीकटनक का ठीक पता नहीं चलता पर शायद इससे, धनकटक (धरणीकोट) जो प्राचीन अमरावती का नाम था, बोध होता है। अगर यह पहचान ठीक है तो यहा कृष्णा नदी की घाटी में मिलने वाले हीरों की ओर संकेत हो सकता है। मणिमतक हीरा मणिमत् अथवा मणिमन्त पर्वत के पास पायाजाता था। इस मणिमत् पर्वत की पहचान श्रीपार्जिटर ने (मारकण्डेय पुराण, पृ०३७०) में कश्मीर के दक्षिण की पहाडियों से की है। यहा अब हीरा मिलने का पता नहीं चलता। रत्नशास्त्रों में दी गई हीरे की खानों का पता निम्नलिखित तालिका से चल जायेगा।

बुद्धभट्ट	वराहमिहिर	अगस्तिमत	मानसोल्लास	अगस्तीय	रत्नसंग्रह	ठक्कुर फेरू रत्नपरीक्षा
सुराष्ट्र						हेमन्त
हिमालय						हिमवन्तः
मातग		बग	मातग	मगध	मानग	
पौड्र						पडुर (पौड्र)
कोसल						
वैण्यातट वेणातट		वेणु	वैरागर	+	आरव	वेणु
सूर्पार			सोपार	+	–	सौपारक

यहाँ यह निश्चित कर देना कठिन है कि उपर्युक्त ग्रन्थ में कितने भौगोलिक नाम वास्तविकता लिए हुए हैं और कितने काल्पनिक हैं। पर इसमें संदेह नहीं की ग्रंथ में खानों और बाजारों के नाम मिल गये हैं। यह भी सम्भव है कि बहुत सी प्राचीन खानें समाप्त हो गयी हों और उनकी खुदाई बहुत प्राचीन काल में बन्द कर दी गयी हो। सुराष्ट्र यानी आधुनिक सौराष्ट्र में हीरे की किसी खान का पता नहीं चलता पर यह संभव है कि यहाँ से रत्न बाहर भेजे जाते हों। यहाँ एक उल्लेखनीय बात यह है कि प्राचीन साहित्य में जैसे महानिद्देस और वसुदेवहिण्डी में सुराष्ट्र एक बन्दर का नाम भी आता है जो शायद सोमनाथ पट्टन हो। यही बात सूर्पारक यानी बम्बई के पास सोपारा बन्दरगाह के बारे में भी कही जा सकती है। मार्कपुर की जातकमाला में तो इस बन्दर में रत्नों के लाए जाने का उल्लेख भी है। हिमालय में हीरे का होना तो उस अनुश्रुति का द्योतक है जिसके अनुसार मेरु हिमालय और समुद्र रत्नों के आकर माने गए हैं। यह बात ठीक है कि शिमला के पास कुछ हीरे मिले थ पर हिमालय में हीरे की खान होने का पता नहीं चलता। मातंग से यहाँ किस प्रदेश से तात्पर्य है इसका भी ठीक पता नहीं चलता। मी फिनो(पृ २६) बालस्वराज मंगलीय के एक लेख के आधार पर मातंगों का निवास स्थान गोलकुण्डा का प्रदेश स्थिर करते हैं। हरिषेण(बृहत्कथा कोश ७१।१ १)के अनुसार मातंग पश्चिम देश तथा उसके उत्तर में पर्वत की संधि पर रहते थे। शायद यहाँ सिक्किम जिलेके चीसरे पर्वत श्रेणी से मतलब है पर यहाँ हीरे का पता नहीं चला है। पौण्ड्र देश से मालदह, कोसी के पूर्व पूर्णिया जिले का कुछ भाग तथा दीनाजपुर और राजशाही जिले के कुछ भाग का बोध होता है। तथा पौण्ड्रवर्धन से बोगरा जिले के महास्थान से मतलब है। शायद कलिंग के हीरे से मतलब बेनारी कर्नूल कृष्णा गोदावरी इत्यादि के तथा

सम्भलपुर के पास ब्राह्मणी, सक तथा दक्षिणी कोयल नदियो से मिलने वाले हीरे से है। जहागीर युग की खोखरा की हीरे की खान भी इस बात की पुष्टि करती है। जहागीर ने स्वय अपने राज्य के दसवें वर्ष के विवरण (तुजुक, अग्रेजी अनुवाद, भा० १, ३१६) में इस बात का उल्लेख किया है कि बिहार के सूबेदार इब्राहीमखा ने खोखरा को फतह करके वहा के हीरे की खान पर कब्जा कर लिया। हीरे वहा की एक नदी से निकलते थे। इसमें सदेह नही कि कोसल से यहा दक्षिण कोशल से मतलब है। जिसकी पहचान आधुनिक महाकोसल से है। शायद वैरागर और वेणातट या वेणु के हीरे कोसल ही के अन्तर्गत आ जाते हैं। वेणा नदी जो आजकल की वेन गगा है चादा जिले से होकर बहती है और उसी पर स्थित वैरागढ में हीरे मिलते हैं। मानसोल्लास के वैरागर(स० वज्राकर) की पहचान इसी वैरागढ से ठीक उतर जाती है। शायद यही स्थान चीनी यात्रियों का कोस्सल और टाल्मी का कौसल रहा हो। अगस्तीय रत्नपरीक्षा में आये मगध से भी शायद छोटा नागपुर की खानों का बोध होता है।

रत्न शास्त्रों में हीरे के अनेक रग बताये गये हैं। इनके अनुसार सुराष्ट्र का हीरा लाल, हिमालय का तमेला, मातग का पीला, पुड़ का भूरा, कलिंग का सुनहरा, कोसल का सिरीस के फूल के रग वाला, वेणा का चन्द्र की तरह सफेद, तथा सुपारा का सफेद होता था। ठक्कुर फेरू (२२) ने हीरे का रग तमेला सफेद, नीला, मटमेला, हरताल की तरह पीला, तथा सिरीस के फूल जैसा बतलाया है। ये रग खान-परक थे। हीरे के वर्णों की ओर भी ध्यान आकृष्ट किया गया है। सफेद हीरा ब्राह्मण, लाल क्षत्रिय, पीला वैश्य और काला शूद्र पहनने का अधिकारी था। पर राजा को चारो वर्ण के हीरे पहनने का अधिकार था। पर बाद के लेखकों ने सफेद, लाल, पीले और काले हीरे को ही क्रमश ब्राह्मण, क्षत्रिय,

वैश्य और शूद्र जाति में बांट दिया है। ठक्कुर फेरु (२६) भी इसी मत के हैं। उनकी राय में सफेद चोखा हीरा ब्राह्मणी अर्थात ब्राह्मणों का कहलाता था।

जिनके घरों में निर्दोष हीरे होते हैं उनको विष, अकाल मृत्यु और सर्पभय से सुरक्षा होती है। लाल और पीले हीरे पहनने से राजा को विजयश्री हाथ लगती थी। पुष्प चमकाते हीरे में मूल प्रत पुष्प भरित, एकपगुप इत्यादि देख मानते थे (१)।

हीरे का प्रारंभिक रूप षट्कोणा होता था और हीरे के इसी आकार को रत्नशास्त्रों में सब से अच्छा माना है। प्राचीन रत्नशास्त्रों के अनुसार अच्छे हीरे में छः या अष्ट कोण बारह धाराएं आठ पार्श्व या अंश कहे गए हैं। हीरे की चोटी को कोटि तल को विभाजित करने वाली रेखा को अग्र चोटी की उठान को उत्तुंग तथा नुकीली विभाजक रेखाओं को तीक्ष्ण कहते थे। तौल में कम स्वच्छ, शुद्ध और निर्मल और भास्वर-ये हीरे के गुण माने गए हैं। ठक्कुर फेरु (२४) ने हीरे के आठ गुण कहे हैं-सम फलक उच्च कोटी तीक्ष्ण धारा पानी (कांतिक) अमल उज्ज्वल अदोष और अल्पतोल।

रत्नशास्त्रों में हीरे के अनेक दोष भी परिलक्षित हैं। जिनमें टूटी चोटी या खुरदुरा, एक की जगह दो कोण का होना मलयुक्तता रङ्गहीनता फटापन संगोलत्व भारीपन बुलबुलापन और कांतिहीनता मुख्य हैं। ठक्कुर फेरु २५) ने भी दोष यथा—काकपद, बिंदु (छींटा) रेखा मैलापन विकृत, एक शृंग का अर्धचन्द्र बोखा आकार, तथा हीन अथवा अधिक कोण बतलाया है। उसके अनुसार (११ १२) अत्यन्त चोखी तीखी धारा पुत्रार्थी स्त्रियों के लिए हानिकर थी। पर इसके विपरीत चिपटा मलिन और त्रिकोना हीरा स्त्रियों

को इसलिए मुनकर होता था कि पुत्ररत्नों की जननी होने से वे अपने को प्रथम रत्न मानती थीं, भला फिर उनका सदोष रत्न क्या कर सकता था।

हीरे का मूल्य प्राचीन रत्नशास्त्रों में तौल के आधार पर निश्चित किया जाता था। इस सम्बन्ध में दो मत थे एक बुद्धभट्ट और वराहमिहिर का और दूसरा अगस्तिमत का। पहिली व्यवस्था में तौल तड्डुल और सर्षप (१ तड्डुल=८ सर्षप) में थी तथा मूल्य रूपकों में। हीरे की सबसे अधिक तौल बीस तड्डुल और दाम दो लाख रूपक निश्चित की गई थी। तौल के इस क्रम में हर घटाव या चढाव दो इकाइयों के बराबर होता था। २० तड्डुल हीरे का दाम दो लाख था और एक तड्डुल के हीरे का दाम एक हजार। देखने में तो यह हिसाब सीधा साधा मालूम पडता है, पर श्री फिनो ने हिसाब लगाकर बतलाया है कि २० तड्डुल यानी चार केरट के हीरे का दाम इस रीति से बहुत अधिक बैठ जाता है।

अगस्तिमत के अनुसार तौल्य और स्थौल्य के आधार पर पिंड से हीरे का दाम निश्चित किया जाता था। पिंड का माप १ यव स्थौल्य और १ तड्डुल तौल्य मान लिया गया है। इस तरह एक पिंड के हीरे का दाम ५०, दो का ५० गुणा ४, चार का ५०गुणा १२, पाँच का ५० गुणा १६ ' 'इस तरह बढते बढते २० पिंड का दाम ३८०० तक पहुच जाता है। पर इस मूल्याकन में एक ही घनत्व के हीरे आते हैं, उनके हलके होने पर उनका दाम बढ जाता था तथा भारी होने पर घट जाता था। इस तरह एक हीरा एक पिंड के घनत्व का होते हुए भी १।४ हलके होने पर उसका दाम १८ गुना होता था, १।२ हलके होने पर ३६ गुना तथा ३।४ हलके होने पर ७२ गुणा हो जाता था। इसी तरह एक हीरा एक पिंड घनत्व का होते हुए भी भारी हो तो उसका दाम १।४ भारी होने पर आधा हो जाएगा इत्यादि। श्री फिनो की राय में अगस्तिमतका ही मूल्याकन वास्तविक मालूम पडता है।

ठक्कुर फेरु ने हीरे का मूल्यांकन अलग न देकर मोती, माणिक और पन्ने के साथ दिया है। पर हीरे का मूल्य निर्धारण करते समय उसे अर्थशास्त्र का ध्यान अवश्य रहा होगा। उसके अनुसार (३३) समपिंड हीरे का भारी होने पर कम दाम और भार तथा हलके होने पर ज्यादा दाम होता था।

अलाउद्दीन के समय जौहरियों की तौल का वर्णन ठक्कुर फेरु ने इस तरह से किया है —

१ राई — १ सरसों
१ सरसों — १ तंदुल
२ तंदुल — १ जौ
१६ तंदुल या १ गुंजा(रत्ती) — १ माशा
४ माशा — १ टांक

टांक के उपर्युक्त तौल में कई बातें उल्लेखनीय हैं। श्री नेल्सन राइट ने (दि कॉयन्स एण्ड मेट्रालोजी आफ दि सुल्तान्स् आफ देहली पृ १११ से) अपनी खोज से यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि सुल्तान युग के टांक में ९६ रत्तियाँ होती थीं। रत्ती का वजन १.८ ग्रेन मान कर उन्होंने टांक की तौल १७२ ग्रेन निर्धारित की है। पर ठक्कुर फेरु के हिसाब से तो २४ रत्ती एक टांक यानी १७२.८ ग्रेन के बराबर हुई यानी एक रत्ती का वजन करीब ६.६६ ग्रेन के करीब हुआ। अब यहाँ प्रश्न उठता है कि गुंजा से यहाँ साधारण गुंजा का ही अर्थ है अथवा यह कोई तौल थी जिसका वजन आधुनिक रत्ती से करीब करीब चौगुना अधिक था।

ठक्कुर फेरु (१११) ने स्वयं इस बात को स्वीकार किया है कि रत्नों का मूल्य बंधा हुआ न होकर अपनी नजर पर अवलम्बित होता है फिर भी

अलाउद्दीन के समय रत्नों के जो दाम थे उनकी तौल के साथ उसने वर्णन किया है और यह भी बतलाया है कि चार रत्न यानी हीरा, मोती, मानिक और पन्ने का दाम सोने के टके में लगाया जाता था। इन रत्नो की बडी से बडी तौल एक टाक और छोटी तौल एक गुंजा मान ली गई है। पर एक टाक में १० से १०० तक चढ़ने वाले मोती तथा एक गुंजा में १ से १२ थान तक चढ़ने वाले हीरे का मूल्य चादी के टाक में होता था। उपर्युक्त रत्नो के तौल और मूल्य दो यन्त्रों में समझाये गए हैं —

कीमती रत्न सम्बन्धी यन्त्र—

गुंजा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१५	१८	२१	२४
हीरा	५	१२	२०	३०	५०	७५	११०	१६०	२४०	३२०	४००	६००	१४००	२५००	५६००	११२००
मोती	०॥	१	२	४	८	१५	२५	४०	६०	८४	११४	१६०	३६०	७००	१२००	२०००
मानिक	२-	५	८	१२	१८	२६	४०	६०	८५	१२०	१६०	२२०	४२०	८००	१४००	२४००
पन्ना	०।	०॥	१	१॥	२	३	४	५	६	८	१०	१३	१८	२७	४०	६०

उपर्युक्त यन्त्र की जाच से कई बातों का पता लगता है। सबसे पहली बात तो यह है कि अलाउद्दीन के काल में और युगो की तरह हीरे की कीमत सब रत्नों से अधिक थी। हीरा जैसे जैसे तौल में बढ़ता जाता था उसी अनु-

इस रत्न का बहुत प्राचीनकाल से पता था। मोती को जिसे वैदिक साहित्य में कृशन कहा गया है, सबसे पहला उल्लेख ऋग्वेद (१।३५।४,१० ।६८।१) में आता है। अथर्ववेद में वायु, आकाश, बिजलो, प्रकाश तथा सुवर्ण, शख और मोती से रक्षा की प्रार्थना की गयी है। शख और मोती राक्षसो, राक्षसियों और बीमारियों मे रक्षा करने वाले माने जाते थे। उनकी उत्पत्ति आकाश, समुद्र, सोना तथा वृत्र से मानी गयी है।

रत्नशास्त्रों के अनुमार मोतो के आठ स्रोत—यथा सीप, शख, वादल, मकर और सर्प का सिर, सूअर की दाढ़, हाथी का कुम्भस्थल तथा वास की पोर माने गये हैं। यह विश्वास भी था कि स्वाती की वूदे सीपियों में पड कर मोती हो जाती थीं। असुरवल के दातो से भी मोती वनने का उल्लेख आता है।

मोती के उत्पत्ति सम्वन्धी उपर्युक्त विश्वासों की जाच पडताल से पता चलता है कि अथर्ववेद वाली अनुश्रुति से उनका खासा सम्वन्ध है। उसके वृत्र-जात मानने से अमुरवल वाली अनुश्रुति की ओर ध्यान जाता है। इस तरह हम देख सकने हैं कि मोती सम्वन्धी प्राचीन विश्वासों की जड वैदिक युग तक पहुच जाती है।

ठक्कुर फेरू ने भी मोती के उत्पत्तिस्थान, रत्नशास्त्रो की ही तरह कहे हैं। उसके अनुसार शखजन्य मोती छोटे, सफेद तथा लाल होते हैं और उनमें मगल का आवास होता है। मच्छ से उत्पन्न मोती काला, गोल तथा हलका होता है और उसके पहनने से शत्रु और भूत प्रेतों से रक्षा होती है। बास में पैदा मोती गुजे के इतने वडे तथा राज देने वाले होते हैं। सूअर की दाढ से पैदा मोती गोल चिकना तथा साखू के फल इतना वडा होता है। उसको पहनने वाला अजेय हो जाता है। साप से निकला मोती नीला तथा इलायची इतना वडा होता है। उसके पहनने से सर्पोपद्रव, विप ,तया विजली स रक्षा होती है।

बादल में पैदा मोती तो देवता लोग पृथ्वी पर आने ही नहीं देते, गिरने के पहिले ही उन्हें रोक लेते हैं। चिन्तामणि मोती वह है जो बरसते पानी की एक बूंद हवा से सूख कर मोती हो जाय। सीप के मोती छोटे और मूल्यवान होते हैं।

रत्नशास्त्रों में मोती के आकरों की संख्या भिन्न भिन्न दी हुई है। एक अनुश्रुति के अनुसार आठ आकर हैं तो दूसरी के अनुसार चार। अर्थशास्त्र (२।११।२१) के अनुसार ताम्रपर्णी से निकलने वाले मोती ताम्रपर्णिक, पांड्यकवाट से पांड्यकवाटक, पाश से पाशिक्य, कूल से कौलेय, चूर्ण से चौर्ण, महेन्द्र से माहेन्द्र, कार्दम से कार्दमिक, स्रोतसि से स्रौतसीय, ह्रद से ह्रादीय और हिमवत् से हैमवतीय।

उपयुक्त तालिका में ताम्रपर्णिक और पांड्यकवाटक तो निश्चय मनार की खाड़ी के मोती के द्योतक हैं। ताम्रपर्ण से यहां ताम्रपर्णी नदी का तात्पर्य माना गया है। पांड्यकवाट मधुरा है जहां मोती का व्यापार खूब चलता था। पाश से शायद फारस का मतलब है। चूर्ण को टीकाकार ने केरल में मुचिरि के पास एक गांव माना है। यह गांव शायद तामिल साहित्य का मुचिरि और पेरिप्लस (शाफ वर्शि, पृ २०४) का मुजिरिस था जिसकी पहचान क्रंगनोर में मुयिरिकोड़ से की जाती है। मुजरिस ईसा की आरम्भिक सदियों में एक बड़ा बंदर था और बहुत सम्भव है कि वहां मोती आने से किसी नदी के नाम के आधार पर मोती का चौर्ण नाम पड़ गया हो। टीका के अनुसार कौलेय मोती का नाम सिंहल की किसी कूल नदी के नाम पर पड़ा पर विचार करने से यह बात ठीक नहीं मालूम पड़ती। कूल से पेरिप्लस (५९) के कोल्चि तथा दिव्यावदान् (पृ २ २) के कोरैके से बोध होता है जो मोतियों के लिये प्रसिद्ध था। पेरिप्लस के समय में यह पांड्य देश का एक प्रसिद्ध बंदरगाह था। पर ताम्रलिप्ती नदी द्वारा बदर

के भर जाने पर बंदरगाह वहाँ से पाँच मील दूर हटकर कायल में पहुँच गया। माहेन्द्रक, कार्दमक, ह्रादीय स्रोतसीय का ठीक पता नहीं चलता। टीकाकार के अनुसार कार्दम ईरान और स्रोतसी वर्वर देश में नदियां और ह्रद वर्वर देश में दह था। इन संकेतों में जो भी तथ्य हो पर यहाँ टीकाकार का फारस की खाडी और वर्वर देश से मोती आने की ओर संकेत अवश्य है।

हिमालय तो सब रत्नों का घर माना ही जाता था। वराहमिहिर ८१।२ के अनुसार सिंहल, परलोक, सुराष्ट्र, ताम्रपर्णी, पार्श्ववास, कौबेरवाट, पाण्ड्यवाट और हिमालय में मोती होते थे।

सिंहल—मनार की खाड़ी मोती के लिये प्रसिद्ध है। यह खाड़ी ६५ से १५० मील चौड़ी हिन्दमहासागर की एक वाहु है। मोती के सीप सिंहल के उत्तर पश्चिमी तट से सट कर तथा तूतीकोरिन के आसपास मिलते हैं। मोतियों के इस स्रोत का उल्लेख प्लिनी (६।५४-८), पेरिप्लस (३५,३६,५६,५६), मार्कोपोलो (दि बुक आफ सेर मार्कोपोलो, भा० २, पृ० २६७, २६८) फ्रायर जार्डेनस (मीराविलिया डिसक्रिप्टा, हक्लूयेत सोसाइटी, १८६३, पृष्ठ ६३) लिनशोटेन (दि वोयज आफ लिनशोटेन, हक्लूयेत सोसाइटी, १८८४, भा० २ पृ० १३३-१३५) इत्यादि करते हैं।

परलोक—इसी को शायद ठक्कुर फेरू ने रामावलोक कहा है। इस प्रदेश का ठीक-ठीक पता नहीं चलता पर यह ध्यान देने योग्य बात है कि मध्यकाल में अरब भौगोलिक पेगू को ब्रह्मादेश कहते हैं। बरमा के समुद्रतट से कुछ दूर मेगुई द्वीप समूह के समुद्र में अब भी मोती

मिलते हैं। रामा से पैम्‌ की परिचाम की जा सकती है। यहाँ सर्वांग लोग मोती निकालते हैं। सुराष्ट्र कच्छ के दक्षिण में नवानगर के समुद्र तट के आगे कोमासार के पास, मंमरा से कच्छ की खाड़ी में पिंडेरा तक भाभार, कोम भर्तुंबार और मीरा के द्वीपों के आसपास भी मोती मिलते हैं (सी एफ कूंज और सी एच स्टिवेन्सन, दि बुक आफ पर्ल पृ ११२, लंदन १९ ८)।

ताम्रपर्णी—जैसा हम ऊपर कह आए हैं यहाँ ताम्रपर्णी से मनार की खाड़ी से मतलब है। ताम्रपर्णी नदी के मुहाने पर पहले कोरकै बन्दरगाह पर बाद में उसके मरजाने से उसके दक्खिन पांच मील पर, कायल बन्दरगाह हो गया।

पांड्यवाट—इससे शायद मदुरै का मतलब है जहाँ मोती का खूब व्यापार चलता था। शिल्पाधिकारम्‌ (पृ २ ७) के अनुसार यहाँ के जौहरी बाजार में कलायुद अंयारम और बविसुलु किस्म के मोती बिकते थे।

कौबेरवाट—इसका ठीक पता तो नहीं चलता पर सम्भव है कि यहाँ चोलों की सुप्रसिद्ध राजधानी कावेरिपट्टीनम्‌ अथवा पुहार से मत लब हो। शिल्पाधिकारम्‌ (पृ ११०-१११) के अनुसार यहाँ मोती-साज रहते थे और वे ऐसे मोती बिकते थे।

पारशववास—इससे फारस की खाड़ी से मतलब है। यहाँ मोती बहुत प्राचीन काल से मिलते हैं। इसका उल्लेख मेगास्थनीज, नेरकस के इसिडोर, निअरकस, तथा टालमी ने किया है। टालमी के अनुसार मोती के सीप टायलोस द्वीप में (आधुनिक बहरैन) मिलते थे। पैरिप्लस

(३५) के अनुसार कलैई (मश्कत के उत्तर पश्चिम दैमानियत द्वीप समूह में कल्हातो) में मोती के सीप मिलते थे। नवीं सदी में मासूदी ने उसका वर्णन किया है। पारी रेनो, 'मेमायर सुर लें द' १८५६। इब्नबतूता (गिब्ब, इब्नबतूता) ने इसका उल्लेख किया है। वार्थेमा ने (दि ट्रावेल्स आफ लोदीविको वार्थिमा, पृ० ९५, लंडन, १८६३) हुर्मुज की यात्रा में फारस की खाड़ी के मोतियों का वर्णन किया है। लिन्शोटन और तावर्नियें ने भी हुरमुज, बसरा और बहरैन के मोती के व्यापार का आखों देखा वर्णन दिया है।

अगस्तिमत (१०६-१११) और मानसोल्लास (१, ४३४) के अनुसार सिंहल, आरवाटी वर्बर और पारसीक से मोती आते थे। सिंहल और फारस का तो हम वर्णन कर चुके हैं। आरवाटी से यहाँ अरब के दक्खिन—पूर्वी तट और वर्बर से लाल सागर से मिलनेवाले मोती के सीपों से तात्पर्य मालूम पड़ता है। अरब में अदन से मश्कत तक के बदरों में मोती के गोताखोर मिलते हैं जो अपना व्यापार सोकोतरा के द्वीपों पूर्वी अफ्रीका और जंजीवार तक चलाते हैं। लाल सागर में अकावा की खाड़ी से वावेल मदेब तक मोती के सीप मिलते हैं (कुज, वही, पृ० १४२)।

ठक्कुर फेरू के अनुसार (४६) मोती रामावलोइ, बब्बर, सिंहल कांतार, पारस, कैसिय और समुद्रतट से आते थे। उपर्युक्त तालिका कुछ अंश में रत्न शास्त्रों की तालिकाओं से भिन्न है। रामावलोइ से जैसा हम पहले कह आए हैं, शायद मेरगुई के द्वीप समूह से अथवा पेंगू से मतलब हो। बब्बर से लाल सागर के अफ्रीकी तटसे मतलब है।

यहाँ बर्बर लोगों से तात्पर्य मिस्र नदी और लाल सागर के बीच रहने वाले दनाकिल तथा सोमाल और यक्की से है। कान्तार से यहाँ रेगिस्तान से अभिप्राय है। महानिद्देस (ला पूसां द्वारा सम्पादित पृ १५४-५५) में मरु कान्तार किसी प्रदेश का नाम है जो शायद बेरेनिके से सिकंदरिया तक के मार्ग का द्योतक था। यह भी संभव है कि ठक्कुर फेरू का मतलब यहां कांतार से अरब के दक्खिन पूर्वी समुद्र तट से हो जहां के मोतियों के बारे में हम ऊपर कह आए हैं। अगर हमारा अनुमान ठीक है तो यहां कांतार से अगस्तिमत के आपान्ती और मायसोलाय के बाजार से मतलब है। केशिब से यहां निश्चय इब्नबतूता (गिब्स इब्नबतूता, पृ १२१, पृ ३५३) के बंदर कैस से मतलब है जिसे उसने भूल से सीराफ के साथ में मिला दिया है। (वास्तव में यह बंदर सीराफ से ७ मील दक्खिन में है। सीराफ (आधुनिक ताहीरी के पास) पतन के बाद, १२ वीं सदी में उसका सारा व्यापार कैस चला आया। करीब १२ के कैस का व्यापार बिलकुल उठ गया। कैस के गोताखोरों द्वारा मोती निकालने का आँखों देखा वर्णन इब्नबतूता ने किया है। जैसे बाद में चल कर और आज तक बसरा के मोती प्रसिद्ध हैं उसी तरह शायद चौदहवीं सदी में कैस के मोती प्रसिद्ध थे।

इब्नबतूता के शब्दों में—'हम लुगाल से कैस शहर को गए। जिसे सीराफ भी कहते हैं। सीराफ के लोग अच्छे घर के और ईरानी नस्ल के हैं। उनमें एक अरब कबीला मोतियों के लिए गोताखोरी का काम करता था। मोती के सीप सीराफ और बहरेन के बीच नदी की

तरह शांत समुद्र में होते हैं। अप्रेल और मई के महीनों में यहां फार्स, बहरेन और कतीफ के व्यापारियों और गोताखोरों से लदी नावें आती है।'

बुद्धभट्ट ने केवल सफेद मोतियों का वर्णन किया है। अगस्तिमत के अनुसार मोती महुअई (मधुर) पीले और सफेद होते हैं। मानसोल्लास में नीले मोती का भी उल्लेख है, तथा रत्नसंग्रह में लाल मोती का। ठक्कुर फेरू ने भी प्रायः मोती के इन्हीं रंगो का वर्णन किया है।

रत्नशास्त्रों के अनुसार गोल, सफेद, निर्मल, स्वच्छ, स्निग्ध, और भारी मोती अच्छे होते हैं। अच्छे मोती के बारे में ठक्कुर फेरू (५१) का भी यही मत है।

रत्नशास्त्रों के अनुसार मोती के आकार दोष—अर्धरूप, तिकोनापन, कृशपार्श्व और त्रिवृत्त (तीनगांठ), बनावट के दोष—शुक्तिपार्श्व (सीप से लगाव) मत्स्याक्ष (मछली के आँख का दाग), विस्फोटपूर्ण (चिटक), वलुआहट (पंकपूर्ण शर्कर), रूखापन, तथा रंग के दोष— पीलापन, गदलापन, कास्यवर्ण, ताम्राभ और जठर माने गए हैं। मोती के प्रायः यही दोष ठक्कुर फेरू ने भी गिनाए हैं। इन दोषों से मोती का मूल्य काफी घट जाता था।

हम हीरे के प्रकरण में देख आए हैं कि ठक्कुर फेरू ने मोतियों के तौल और दाम का क्या हिसाब रखा था। प्राचीन रत्नशास्त्रों में इस सम्बन्ध में दो मत मिलते हैं—एक तो बुद्धभट्ट और वराहमिहिर का और दूसरा अगस्ति का। पहले सिद्धान्त में गुंजा अथवा कृष्णल की

तौल है। माष पाँच गुंजों के बराबर होता था और शाण चार माष के। दाम रूपक अथवा कार्षापण में लगाया गया है। सबसे भारी तौल एक शाण मान ली गई है और कीमत ९१ रूपक। तौल में हर एक माष बढ़ने पर दाम दुगुना हो जाता था। दूसरे सिद्धान्त में तौल गुंजा, मंजली और टंक में निर्धारित है। एक टंक चालीस गुंजों के अथवा चौबीस मंजली के बराबर माना गया है। गुंजा की तौल करीब आधा कैरेट तथा टंक करीब साढ़े बाईस कैरेट के है। मोती की भारी से भारी तौल दो टंक मानकर उनकी कीमत ११७११७२ (१) मानी गई है। तौल पर दाम किस आधार पर बढ़ता था, इसका विवरण ठीक तरह से समझ में नहीं आता।

तब रत्नशास्त्रों के अनुसार सिंहल में नकली मोती पारे के मेल से बनते थे। नकली मोती जाँचने के लिए मोती, पानी तेल और नमक के घोल में एक रात रख दिया जाता था। दूसरे दिन उसे एक सफेद कपड़े में धान की भूसी के साथ रगड़ते थे। ऐसा करने से नकली मोती का रंग उतर जाता था पर असली मोती और भी चमकने लगता था।

माणिक—बुद्धभट्ट के अनुसार पद्मराग की उत्पत्ति असुरबल के रक्त से हुई। माणिक के नामों में पद्मराग सौगन्धिक कुरुविंद, माणिक्य नीलगंधि और मांसखंड मुख्य हैं। बुद्धभट्ट के कुरुविन्द; कुरुविन्दोत्थ स्फटिक प्रसूत तथा वराहमिहिर के कुरुविन्दभव सौगन्धिभव तथा स्फटिक का शाब्दिक अर्थ जैसे गंधक उत्पन्न, ईंगुर से उत्पन्न, स्फटिक से उत्पन्न लिया जाय अथवा नहीं इसमें सन्देह है। यह नहीं कहा जा सकता कि रत्नपरीक्षाकार की। जिससे दोनों शास्त्रकारों ने

मसाला लिया है गन्धक, ईंगुर और स्फटिक से मानिक की उत्पत्ति के किसी रासायनिक प्रक्रिया का ज्ञान था अथवा नहीं।

प्रायः सब शास्त्रों के अनुसार सबसे अच्छा मानिक लंका में रावण-गगा नदी के किनारे मिलता था। कुछ हलके दर्जे के मानिक कलपुर, अन्ध्र तथा तुवर में मिलते थे (बुद्धभट्ट, ११४ वराहमिहिर ८२।१; मानसोल्लास, १।४७३—७४) ठक्कुर फेरू (५५) के अनुसार मानिक सिंहल में रामागगा नदी के तट पर, कलशपुर और तुवर देश में मिलते थे।

रावणगंगा—ठक्कुर फेरू की रामागगा शायद रावणगगा ही है। यहां हम पाठकों का ध्यान इब्नबतूता की सिंहल यात्रा की ओर दिलाना चाहते हैं। अपनी यात्रा में वह कुनकार पहुँचा जहां मानिक मिलते थे (गिब्स, इब्नबतूता, पृ० २५६-५७) वह नगर एक नदी पर स्थित था जो दो पहाड़ों के बीच बहती थी। इब्नबतूता के अनुसार (मौलवी मुहम्मदहुसेन, शेख इब्नबतूता का सफरनामा। पृ० ३३८-३९ लाहौर १८९८) इस शहर में ब्राह्मण किस्म के मानिक मिलते थे। उनमें से कुछ तो नदी से निकलते थे और कुछ जमीन खोदकर। इब्नबतूता के वर्णन से यह भी पता चलता है कि याकूत शब्द का व्यवहार माणिक और नीलम तथा दूसरे रंगीन रत्नों के लिये भी होता था। सौ फ़नम से ऊंची मालियत के पत्थर राजा स्वय रख लेता था। मार्कोपोलो (यूल, दि बुक आफ सर मार्कोपोलो, २, १५४) ने भी सिंहल के मानिक और दूसरे कीमती पत्थरों का उल्लेख किया है। तावर्निये (ट्रावेल्स, भा० २, पृ० १०१—१०२) के अनुसार भी मध्यसिंहल के पहाड़ी

इलाके की एक नदी से मानिक और दूसरे रत्न मिलते थे। बरसात में यह नदी बहुत बढ़ जाती थी। पानी कम हो जाने पर लोग इसमें मानिक इत्यादि की खोज करते थे।

उपर्युक्त उद्धरणों से रावणगंगा अथवा रामगंगा की वास्तविकता सिद्ध हो जाती है। सर ए. ग्रेनेट के अनुसार इब्नबतूता का कुनकार या कनकार गंपोला था जिसका दूसरा नाम धर्मामीपुर या गंगेली था। पर गिब्स के अनुसार कुनकार की पहचान कोर्नेगल (कुरुनगल) से की जा सकती है जो इब्नबतूता के समय सिंहल के राजाओं की राजधानी थी। (गिब्स, इब्नबतूता, पृ० ३५६ नोट ६)

क (का) लपुर—कलशपुर—प्राचीन रत्नशास्त्रों में मानिक का एक प्राप्तिस्थान कलपुर दिया है। यह पाठ ठीक है अथवा नहीं यह तो कहना संभव नहीं पर छोटे मानिक का वर्णन करते हुए बुद्धभट्ट (१२९—१३१) ने कलशपुर का उल्लेख किया है। अगर कलपुर (मानसोल्लास-कालपुर) पाठ ठीक है तो शायद उसका मिलान तामिल काव्य पट्टिनप्पालै के कालगम् से किया जा सकता है जिसे श्री नीलकण्ठशास्त्री कडारम् अथवा आधुनिक केडा मानते हैं (नीलकंठशास्त्री हिस्ट्री आफ श्रीविजय, पृ० २१, मद्रास १९४९) पर केडा में मानिक कैसे पहुँचे यह प्रश्न विचारणीय है। संभव है कि स्याम और बर्मा के मानिक यहाँ बिकने के लिये पहुँचते हों और बाजार के नाम से ही उत्पत्तिस्थान का नाम पड़ गया हो। कलशपुर की पहचान सियोर के इस्थमस पर स्थित कर्पंरम से भी सेदी ने की है (वही, पृ० ८१)।

अगर यह पहचान ठीक है तो कलशपुर में शायद मानिक का व्यापार होता रहा होगा।

अंध्र—आंध्रदेश में मानिक मिलने का और दूसरा उल्लेख नहीं मिलता।

तुंबर—मार्कंडेय पुराण (पार्जिटर का अनुवाद, पृ० ३४३) के तुंवर, जैसा श्री पार्जिटर का अनुमान है, शायद विंध्यपाद पर रहनेवाली एक जंगली जाति के लोग थे पर तुंवर देश की स्थिति का ठीक पता नही चलता। विंध्य में मानिक मिलने का भी पता नहीं है।

रत्नशास्त्रों में मानिक के बहुत से रंग कहे गए हैं जिनमें चटकीला (पद्मराग) पीतरक्त (कुरुविन्द) और नीलरक्त (सौगंधिक) मुख्य है। प्राचीन रत्नशास्त्रों के अनुसार सब तरह के मानिक एक ही खान में मिलते थे। बुद्धभट्ट के अनुसार सिंहल की नदी रावणगंगा में चार रंग के मानिक मिलते थे पर मानसोल्लास (४७५-४७६) के अनुसार सिंहल का पद्मराग लाल, कालपुर का कुरुविन्द पीला, आंध्र का सौगंधिक अशोक के पल्लव के रंग का, तथा तुंबर का नीलगंधि नीले रङ्ग का होता था। पर खानों के अनुसार मानिक का रङ्गों के अनुसार वर्गीकरण कोरी कल्पना जान पड़ती है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (४७,५२) के अनुसार तो मानिक के वर्ण भी निश्चित कर दिये गए हैं। उस ग्रन्थ में पद्मराग ब्राह्मण, कुरुविंद क्षत्रिय, श्यामगंधि वैश्य और मांसखंड शूद्र माना गया है। ब्राह्मण वर्ण का मानिक सफेद और लाल मिश्रित, क्षत्रिय गहरा लाल, वैश्य पीला मिश्रित लाल और शूद्र काला मिश्रित लाल रङ्ग का होता था। यहाँ यह बात जानने लायक है कि यह विश्वास केवल

शास्त्रीय ही नहीं था इसका प्रचार लोगों में भी था। इब्नबतूता के अनुसार सिंहल के मानिक को ब्राह्मण कहते भी थे।

ठक्कुर फेरू के अनुसार (५७—६१) पद्मराग सूर्य तपे सोने और अग्निवर्ण का; सौगन्धिक पलाश के फूल, कोयल सारस और चकोर की आँख के रंग जैसा तथा अनारदाने के रंग का नीलगन्ध क्रमशः लालता मूँगा और ईंगुर के रंग का; कुरविंद पद्मराग और सौगन्धिक के रंग का और जमुनिया जामुन और कनेर के फूल के रंग का होता था।

मानसोल्लास (४८६) के अनुसार स्निग्ध छाया, गुरुत्व निर्मलता और अतिरक्तता मानिक के गुण माने गये हैं। अगस्तीय रत्नपरीक्षा के अनुसार (५१, ६) बढ़िया, मानिक गहरे लाल रंग का लोहे से न कटनेवाला चिकना मांसपिंड की आभा देने वाला बुद्धिदायक तथा पापनाशक होता था।

मानिक के आठ दोष यथा—द्विच्छाय, द्विपद भिन्न कर्कर, लशुनपद, (धूम से धुले की तरह) कोमल, जड़ (रङ्गहीन और धूम्र (धुमैला) मानिक के दोष हैं (मानसोल्लास, ४७२—४८१)।

ठक्कुर फेरू के अनुसार (६२) मानिक के ये आठ गुण हैं यथा—सच्छाय सुस्निग्ध किरणाम कोमल रंगीलापन गुरुता समता और महत्ता। इसके दोष हैं (६३) मलताप जड़ धूम्रता भिन्न लशुन कर्कर और कठिन विषय तथा कम।

ठक्कुर फेरू के अनुसार मानिक की तौल और दाम के बारे में हम ऊपर कह आए हैं। वराहमिहिर के अनुसार एक पल (४ कार्ष) के मानिक का दाम २६ १ कार्ष का २ ‍ २ कार्ष का १२

१ कार्ष (१६ माषक) का ६०००, ८ माषक का ३०००, ४ माषक का १००० और २ माषक का ५०० है। बुद्धभट्ट (१४४) के अनुसार समान तौल के हीरे और मानिक का एक ही मूल्य होता है, पर हीरे की तौल तडुलों में और मानिक की तौल माषकों में होती है। अगस्तिमत के अनुसार मानिक का दाम बढना तीन बातों पर अवलम्बित था। यथा—मानिक की किस्म, घनत्व (यवों में) तथा कांति (सर्षपों में) मानिक की साधारण कांति का मापदण्ड २० सर्षपों के उतार चढ़ाव में निहित थी इसके लिये ऊर्ध्ववर्ति, पार्श्ववर्ति, अधोवर्ति ; अथवा ठक्कुर फेरू (६७) के ऊर्ध्वज्योतिस् पार्श्वज्योतिष और अधोज्योतिष शब्द व्यवहार में आए हैं। अगर कांति २० सर्षपों से अधिक हुई तो उसे कातिरग कहते थे और उसी अनुपात में उसका दाम बढ़ जाता था। घनत्व की इकाई ३ यव मानी गई है, इसमें हर बार इकाई बढ़ने पर मानिक का दाम दुगुना हो जाता था। अधिक से अधिक दाम २६१, ६१४,००० तक पहुँचता है।

ठक्कुर फेरू ने (६१) मानिक के किस्मों पर दाम का अनुपात निश्चित किया है। उसके अनुसार पद्मराग, सौगन्धिक, नीलगंध, कुरुविंद और जमुनिया के दामों में २०, १५, १०, ६ और ३ विस्वा मूल्य का अन्तर पड जाता था। ठक्कुर फेरू ने (६८) केवल उर्ध्ववर्ती, अधोवर्ती और तिर्यक्वर्ती मानिकों को उत्तम, मध्यम और अधम श्रेणी का माना है बाकी को मिट्टी। सान पर चढाने से घिसनेवाली, तथा छूते ही दाग पडने वाली तथा हीर में पत्थरवाली चुन्नी को चिप्पटिका कहते थे (७०)।

ठक्कुर फेरू ने तो नकली मानिक बनाने की किसी विधि का उल्लेख नहीं किया है पर रत्नशास्त्रों में, जैसा हम ऊपर देख आए हैं, नकली मानिक बनाने की विधियां दी हुई हैं और यह भी बतलाया गया है कि नकली मानिक कैसे पहचाने जा सकते थे। बुद्धभट्ट (१९८-१११) ने पांच तरह के नकली मानिक बताए हैं जो बनाए तो नहीं जाते थे पर वे साधारण उपरत्न थे जो मानिक से मिलते-जुलते थे और जिनसे मानिक का धोखा खाया जा सकता था। ये पत्थर कलशपुर तुंबर सिंहल, मुक्तामालीय और श्रीपूर्णक से आते थे। मुक्तामाल का पता नहीं चलता पर श्रीपूर्णक से शायद यहाँ सिंहल के श्रीपुर से मतलब हो।

नीलम—अनुश्रुति के अनुसार नीलम की उत्पत्ति असुरबल की आंखों से हुई। शास्त्रों के अनुसार नीलम की दो किस्में थीं इन्द्रनील और महानील पर इनके रंगों के बारे में शास्त्रकारों के विभिन्न मत हैं। बुद्धभट्ट के अनुसार इन्द्रनील का रंग इन्द्रधनुष जैसा होता है और महा नील का रंग दूध में नीलापन ला देता है। पर दूसरे शास्त्रों के अनुसार यह इन्द्रनील का गुण है। ठक्कुर फेरू (८१) ने इन्द्रनील और महानील को मिलाकर नीलम का नामकरण महेन्द्रनील किया है।

बुद्धभट्ट के अनुसार नीलम केवल सिंहल से आता था। मानसो-ल्लास (४२९) के अनुसार नीलम सिंहल द्वीप के मध्य में रावणगंगा नदी के किनारे पद्माकर से मिलता था। अगस्तिमत ने कलपुर और कलिंग के नाम भी जोड़ दिये हैं। उसके अनुसार कलपुर का नीलम गाय की आंख के रंग का और कलिंग का नीलम बाघ की आंख के रंग का होता था।

हम ऊपर देख आए हैं कि इब्नबतूता सिंहल के नीलम और उसके प्राप्तिस्थान का किस तरह आँखों देखा हाल वर्णन करता है। लिंक्शोटेन (भा० २, पृ० १४०) के अनुसार पेगू का नीलम भी अच्छा होता था, जो शायद मोगाके की मानिक की खानों से निकलता था। (तावर्नियेर, २, पृ० १०१, १०२)। कलपुर और कलिंग के नीलम से शायद वर्मा और श्याम के नीलम से मतलब हो जो कि कलिंग और केदा के बाजारों में जाकर बिकते थे।

रत्नशास्त्रों में नीलम के दस या ग्यारह रंग कहे गए हैं। श्वेत-नीलाभ नीलम ब्राह्मण, रक्तनीलाभ क्षत्रिय, पीतनीलाभ वैश्य, तथा घननील शूद्र माना गया है। ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलम के नौ रंग होते थे यथा—नील, मेघवर्ण, मोरकंठी, अलसीका फूल, गिरकर्णका फूल, भ्रमरपंखी, कृष्ण, श्यामल और कोकिलग्रीवाभ।

रत्नशास्त्रों के अनुसार नीलम के पाँचगुण है, यथा—गुरुता, स्निग्धता, रंगाढ्यता, पार्श्वरंजता और तृणग्राहित्व। ठक्कुर फेरू के अनुसार ये गुण हैं—गुरुता, सुरंगता, सुश्लक्ष्णता, कोमलता और सुरंजनता।

रत्नशास्त्रों के अनुसार नीलम के छः दोष हैं यथा—अभ्रक (धूमिल) कर्कर या सशर्कर (रेतीला), त्रास (टूटा), भिन्न (चिटका), मृदा या मृत्तिका गर्भ (भीतर मिट्टी होना) और पाषण (हीर मे पत्थर होना)। ठक्कुर फेरू (८३) के अनुसार नीलम के नौ दोष हैं, यथा—अभ्रक, मंदिस (मद्दा) सर्करगर्भ, सत्रास, जठर, पथरीला, समल, सागार (मिट्टीभरा) और विवर्ण।

नीलम का दाम माणिक की तरह लगाया जाता था। ठक्कुर फेरु के समय में नीलम के दाम के बारे में हम ऊपर कह आए हैं।

पन्ना—(मरकत, तार्क्ष्य) की उत्पत्ति असुर बल के उस पित्त से मानी गई है जिसे गरुड़ ने पृथ्वी पर गिराया। प्राचीन रत्नशास्त्रों में पन्ने की खानों का वर्णन अस्पष्ट है। बुद्धभट्ट (१५०) के अनुसार जब गरुड़ ने असुर बल का पित्त गिराया तो वह बर्बरालय छोड़कर रेगिस्तान के समीप, समुद्र के किनारे के पास एक पर्वत पर गिरकर मरकत बना गया। यह भी कहा गया है (१४९) की वहाँ तुरुष्क के के वृक्ष होते थे। अगस्तिमत (२८०) के अनुसार यह सुप्रसिद्ध पर्वत समुद्र के किनारे के पास तुरुष्कों के देश में स्थित था। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (७५) के अनुसार पन्ने की दो खानें थीं एक तुरुष्क देश में और दूसरी मगध में। ठक्कुर फेरु ने (७१) मरकत के उत्पत्ति स्थान मलयगिरि, गलयाचल बर्बर देश और वज्जिवीर माने हैं।

मरकत के उपयुक्त आकर की जांच पड़ताल से एक बात स्पष्ट हो जाती है कि प्रायः सब शास्त्रकार पन्ने की खान बर्बर देश के रेगिस्तान में समुद्र तीर के निकट, मानते हैं। टाल्मी युग से लेकर मध्यकाल तक प्रायः सब विवरण मिस्र में विशेष कर लाल सागर के पास स्थित 'बर्बर' पर्वत की पन्ने की खान का उल्लेख करते हैं। इस खान का उल्लेख प्लिनी, कासमास इंडिको प्लाबस्टस (करीब ५४५ ई०) मास्ऊदी और मनी सदी दूसरे अरब यात्री करते हैं। अल इद्रिसी के अनुसार मध्य नील पर अस्वान से कुछ दूर एक पर्वत के पाद पर पन्ने की खान है। यह खान शहर से बहुत दूर एक रेगिस्तान में है। इस पन्ने की खान

की, दुनिया की और कोई दूसरी खान मुकाबला नहीं कर सकती। अपने फायदे और निर्यात के लिए यहाँ काफी आदमी काम करते हैं (पी० ए० जोबर्त, अल इद्रिसी, १, पृ० ३६), यहाँ यह भी उल्लेखनीय बात है कि अस्वान से एक महीने की राह पर मरकता नामक एक शहर था जहाँ हब्श के लाल सागरवाले किनारे पर स्थित जलेग के व्यापारी रहते थे। यह संभव हो सकता है कि संस्कृत मरकत का नाम शायद इसी शहर से पड़ा हो पर संस्कृत मरकत की व्युत्पत्ति यूनानी स्मरग्दोस से की जाती है। यह यूनानी शब्द असीरी बर्रक्, हिब्रू बारिक्केत या बारकत, शामी बोर्को का रूपान्तर है। अरबी ज़ुम्मुरुद शायद यूनानी से निकला हो (लाउफर, साइनो इरानिका, पृ० ५१९) लिंक्शोटेन (२, ५, १४०) के अनुसार भी भारत में बहुत कम पन्ने मिलते थे। यहाँ पन्ने की काफी मांग थी और वे मिस्र के काहिरा से आते थे।

अबलिंद—इस देश का नाम और कहीं नहीं मिलता। पर यहाँ हम पेरिप्लस (७) के अवलितेस की ओर ध्यान दिलाना चाहते हैं जिसकी पहचान बाबेल मंदेब के जल विभाजक से ७९ मील दूर जैला से की जाती है। खाड़ी के उत्तर में अवलित गाँव में प्राचीन अवलितेस का रूप बच गया है। बहुत सम्भव है कि अवलिंद भी इसी अवलितेस—अवलित का रूप हो। यहाँ पन्ना तो नहीं मिलता पर सम्भव है कि जैला के व्यापारी मिस्री पन्ना इस देश में लाते रहे हों और उसी आधार पर अवलिंद—अवलित पन्ने का एक स्रोत मान लिया गया हो।

मलयाचल—यह दक्षिण भारत का मलयाचल तो हो नहीं सकता।

शायद ठक्कुर फेरू का उद्देश्य यहाँ गेबेल बर्बर से हो जहाँ इकमह के अनुसार दरम्क नामी मुल्क होता था। बर्बर और सफवि शीर का संकेत भी लाल सागर की ओर इशारा करता है।

मगध—अगस्तीय रत्नपरीक्षा में मगध में भी पन्ने की खान मानी गई है। मालेट (रेकार्ड्स् आफ दि जियालोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया भा ७ पृ ४१) के अनुसार बिहार के हजारीबाग जिले में पन्ने की एक खान थी।

रत्नशास्त्रों में पन्ने की चार से आठ छाया मानी गई है। अगस्ति मत के अनुसार महामरकत में अपने पास की वस्तुओं को रंगीन कर देने की शक्ति होती थी। मरकत सहज और रसायनिक रंग के होते थे। सहज का रंग सेवार जैसा और दूसरे का शुकपंख, शिरीष पुष्प और सुतीवर जैसा होता था।

रत्नशास्त्रों में पन्ने के पांच गुण यथा—स्वच्छ, गुरु, सुवर्ण स्निग्ध और अरजस्क (धूलिरहित) है। ठक्कुर फेरू के अनुसार (७६) अच्छी छाया, गुरुत्वता अनेकरूपता, मृदुता और वर्णाढ्यता पन्ने के पांच गुण हैं।

रत्नशास्त्रों के अनुसार शबलता जठरता (कान्तिहीनता) मलिनता रूक्षता, पाषाणता कर्कशता और विस्फोट पन्ने के दोष हैं। ये ही दोष ठक्कुर फेरू ने गिनाए हैं। केवल शबलता की जगह सरजस्कता आ गई है।

इकमह के अनुसार नकली पन्ना शीशा, पुनिका और मालंतक से बनता था। इसके बनाने में मंजीठ, नील और ईंगुर भी उपयोग में लाए जाते थे।

उपरत्न

रत्नशास्त्रों में उपरत्नों का बड़ी सरसरी तौर पर उल्लेख हुआ है। पाञ्च महारत्नों के विपरीत ठक्कुर फेरू ने विद्रुम, मूंगा, लहसनिया, वैडूर्य, स्फटिक, पुखराज, कर्केतन और भीष्म का उल्लेख किया है।

विद्रुम—अर्थशास्त्र (अग्रेजी अनुवाद, पृ० ७६) के अनुसार मूंगा आलकंद और विवर्ण से आता था। यहाँ आलकन्द से मिस्र के सिकंदरिया के बन्दरगाह से मतलब है। टीका के अनुसार विवर्णसे यवन द्वीप के पास का समुद्र है। अगर यह ठीक है तो यहाँ विवर्णसे भूमध्य सागर से तात्पर्य होना चाहिये। बुद्धभट्ट (२४६-२५२) के अनुसार मूगा शकवल, सम्लासक, देवक और रामक से आते थे। यहाँ रामक से शायद रोम का मतलब हो सकता है। अगस्तिमत के एक क्षेपक (१०) में कहा गया है कि हेमकन्द पर्वत की एक खारी झील में मूगा पाया जाता था। ठक्कुर फेरू के अनुसार (६०) मूंगा कावेर, विन्ध्याचल, चीन, महाचीन, समुद्र और नैपाल में पैदा होता था।

पेरिप्लस (२८, ३६, ४६, ५६) के अनुसार भूमध्य सागर का लाल मूगा बारबारिकम, बेरिगाजा (भरुकच्छ) और मुजिरिस के बन्दरगाहों में आता था। प्लिनी (२२।११) के अनुसार मूगे का भारत में अच्छा दाम था। आज की तरह उस समय भी मूगा सिसली, कोर्सिका और सार्डीनिया, नेपल्स के पास लेगहार्न और जेनेवा, कारालोनिया, बलेरिक द्वीप तथा ट्यूनिस अलजीरिया और मोरक्को के समुद्रतट पर मिलता था। लाल सागर और अरब के समुद्रतट के मूगे काले होते थे।

अयस्लिमत के हिंदकुश पर्वत के पास एक खारी झील में मूंगा मिलने के उल्लेख से भी शायद लाल सागर अथवा फारस की खाड़ी के मूंगों से मतलब हो सकता है। श्री लाउफर के अनुसार (साइनो ईरानिका, पृ ५२४-२५) चीनी ग्रन्थों में ईरान में मूंगा पैदा होने के उल्लेख हैं। ग्रुफन के अनुसार मूँगा फारस, सिंहल और चीन के दक्षिण समुद्र से आता था। तांग इतिहास से पता चलता है कि फारस की प्रवाल शिलाएं तीन फुट से ऊंची नहीं होती थीं। इसमें सन्देह नहीं कि फारस के मूंगे एशिया में सब जगह पहुँचते थे। काश्मीर के मूंगे का वर्णन जो एक चीनी इतिहासकार ने किया है, वह फारसी मूंगा ही रहा होगा। मार्कोपोलो (भा १, पृ ३१) के अनुसार तिब्बत में मूंगे की बड़ी माँग थी और उसका काफी दाम होता था मूंगे स्त्रियाँ गले में पहनती थीं अथवा मूर्तियों में जड़े जाते थे। काश्मीर में मूंगे इटली से पहुँचते थे और वहाँ उनकी काफी खपत थी (मार्कोपोलो १, पृ १५६)। टावर्निये (भा २, पृ ११६) के अनुसार आसाम और भूटान में मूंगे की काफी मांग थी।

कावेर—यहाँ दक्षिण के कावेरी पट्टिनम् के बन्दरगाह से मतलब हो सकता है। शायद यहाँ मूंगा बाहर से उतरता हो। विन्ध्याचल में मूंगा मिलना कोरी कल्पना मालूम पड़ती है।

चीन महाचीन—लगता है चीन और महाचीन से यहाँ क्रमशः चीन देश और कैंटन से मतलब हो। सम्भव है चीनी व्यापारी इस देश में बाहर से मूंगा लाते हों।

समुद्र—इससे भूमध्य सागर, फारस की खाड़ी और लाल सागर के मूंगों से मतलब मालूम पड़ता है।

नेपाल—जैसा हम ऊपर देख आए हैं तिब्बत और काश्मीर की तरह नेपाल में भी मूगे की बड़ी माग थी। हो सकता है कि नेपाली व्यापारियों द्वारा मूगा लाये जाने पर नेपाल उसका एक उत्पत्ति स्थान मान लिया गया हो।

लहसनिया—नीले, पीले, लाल और सफेद रग की लहसनिया ठक्कुर फेरू (६२—६३) के अनुसार सिंहल द्वीप से आती थी। इसे बिडालाक्ष अथवा बिल्ली के आँख जैसी रगवाली भी कहा गया है। उसमें सूत पडने से उसे कोई कोई पुलकित भी कहते थे।

वैडूर्य—सर्व श्री गार्वे, सौरीन्द्र मोहन ठाकुर और फिनो की राय है कि वैडूर्य का वर्णन लहसनिया से बहुत कुछ मिलता है। बुद्धभट्ट (२००) ने भी वैडूर्य को बिल्ली की आँख के शक्ल का कहा है।

पाणिनि ४।३।८४ के अनुसार वैदूर्य (वैडूर्य) का नाम स्थान वाचक है। पतंजलि के अनुसार विदूर में य प्रत्यय लगाकर उसे स्थान वाचक मानना ठीक नही, क्योंकि वैदूर्य विदूर में नही होता, वह तो बालवाय में होता है और विदूर में कमाया जाता है। पर शायद बाल-वाय शब्द विदूर में परिणत हो गया हो और इसीलिये उसमें य प्रत्यय लग गया हो। इसके माने यह हुए कि विदूर शब्द बालवाय का एक दूसरा रूप है। इस पर एक मत है कि विदूर बालवाय नहीं हो सकता, दूसरा मत है कि जिस तरह व्यापारी वाराणसी को जित्वरी कहते थे उसी तरह वैय्याकरण बालवाय को विदूर।

उपर्युक्त कथन से यह बात साफ हो जाती है कि वैडूर्य बालवाय पर्वत में मिलता था और विदूर में कमाया और बेचा जाता था। यह

पर्वत दक्षिण भारत में था। बुद्धभट्ट (१९९) के अनुसार विदूर पर्वत दो राज्यों की सीमा पर स्थित था। पहला देश कोंग है जिसकी पहचान आधुनिक सेलम, कोयम्बटूर, तिन्नेवेल्ली और ट्रावनकोर के कुछ भाग से की जाती है। दूसरे देश का नाम नालिक, चारिक या तोलक आता है जिसे श्री फिनो चोलक मानते हैं जिसकी पहचान चोलमण्डल से की जा सकती है। इसी आधार पर श्री फिनो ने कालमाय की पहचान चीकरे पर्वत से की है। यह बात उल्लेखनीय है कि सेलम जिले में स्फटिक और कोरंड बहुतायत से मिलते हैं।

ठक्कुर फेरू (९४) का कुविंयंग कोंग का बिगड़ा रूप है। सहार का उल्लेख कोरी कल्पना है। ठक्कुर फेरू ने लहसुनिया और वैडूर्य अलग अलग रत्न माने हैं। सम्भव है कि देशभेद से एक ही रत्न के दो नाम पड़ गये हों।

स्फटिक

प्राचीन रत्नशास्त्रों के अनुसार स्फटिक के दो भेद यानी सूर्यकांत और चन्द्रकांत माने गए हैं। ठक्कुर फेरू (९६) ने भी यही माना है पर अगस्तिमत के क्षेपक में स्फटिक के भेदों में जलकांत और हंसगर्भ भी माने गए हैं। पृथ्वीचन्द्र चरित (पृ ९५) में भी जलकांत और हंस गर्भ का उल्लेख है। सूर्यकांत से आग, चन्द्रकांत से अमृतवर्षा, जलकांत से पानी निकलना तथा हंसगर्भ से विष का नाश माना जाता था।

बुद्धभट्ट के अनुसार स्फटिक कावेरी नदी, विन्ध्यपर्वत, यवन देश, चीन और नेपाल में होता था। मानसोल्लास के अनुसार ये स्थान लंका, तापी नदी, विन्ध्याचल और हिमालय थे। ठक्कुर फेरू के अनुसार

नेपाल, कश्मीर, चीन, कावेरी नदी, जमुना और विंध्याचल से स्फटिक आता था।

पुखराज

पुखराज की उत्पत्ति असुर वल के चमड़े से मानी गई है। इसका दाम लहसनिया जैसा होता था। बुद्धभट्ट के अनुसार पुखराज हिमालय में, अगस्तिमत के अनुसार सिंहल और कलहस्थ (?) में तथा रत्नसंग्रह के अनुसार सिंहल और कर्क में होता था। ठक्कुर फेरू ने हिमालय को ही पुखराज का उद्गम स्थान माना है पर यह बात प्रसिद्ध है कि सिंहल अपने पीले पुखराज के लिये प्रसिद्ध है।

कर्केतन—कर्केतन के उत्पत्ति स्थान का किसी रत्नशास्त्र में उल्लेख नहीं है। पर ठक्कुर फेरू ने पवणुप्पट्ठान देश में इसकी उत्पत्ति कही है। यहाँ शायद दो जगहों से मतलब है पवण और उप्पट्ठान। पवण से संभव है शायद अफगानिस्तान में गजनी के पास पर्वान से मतलब हो और उप्पट्ठान से परि-अफगानिस्तान से। अगर हमारी पहचान ठीक है तो यहाँ पर्वान से शायद वहाँ कर्केतन के व्यापार से मतलब हो। उप-ट्ठान से रूस में उराल पर्वत में एकाटेरिन बर्ग और टाकोवाजा की कर्केतन की खानों से मतलब हो (जी० एफ०, हर्बर्ट स्मिथ, जेम स्टोन्स, पृ० २३६, लंडन १६२३)। यह भी संभव है कि उपपट्ठान में पट्टन शब्द छिपा हो। इब्नबतूता ने (२६३-६४) फट्टन को चोल मंडल का एक बड़ा बंदर माना है पर इस बंदर की ठीक पहचान नहीं हो सकती। संभव है कि इससे कावेरी पट्टीनम् अथवा नागपट्टीनम् का

मोल होता हो। अगर यह अनुमान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्बेन नहीं आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तांबे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आता है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-५) गोमेद को स्वच्छ एवं स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८१-८६) में गोमेद को गाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। इसका रंग लाल और पिंगर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) ने इसका रंग गहरा लाल सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनायकुलपरेवग देव तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनागकुलपरे में कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गोलकुंडा से मसुलीपट्टम के रास्ते में पुंगल के आगे नागुलपाद पड़ता था जिसे वार्मिंगे ने नगोल-पर कहा है (वार्मिंगे १ पृ १७१) संभव है कि नागकुलपर यही स्थान हो। नग देश से शायद बंगाल का बोध हो सकता है बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद नहीं आता रहा हो।

पारसी रत्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न बदखसाण देश यानी बदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार बदख्शां के बलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड़ से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वत्तु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रंग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरब में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबैतर (११६७-१२४८) ने किया है (फेरा, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई बीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक बंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार बहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलब है। तावर्नियें (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मेशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

बोध होता हो। अगर यह पहचान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तांबे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा मोलाम होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आता है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-८) गोमेद को स्वच्छ, गुरु स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८१-८६) में गोमेद को गाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। उसका रंग धवल और पिंजर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) ने इसका रंग गहरा लाल सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनायकुलपरेसम देस तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनायकुलपरे से कौन सा नाम लिया हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गोलकुंडा से मसुलीपट्टम के रास्ते में पुंगल के आगे नागलपाद पड़ता था जिसे तावर्निये ने नगोल पर कहा है (तावर्निये १ पृ १७१) संभव है कि नायकुलपर यही स्थान हो। अग देस से शायद बंगाल का बोध हो सकता है बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद यहाँ आता रहा हो।

पा र सी र त्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न बदखसाण देश यानी बदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार बदख्शा के बलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रंग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरब में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबेतर (११९७-१२४८) ने किया है (फेरां, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई बीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक बंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार बहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलब है। तावर्नियें (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

बोध होता हो। अगर यह पहचान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्कोतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तांबे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आता है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-५) गोमेद को स्वच्छ, गुरु स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८१-८६) में गोमेद को गाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। उसका रंग चकत और पिंजर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) ने इसका रंग गहरा लाल सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनायकुलपरवेग देश तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनायकुलपरे में कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गोलकुंडा से मसुलीपटन के रास्ते में पुगल के आगे मदापाद पड़ता था जिसे टावर्निये ने नगेल पर कहा है (टावर्निये १, पृ १७१) संभव है कि मायकुलपर यही स्थान हो। वय देश से शायद बंगाल का बोध हो सकता है बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद यहाँ आता रहा हो।

पा र सी र त्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरव के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न बदखसाण देश यानी बदख्शा से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार वदख्शा के वलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरव में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबेतर (११६७-१२४८) ने किया है (फेरां, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई वीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक वंवई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार वहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलव है। तावर्निये (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

बोध होता हो। अगर यह अनुमान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग रवि अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आता है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-१) गोमेद को स्वच्छ एवं स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८१-८२) में गोमेद को मांस के रंग अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। उसका रंग धवल और पिंगर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) ने इसका रंग गहरा लाल, सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनायकुलपरोबय देश तथा नमदा नदी माना है। सिरिनायकुलपरे में कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गौतबुद्धा से मसुलीपटम के रास्ते में पुंगल के आगे मधुलपाद पड़ता था जिसे टालेमि ने मगेल पर कहा है (टालेमि १, पृ १७१) संभव है कि मासुलसपर यही स्थान हो। बंग देश से शायद बंगाल का बोध हो सकता है बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद यहाँ आता रहा हो।

पारसी रत्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरव के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न वदखसाण देश यानी वदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार वदख्शा के वलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड़ से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रंग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरव में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबैतर (११९७-१२४८) ने किया है (फेरा, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई बीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक वंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार वहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलव है। तावर्नियें (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मेशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

बोध होता हो। अगर यह अनुमान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तांबे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आता है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-५) गोमेद को स्वच्छ, गुरु स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८३-८६) में गोमेद को गाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। उसका रंग कमल और पिंजर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) ने इसका रंग गहरा लाल, सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनायकुलपरेवय देस तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनायकुलपरे में कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गोलकुंडा से मसुलीपट्टन के रास्ते में पुनगा के आगे नागुलपाद पड़ता था जिसे तावर्निये ने नगेल पर कहा है (तावर्निये १ पृ १७१) संभव है कि नागकुलपर वही स्थान हो। अब देस से शायद बंगाल का बोध हो सकता है, बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद यहाँ आता रहा हो।

पारसी रत्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न बदखसाण देश यानी बदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार बदख्शा के बलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड़ से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इशकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रंग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरब में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबैतर (११६७-१२४८) ने किया है (फेरां, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई बीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक बंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार बहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलब है। तावर्नियें (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मेशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

बोध होता हो। अगर यह पहचान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग हाँवे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आया है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-५) गोमेद की स्वच्छ एवं स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८३-८५) में गोमेद को गाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। उसका रंग बबल और सिंदूर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) ने इसका रंग गहरा लाल सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनायकुलपरेवम देश तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनायकुलपरे में कौन सा भाग छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गोलकुंडा से मछलीपट्टम के रास्ते में पूंगल के आगे नागुलापाड पड़ता था जिसे सार्थनिर्देश में नगोल पर कहा है (सार्थनिर्देश १ पृ १७१) संभव है कि नागकुलपर यही स्थान हो। अग देस से शायद बंगाल का बोध हो सकता है, बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद यहाँ आता रहा हो।

पारसी रत्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न बदखसाण देश यानी बदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार बदख्शां के बलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड़ से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रंग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरब में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबैतर (११६७-१२४८) ने किया है (फेरां, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई बीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक बंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार बहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलब है। तावर्नियें (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

बोध होता हो। अगर यह पहचान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तांबे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आया है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-५) गोमेद को स्वच्छ एवं स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८१-८८) में गोमेद को वाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। इसका रंग धवल और पिंगर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) ने इसका रंग गहरा लाल सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, चिरिनायकुलपरेवग देश तथा नर्मदा नदी माना है। चिरिनायकुलपरे में कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर नौशकूदा से मसुलीपटम के रास्ते में पुंमल के आगे नायुलपार पड़ता था जिसे तावर्निये ने नगेल पर कहा है (तावर्निये १ पृ १७१) संभव है कि नायकुलपर यही स्थान हो। बंग देश से शायद बंगाल का बोध हो सकता है, बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद यहाँ आता रहा हो।

पारसी रत्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न वदखसाण देश यानी वदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार वदख्शा के वलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरब में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नवैतर (११६७-१२४८) ने किया है (फेरां, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई वीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक वंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार वहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलव है। तावर्निये (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

बोध होता हो। अगर यह पहचान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तांबे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आता है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-५) गोमेद को स्वच्छ, गुरु स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८३-८५) में गोमेद को गाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। इसका रंग धवल और पिंजर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) ने इसका रंग गहरा लाल सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनागकुलपरेवय देश तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनागकुलपरे में कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गोलकुंडा से मसुलीपटम के रास्ते में पुगल के आगे नागलवाद पड़ता था जिस तावर्निये ने नगोल पर कहा है (तावर्निये १, पृ १७१) संभव है कि नागकुलपर यही स्थान हो। बंग देश से शायद बंगाल का बोध हो सकता है, पर संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद यहाँ आता रहा हो।

पा र सी र त्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न बदखसाण देश यानी बदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार बदख्शा के बलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इशकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रंग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरब में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबेतर (११९७-१२४८) ने किया है (फेरां, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई बीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक बंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार बहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलब है। तावर्निये (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मेशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

बोध होता हो। अगर यह पहचान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ माना हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तांबे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आता है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-५) गोमेद को स्वच्छ, गुरु स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८१-८६) में गोमेद को मांस के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। इसका रंग धवल और पिंजर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) ने इसका रंग गहरा लाल, सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनागकुलपरदेस देस तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनागकुलपरे में कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गोलकुंडा से मसुलीपट्टन के रास्ते में पुगल के आगे नागुलपाद पड़ता था जिसे तावर्निये ने नगोल्पर कहा है (तावर्निये १, पृ १७१) संभव है कि नागकुलपर यही स्थान हो। बंग देस से शायद बंगाल का बोध हो सकता है बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद यहाँ आता रहा हो।

पारसी रत्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न बदखसाण देश यानी बदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४९-५०) के अनुसार बदख्शां के बलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड़ से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रंग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरब में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबैतर (११९७-१२४८) ने किया है (फेरा, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई बीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक बंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार बहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर ओर मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलब है। तावर्नियें (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मेशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

बीच होता हो। अगर यह पहचान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तांबे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा मोलाम होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आता है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-५) गोमेद को स्वच्छ, गुरु स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८१-८६) में गोमेद को गाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। इसका रंग भक्त और पिंजर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) ने इसका रंग गहरा लाल, सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनायकुलपरेवग देश तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनायकुलपरे में कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गोलकुंडा से मसुलीपट्टन के रास्ते में पुमल्ल के आगे नागलपाद पड़ता था जिसे तावर्निये ने नगेल पर कहा है (तावर्नियें १ पृ १७१) संभव है कि नायकुलपर यही स्थान हो। अथ देश से शायद बंगाल का बोध हो सकता है बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद यहाँ आता रहा हो।

पारसी रत्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न बदखसाण देश यानी बदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार बदख्शा के बलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड़ से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रंग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरब में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबैतर (११९७-१२४८) ने किया है (फेरा, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई बीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक बंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार बहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलब है। तावर्नियें (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

बीच होता हो। अगर यह पहचान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तांबे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आया है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-५) गोमेद को स्वच्छ एवं स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८१-८४) में गोमेद को गाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। इसका रंग धवल और पिंजर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१   ) ने इसका रंग गहरा लाल सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत, सिरिनागकुलपरेवग देश तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनागकुलपर से कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर मौसलकुडा से मसुलीपट्टम के रास्ते में पुंगल के आगे नागलपार पड़ता था जिसे टाल्मी ने नगेला पर कहा है (टाल्मी १ पृ. १७३) संभव है कि नागकुलपर यही स्थान हो। नय देश से शायद बंगाल का बोध हो सकता है। बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद नहीं आता रहा हो।

पारसी रत्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न बदखसाण देश यानी बदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४६-५०) के अनुसार बदख्शा के बलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्सस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रंग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरब में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नबैतर (११६७-१२४८) ने किया है (फेरा, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई बीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक बंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार बहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुबासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलब है। तावर्निये (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

मौल होता हो। अगर यह पहचान ठीक है तो शायद सिंहल का कर्केतन यहाँ आता हो।

ठक्कुर फेरू के अनुसार इसका रंग तांबे अथवा पके हुए महुए की तरह अथवा नीलाभ होता था।

भीष्म—ठक्कुर फेरू ने भीष्म का उत्पत्ति स्थान हिमालय माना है। यह रंग में सफेद तथा बिजली और आग से रक्षा करनेवाला माना गया है।

गोमेद—रत्नशास्त्रों में इसका विवरण कम आता है। अगस्तिमत के क्षेपक में (४-५) गोमेद को स्वच्छ, गुरु स्निग्ध और गोमूत्र के रंग का कहा गया है। अगस्तीय रत्नपरीक्षा (८१-८६) में गोमेद को गाय के मेद अथवा गोमूत्र के रंग का कहा गया है। इसका रंग धवल और पिंजर भी होता था। ठक्कुर फेरू (१) में इसका रंग गहरा लाल सफेद और पीला माना है।

और किसी रत्नशास्त्र में गोमेद के उत्पत्तिस्थान का पता नहीं चलता। पर ठक्कुर फेरू ने इसका स्रोत सिरिनायकुलपरवय देश तथा नर्मदा नदी माना है। सिरिनायकुलपरे में कौन सा नाम छिपा हुआ है यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता पर गौलकुंडा से मसुलीपट्टन के रास्ते में पुराने जमाने नगलवार पड़ता था जिसे तावर्निये ने नगेलवर कहा है (तावर्निये १, पृ १७१) संभव है कि नागकुलपर यही स्थान हो। अब देश से शायद बंगाल का बोध हो सकता है बहुत संभव है कि १४ वीं सदी में सिंहल से गोमेद यहाँ आता रहा हो।

पा र सी र त्न

ठक्कुर फेरू ने (१०३) लाल, अकीक और पिरोजा को पारसी रत्न माना है। इसका यह अर्थ हुआ कि ये रत्न या तो फारस में होते थे अथवा उनका व्यापार फारस और अरब के व्यापारी करते थे।

लाल—आग की तरह लाल—यह रत्न वदखसाण देश यानी वदख्शां से आता था। मार्कोपोलो (भा० १, पृ० १४९-५०) के अनुसार वदख्शा के वलास मानिक प्रसिद्ध थे। वे सिग्नान के एक पहाड से खोद कर निकाले जाते थे और उन पर वहाँ के शासक का पूरा अधिकार होता था। लाल की खानें वक्षु नदी के दाहिने किनारे पर इराकाशम जिले में शिगनान के सीमा पर स्थित हैं (वुड, ए जर्नी टु आक्शस, भूमिका पृ० ३३)

अकीक—ठक्कुर फेरू ने इसे पीले रग का कहा है और इसकी उत्पत्ति जमण देश यानी अरव में यमन देश माना है। यमन देश के अकीक का उल्लेख इब्नवैतर (११९७-१२४८) ने किया है (फेरा, तेक्सत् रेलातीफ अ ल एक्सत्रेम ओरियाँ, १, पृ० २५६) और इसे कई वीमारियों की औषधि मानी है। आज दिन भी यमनी अकीक बंबई में प्रसिद्ध है। इसका दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार वहुत कम होता था।

फिरोजा—ठक्कुर फेरू के अनुसार नीलाम्ल रंग का फिरोजा नीसावर और मुवासीर की खानों से आता था। निसावर से यहाँ फारस के निशापुर से मतलव है। तावर्निये (२, पृ० १०३-०४) के अनुसार फिरोजा फारस में दो खानों से पाया जाता था। पुरानी खान मशद से तीन दिन के रास्ते पर निशापुर के आसपास थी और नई

मशाद् से पाँच दिन के रास्ते पर थी। ख़ुबाशीर से यहाँ ईराक के मोसुल या अलमौसिल से योग होता है। लगता है फारसी फिरोजा यहाँ व्यापार के लिये आता था। आज दिन भी मोसुल में फिरोजे का व्यापार होता है।

लाल, लहसनिया, इन्द्रनील और फिरोजे का दाम ठक्कुर फेरू के अनुसार तौल से सोने के टांकों में होता था। निम्नलिखित यंत्र से यह बात साफ हो जाती है :—

मासा	॥	१	१॥	२	२॥	३	३॥	४
लाल	१	२॥	६	९	१५	२४	३४	५
लहसनी	।॥	१॥। —२॥	४॥	६।॥	११।	१८	२४॥।	३०॥
इन्द्रनील	।	॥	।॥	१	२	५	८	१५
फेरोजा	।	॥	।॥	१	२	५	८	१५

उपर्युक्त यंत्र के अध्ययन से पता चल जाता है कि लाल इत्यादि की कीमत दूसरे महारत्नों के मुकाबिले में काफी कम थी।

उपसंहार

प्राचीन रत्नशास्त्रों के आधार पर हमने ऊपर यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि रत्नशास्त्र प्राचीन भारत में एक विज्ञान माना जाता था। इस विज्ञान में बहुत सी बातें तो अनुभूति पर अवलंबित थीं पर इसमें सन्देह नहीं की समय समय पर रत्नशास्त्रों के लेखक अपने अनुभवों का भी उपयोग कर देते थे। ठक्कुर फेरू ने भी अपनी 'रत्नपरीक्षा' में प्राचीन ग्रंथों का सहारा लेते हुए भी चौदहवीं सदी के रत्न व्यवसाय पर काफी प्रकाश डाला है। ठक्कुर फेरू के ग्रन्थ की

महत्ता इसलिये और भी वढ जाती है कि रत्न सवन्धी इतनी वातें सुल्तान युग के किसी फारसी अथवा भारतीय ग्रन्थकार ने नहीं दी है। कुछ रत्नों के उत्पत्ति स्थान भी, ठक्कुर फेरू ने १४ वीं सदी के रत्नों के आयात निर्यात देख कर निश्चित किए हैं। रत्नों की तौल और दाम भी उसने समयानुसार रखे हैं, प्राचीन शास्त्रों के आधार पर नहीं। पारसी रत्नों का विवरण तो ठक्कुर फेरू का अपना ही है, पद्मराग के प्राचीन भेद तो उसने गिनाये ही हैं पर चुन्नी नाम का भी उसने प्रयोग किया है जिसका व्यवहार आज दिन भी जौहरी करते हैं। उसी तरह घटिया काले मानिक के लिये देशी शब्द चिप्पडिया का व्यवहार किया है। हीरे के लिए फार शब्द भी आजकल प्रचलित है। लगता है उस समय मालवा हीरे के व्यवसाय के लिये प्रसिद्ध था, क्योंकि ठक्कुर फेरू ने चोखे हीरे के लिये मालवी शब्द व्यवहार किया है। पन्ने के वारे में तो उसने वहुत सी नई वातें कही हैं। कुछ ऐसा लगता है कि ठक्कुर फेरू के समय में नई और पुरानी खान के पन्नों में भेद हो चुका था और इसीलिए उसने पन्नों के तत्कालीन प्रचलित नाम गरुडोद्गार, कीडउठी, वासवती, मूगउनी और धूलिमराई दिये हैं। इन सव वातों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ठक्कुर फेरू रत्नों के सच्चे पारखी थे। उन्होंने देख समझ कर ही रत्नों के वर्णन लिखे हैं केवल परंपरागत सिद्धांतों के आधार पर ही नहीं।

रत्नों की वैज्ञानिक उपादेयता और परिचय

[पद्मभूषण पं० श्री सूर्यनारायण व्यास]

विज्ञान की मान्यता है कि प्रत्येक वस्तु आंदोलितावस्था में रहती है। इन आंदोलनों की गति विधि के अनुसार समस्त जड़ चेतनों पर न्यूनाधिक रूप में प्रभाव पड़ता रहता है। इसी प्रकार आकाश-संचारी ज्योतिष्पिण्डों का भू-तल संचारियों पर भी क्रम से परिणाम होता है। सब से अधिक प्रभाव हम पर सूर्य का होता है। यद्यपि आंदोलितावस्था के कारण चंद्र का भी कम नहीं होता, सामुद्रिक ज्वार भाटे और वनोषधियों की सरस नीरसता पर उसका परिणाम सहज दिखाई पड़ता है। जितने स-पुष्प स्निग्ध वृक्ष होते हैं, वे चंद्र-प्रभा को पाकर ही पुष्प धारण करते हैं ज्यों-ज्यों सूर्य का तापमान बढ़ता जाता है वह स्निग्धता शुष्क होती जाती है और यथाक्रम सब रस की शुभ्रता रक्तिम रूप में परिणत होती जाती है। यह तो प्रभावशाली ज्योतिर्मय ग्रहों का प्रभाव है परन्तु अनेक छोटे ग्रह-नक्षत्र आदि भी हैं, जो अपने तीव्र प्रभाव का परिणाम स्थावर पदार्थों वस्तु-जातों पर छोड़े बिना नहीं रहते। मानव ही नहीं —प्रत्येक स्थावर-पदार्थों-वस्तुओं पर अपनी स्थिति—तत्वानुरूप और साम्राज्य का प्रभाव पड़ता ही है।

एक पत्थर —धातु या रत्न जिस ग्रह-नक्षत्र के प्रभाव में वह पोषित है उसी ग्रह या तदीय किरणांदोलित प्रभाव में उत्पन्न मानव से उसका

सम्बन्ध स्थापित हो जाने पर वह प्रभावक हो जाता है। उदाहरणार्थ कोई मानव कृष्णपक्ष के क्षीण चन्द्र में उत्पन्न हुआ है, और उसे चन्द्र किरणों की शारीरिक सरसता के लिए जितनी आवश्यकता थी, प्राप्त नहीं हुई है। तो वह मनस्तत्व से सम्बन्धित स्नायु पर बुरा प्रभाव उत्पन्न करने वाली सिद्ध होगी, फलत. जो मोती केवल चन्द्र-प्रभाव से ही सागर तल में जन्म लेता है, उस चन्द्रप्रभावहीन शरीर के साथ जुडा दिया जाए तो तदीय स्नायविक निर्बलता को यथाशक्ति प्रभावित करता रहेगा, और उस निर्बलता-जन्य विषमता पर वह प्रतिबन्ध करता रहेगा। चान्द्री-कला की क्षीण-मात्रा के उपलब्ध होने से शारीरिक अन्य धातुएँ विशेष प्रभावित हो जाती है, और विषमता ला देती है, किन्तु उसी तत्व के रत्न या पदार्थ की सह-योजना से वह निर्बलता कम भी हो जाती है, स्वाभाविक है कि चन्द्र की शीतलता के कम उपलब्ध होने से सूर्य तथा अन्य ग्रहों की तात्विक उष्णता विशेष होगी, और उसका आयुर्वेदिक उपचार मौक्तिक-भस्म हो सकता है, जो अन्दर से उसी धातु को प्रभावित करेगा, तो मोती का,—रत्न-रूप में-तन्मात्रा में धारण कर लेना भी अन्य तत्व-कृत विषम-प्रभाव को रोकेगा।

आकर्षण के नियमानुसार मानव-शरीर में जो धातु विकृत हो, उस धातु के स्थायित्व, और व्यवस्थित करने के लिए जिन रत्नों का प्रभाव उपयोगी हो सकता है, वे योजित किए जाने चाहिए। वेही वनौषधियाँ, वही धातु—जो उस तत्व की पोषिका है, उपचार में भी योजित की जाती है। आयुर्वेद का नियम भी तो यही है, एक प्रकार का ही विकार, विभिन्न-प्रकृति के शरीर में विविध-उपचार का कारण बन जाता है।

यह केवल इसीलिए कि जिन तत्व प्रभावों से शरीर निर्माण होता है, उनके अनुकूल प्रकृति की वस्तुएं ही उपयोगिता दे सकती हैं, उसी प्रकार की शक्ति या प्रभाव रखने वाले रत्न भी उपयोगिता रखते हैं।

जिस प्रकार शरीर की नाड़ी की गति विधि जानकर विकार विज्ञान किया जा सकता है उसी प्रकार सफल ज्योतिर्विज्ञानज्ञ भी ग्रहों की गति विधि प्रभाव को जानकर चिकित्सा में सफलता प्राप्त कर सकता है। ग्रहों का बिगड़ना शरीर-गत उससे प्रभावित धातु या तत्व का विकार सूचित करता है, उसी के अनुसार उन विकृत-तत्वों पर प्रभावक, या पूरक-रत्नों या उपायों की योजना की जाए तो लाभ भी मिल सकता है। और आराम की मर्यादा भी ज्ञात हो सकती है जीवन भर के लिए अथवा विकृत-तत्वों के लिए प्रभावोत्पादक रत्नों और उपचारों की भी योजना ज्ञात हो सकती है। अतएव जीवन में इस विज्ञान की कितनी आवश्यकता, एवं उपयोगिता है यह स्पष्ट ज्ञात होती है। किन्तु इस विज्ञान के गांभीर्यावगाहन की समता प्रथम अपेक्षित है। यद्यपि खनिज-पदार्थों में मूल्यवान् मणियों का स्थान उनके रचना सौष्ठव प्राचीनता और प्रभाव पर स्थिर किया जाता है। और वैज्ञानिक मान्यता है कि जिस समय पृथ्वी कम अंश में प्रवाही अवस्था में थी तब ऑक्सिजन और पानी के साथ कुछ धातुएं आक्साईड के संसर्ग में आकर रासायनिक क्रिया से पत्थर में परिणत हो गई। परन्तु सुप्रसिद्ध विद्वान् 'प्लेटो' का कहना है कि— 'कीमती पत्थर और रत्नों का उद्गम 'ग्रहों' से है। और विशेष प्रकार के आन्दोलन से उन पर ग्रहों का प्रभाव पड़ता रहता है। हीरा-नीलम-वैदूर्य आदि रत्नों के प्रभाव के

विषय में अनेक भले-बुरे प्रभाव डालने वाली किम्वदन्तियाँ जगविश्रुत है। कोहिनूर की कहानियों से तो अनेक पृष्ठ भरे हुए हैं, जौहरी तक अनेक रत्नों के प्रभाव के विषय में सतर्क अपने ग्राहक को अनुभव के पश्चात् स्वीकार करने की अनुमति देते हैं, नीलम शनि का रत्न माना जाता है। शनि के नाम से वैसे ही अनेक भय-भावनाएँ भावुको में ही नहीं, समझदारों के वर्ग में भी विस्तृत है, फिर 'नीलम' तो शनि-प्रभाव का केन्द्रित-रूप माना जाता है, जिस रत्न-या-धातु में उनके प्रभाव का केन्द्रीकरण हो जाए, वह सावधानी—और सशय की वस्तु हो जाना स्वाभाविक भी है। शनि के इस रत्न का असर शरीर में अस्थि-क्षय, स्नायुक्षीणता, लीव्हर की खराबी, सग्रहणी आदि उत्पन्न करने की क्षमता रखता है। उग्र ग्रहों के रत्नों का विषम प्रभाव यदि अनावश्यक, और प्रकृति-विपरीत धारण किए जाएँ तो सहज सम्भव हो जाता है। इनके प्रयोग भी जौहरी तक बहुत सावधानी से करने देते हैं, फिर ज्योतिर्विज्ञान सम्मत प्रयोग तो विशेष परीक्षण के पश्चात् ही सम्भव हो सकता है। गगनगामी-ग्रहों के जिन तत्वों के प्रभाव से जो रत्न विशेष प्रभावित हैं, उनका प्रयोग उस ग्रह के तत्व के अभाव में उत्पन्न मानव पर सावधानी पूर्वक किया जाए तो, उस धातु, या तत्व को वह पोषित करता है, और उपयोगी प्रमाणित हो जाता है। उस कमजोरी, अथवा विकृति को शमन भी कर देता है। रत्नों का उपयोग केवल शरीर को सजाने, अलकृत करने तक ही सीमित नहीं है। वह सर्वथा विज्ञान-सगत है, बशर्ते विचार पूर्वक प्रयुक्त हो। प्राय रत्नों का पारस्परिक प्रभाव नाशी सामर्थ्य, या विकारोत्पादिनी-शक्ति के अज्ञान-

बद्ध प्रयोग कर लिया जाता है और शरीर पर वह घातक परिणाम भी करता ही रहता है। प्रभावशाली-माणिक्य के साथ यदि शुक्र का रत्न हीरा जड़ा दें तो क्षण-भर यह लाल रंग सफेदी के साथ नयनाकर्षण का विषय भले ही बन जाए, परन्तु परिणाम में यह 'क्षय' जैसे विकार को पनपाता रहता है जो वैद्य-उपचारों की परम्परा के रहते हुए भी परिणाम शुभ नहीं होने देता इसी प्रकार पन्ने के साथ मोती, या नीलम के साथ माणिक, या मोती पन्ना या पुखराज के संग लहसुनिया आदि परस्पर विरोधी प्रभावकारी रत्नों का संयोग विभिन्न विकारों का जनक हो जाता है। उन पर कोई उपचार काम नहीं देते। बल्कि वे शरीर की तत्सम्बन्धित धातु, या तत्वों को यथाक्रम नष्ट करते ही जाते हैं। रत्नों को तत्परता पूर्वक उपयोग कर सकने वाले परिवारों में ही, प्रायः अज्ञान-वश, विपरीत प्रयोग-जन्य विकार,—यथा क्षय, अपस्मार, रक्तप्रकोप पाँडुरोग मधुमेह हिस्टेरिया मृगी आदि पारिवारिक रोगी बने हुए रहते हैं यदि इनका सविधान प्रयोग किया जाए तो उतने ही ये उपादेय हो सकते हैं परन्तु प्रयोग के पूर्व इस बात की परीक्षा अत्यावश्यक है कि कौनसा रत्न शुभ है या अशुभ किन दशाओं से यह उचित वजन का होकर भी दुष्परिणामकारी हो सकता है और किस प्रकृति प्रभाव में उत्पन्न होने के कारण किस प्रकार के बीमारी के लिये यह उपादेय बन सकता है। रत्नों की भी जातियाँ हैं वर्ण हैं, लक्षण हैं, और उनके लिए प्रभावकारी मर्यादा भी है जिससे वजन का रत्न किस प्रकृति प्रभावोत्पन्न व्यक्ति को लाभप्रद उपकारक हो सकता है, और कितना न्यूनाधिक वजन,

तथा किस जाति, किस वर्ण-लक्षण-युक्त रत्न किस व्यक्ति के लिये हिता-वह वन सकता है। और किस रूप रग का विपरीत। यह जानकारी वैज्ञानिक-विश्लेषण पूर्ण प्राप्त होने पर ही, उसकी योजना और उपाय-विधान किये जाएँ तो सहायक सिद्ध हो सकते हैं। रत्नों की विविध जातियाँ हैं, और विभिन्न-देशों में विभिन्न-प्रकृति भागों में उत्पन्न होने के कारण, उनके विविध प्रभाव भी। इसका परीक्षण, और सतुलन-सामंजस्य-साधना-सहज-बुद्धि गम्य विषय नहीं। खदानों से प्रादुर्भूत मणि-रत्नों के अतिरिक्त कुछ और प्रकार से रत्नों के जन्म की प्रसिद्धियाँ भी हैं, गज-मुक्ता, सर्प-मणि, मण्डूक-मस्तक जन्य, मत्स्य-मणि आदि, इनके अतिरिक्त सूर्यकान्त, चन्द्रकान्त, पारस-मणि आदि की ख्यातियाँ भी विशिष्ट प्रकार की है, और विविध जन-श्रुतियाँ भी हैं, सहस्रावधि प्रकारों के रहते हुए भी नव-रत्न, और उनके विविध भेदों के ८४ रत्नों की मर्यादा जगद्विख्यात है, जिस प्रकार समस्त आकाश में कोट्यावधि तारक-मण्डलों के रहते हुए भी प्रभाव विशेष वाले नव-ग्रहों, और नक्षत्रों की महत्ता मान्य कर ली गई है, उसी प्रकार नव-रत्नों की गणना विशिष्ट-कोटि में की जाती है, रत्नों की उत्पत्ति, जाति-वर्ण आदि गुण-दोषों के स्वतन्त्र ज्ञान-विज्ञान के लिये कोई ऐसा ग्रन्थ उप-लब्ध नहीं है, तथापि पुराणों में, आयुर्वेद ग्रन्थों में, और ज्योतिष में इनका अपने-अपने दृष्टिकोण से उचित वर्णन हुआ है। वैज्ञानिक प्रयोग योजना भी सूचित की गई है। वृहत्संहिताकार आचार्यप्रवर वराह-मिहिर ने वतलाया है कि—वल नामक राक्षस के शरीर से इन रत्नों की उत्पत्ति हुई है, कुछ लोग दधीची की अस्थि से भी रत्नों का जन्म वत-

जाते हैं और पृथ्वी के स्वाभाविक प्रभाव से भी पाषाणों में विविधता उत्पन्न हो जाती है—

> रत्नानि वज्रादीन्याहुर्विविधानन्ये वदन्ति जातानि,
> केचित् भुवः स्वाभावाद् वैचित्र्यं प्राहुरुपलानाम् ॥ —वरा०

इसी प्रकार अग्निपुराण में बतलाया है कि दधीची की अस्थि से जब अस्त्र निर्माण किया गया, तब जो सूक्ष्म-खण्ड जमीन पर गिरे उनसे चार खानों हीरे की उत्पत्ति हुई। इसी प्रकार कुछ पुराण मत यह है कि मन्दराचल द्वारा समुद्र मन्थन से जो अमृत उत्पन्न हुआ, उसके कण जो जमीन पर गिर गए, सूर्य किरण द्वारा सूखकर वे यथा प्रकृति रज-में मिश्रित होकर विविध वर्ण के रत्नों में रूपान्तरित हो गये। एक अन्य पुराणकार का मत है कि—एक बल नामक दैत्य था उसने देवों को परास्त कर दिया पर असुरों से देवों ने उसे पशुरूप धारण करने के लिए प्रेरित किया, वह यज्ञवश हो पशुत्व में परिवर्तित हो गया, तब देवों ने उसका वध कर दिया उसके विभिन्न अवयवों से विविध रत्नों* की उत्पत्ति हुई। यह वर्णन रोचक और यहाँ उपयोगी होगा इसलिये संक्षेप में दे देना उपयोगी होगा उस पुराण में कहा गया है कि—उस

---

* "परीक्षां विविधरत्नानां बलोनामासुरोऽभवत् ।
रत्नाख्या निर्मितास्तेन विशेषकैर्नरस्यवते ॥२॥
वर म्याचेन पशुतां याचित च सुरैर्मखे ।
तस्य तत्व निश्चयस्य विशुद्धेन च कर्मणा ॥
कामस्यावयवा' सर्वे रत्न बीजत्व मायमुः ॥४॥ —ग पुराण

बल दैत्य की अस्थियाँ जिस जगह जाकर पड़ी, उस प्रदेश में इन्द्रधनुष को चकाचौंध देने वाले हीरे उत्पन्न हो गए—

तस्यास्थिलेशों निपपातयेषु भुवः प्रदेशेषु कथंचिदेव,
वज्राणि वज्रायुध निर्जिगीषोर्भवन्ति नानाकृति मन्तितेषु ।।

मोती की उत्पत्ति का कारण बतलाते हुए लिखा है—

"नक्षत्र मालेव दिवो विशीर्णादन्तावलि स्तस्य महासुरस्य,
विचित्र वर्णेषु विशुद्ध वर्णापयः सुपत्युः पयसांपपात।"

उस असुर की दन्तपक्तियाँ जो आकाश तक फैल गई थी, समुद्रादि जगहों में पड़कर सीपियों में मुक्ता रूप बनगई, इनके सिवा—हाथी, बादल, सूअर, शंख, मछली, सर्प, सीप, और बाँस में भी वे मोती बन गई, परन्तु सीपी के मोती की विशेषता ही अधिक है—

द्विपेन्द्र जीमूत वराह शंख मत्स्यादि शुक्त्युद्भव वेणुजानि,
मुक्ताफलानि प्रथितानि लोके तेषां च शुक्त्युद्भव मेव भूरि।

आगे माणिक आदि के विषय में यथाक्रम इस प्रकार उत्पत्ति का स्वरूप बतलाया है—

पद्मराग-माणिक्य

सूर्य के किरणों से शोषित होकर उक्त राक्षस का रक्त आकाशगामी हो रहा था कि, रावण ने राह में रोककर उन्हें सिंहलद्वीप की एक नदी में-जिसके तट पर सुपारी के पेड़ हैं—डालने को विवश किया, तभी से उस नदी का नाम भी रावण गंगा पड गया, और उसमें पद्मराग (माणिक्य) उत्पन्न होने लग गए।

दीवाकरस्तस्य महामहीम्नो महासुरस्योत्तम रक्तबीजम्।
असृग्गृहीत्वा, चरितु प्रतस्थे "

सिंहलकी चारुनितम्ब बिम्ब विक्षोभिता गाय महा हृदायाम।
पुन्नागवद्ध तट ह्रयार्या मुमोच सूर्यः सरितुत्तमायाम्॥
येतु रावण गंगायां जायन्ते कुरुविन्दकाः
पद्मराग घर्न राग बिभ्राणास्फटिकार्चिषः।"

मरकत-पन्ना

नागराज वासुकी, दैत्य के पित्ते को लेकर आकाश से चले जा रहे थे कि रास्ते में गरुड़ ने हमला किया, तत्काल तुरुष्क की कलियों से सुरभित माणिक्य पर्वत की उपत्यका में उस पित्त को छोड़ देना पड़ा, वहीं वह पन्ने की खदान बन गई।

दानवाधिपतेः पित्तमादाय भुजगाधिप
सहसैव मुमोच तत्कवीन्द्र सुरसाम्यक तुरुष्क पाद पायाम्,
वरमाणिक्य गिरे उपत्यकायां

इन्द्र-नील

और रावण के दोनों नेत्रों के भी उसी देश में गिर जाने के कारण सागर-तट की उस भूमि पर इन्द्रनील उत्पन्न हो गए।

तत्रैव सिंहल वधू कर पल्लवाग्र
विस्तारिणी जलनिधेरुपकच्छ भूमि।
सान्द्रेन्द्र नीलमणि रत्नवती विभाति

वैदूर्य (लहसुनिया)

उसी दैत्य के केवल घन गर्जन से विविध रंगों के वैदूर्य उत्पन्न हो गए।

निर्दोष कम्पादिविभस्य नादात् वैदूर्यं मुत्पन्नमनेक वर्णम्
(ग पु अ ७१)

पुष्पराग (पुखराज)

उसकी चमड़ी के हिमालय पर गिर जाने से पुखराज की उत्पत्ति हुई।

पतिताया हिमाद्रौतु त्वचस्तस्य सुरद्विष·।
प्रादुर्भवन्ति ताभ्यस्तु पुष्परागा महागुणा.।

वैक्रान्त (कर्केतन)

दैत्य के नाखून हवा से उड़कर कमलवन में जा गिरे, वहां वे कर्केतन बन गए।

वायुर्नखान्दैत्यपते गृहीत्वा चिक्षेप सत्पद्मवेनपु हृष्ट
तत प्रसूत पवनोपपन्नं कर्केतन पूज्यतमं पृथिव्याम्।

(ग० पु० अ० ७५)

गोमेद (भीष्म रत्न)

वलराक्षस के वीर्य से गोमेद की उत्पत्ति हुई, जो हिमालय के उत्तर भूभाग में गिरा था।

हिमवत्युत्तरदेशे वीर्यं पतितं सुराद्विषस्तस्य संप्राप्तं·
भीष्मरत्नानाम्।

लाजावर्तादि (पुलकादिक)

उत्तर देशकी जिन सुन्दर नदियों, एव स्थलातरो में जाकर जो अंगाश वाहु-भागस्थ गिर गए, वहाँ गुजा, सुरमा, मधु, कमलनाल के वर्णवाले गधर्व अग्नि, एवं केले के समान दीप्तिमय पुलक रत्न उत्पन्न हो गये।

पुण्येषु पर्वतवरेषु च निम्नगासुस्थानान्तरेषु च तथोत्तर देशगत्वात्
संस्थापिता स्वतस्तु बाहुगवेऽप्रकाशं द्वारार्णवागवरमेककाकाद्यो
गुंजाजन और मृगामवर्णा गंधर्व वन्हि कदली सदृशाव भासा।
एते प्रशस्ता पुलका प्रसूताः। —(ग० पु अ० ७७)

अकीक (रुधिराक्ष)

अग्नि ने उस असुर के रूप को नर्मदा में ले जाकर प्रक्षिप्त किया था, इस कारण उसमें रुधिराक्ष मणियाँ बन गई।

'हुतभुग्रूप मादाय दानवस्य यथेप्सितम् नर्मदायां निचिक्षेप।
रुधिराक्षय रत्नमुद्भूत्य तस्य खलु सर्वसमस्त वर्णम्—'॥

मूंगा (प्रवाल-विद्रुम)

और आंतों से मूंगे की उत्पत्ति हुई यह जहाँ-जहाँ केरलादि देशों में डाली गई वहीं वहीं प्रवाल बन गई—

'आदायान्त्रे तस्यात्र असुरस्य केरलादिषु'—विद्रुमासुमहागुणा।
(अ ८)

स्फटिकादि-मणि

इसी प्रकार कावेरी विन्ध्य यवन, चीन, नेपाल आदि देशों में जहाँ उस असुर की चर्बी ले जाकर डाली गई, वहाँ-वहाँ स्फटिकादि मणियाँ बन गई।

कावेर, विन्ध्य-यवन चीन नेपाल भूमिषु।
लांगली कीकटन्मेदो दानवस्य प्रयत्नतः॥
— उत्पन्नं स्फटिकं तत्र॥
(ग पु अ ८०)

इस तरह रत्नों की उत्पत्ति उस वलासुर के जिस-जिस अवयव से हुई उसके पौराणिक विवरण को लक्ष्य में रखते हुए, 'अनुभूत योगमाला' के विद्वान् वैद्यजी ने अनुभूत प्रयोग की दृष्टि से एक उपचार-तालिका भी रत्नों के लिए दी है, उसे यहाँ उद्धृत करना अस्थानीय नही होगा।

रत्न	उत्पत्ति का अंग	उपचार प्रयोग
१ हीरा	हड्डी से	हड्डी के रोगों को नष्ट करता है
२ मोती	दांतों से	पॉयरिया आदि रोग नाशक
३ माणक	रक्त से	रक्त रोग नाशक, रक्त वर्धक
४ पन्ना	पित्ते से	पित्त प्रकोप में लाभप्रद
५ इन्द्रनील	नेत्रों से	नेत्र रोग के लिये हितावह
६ लहसूनिया	नाद (स्वर) से	स्वरभंग में लाभप्रद
७ पुखराज	चमड़ी से	कुष्ठादि चर्म रोगमें हितावह
८ वैक्रान्त	नाखून से	नख दोष हारक
९ गोमेद	वीर्य से	प्रमेहादि वीर्य विकार नाशक
१० लज्जावर्त	तेज से	पाडू में उपयोगी, नेत्र तेजप्रद
११ अकीक	रूप से	कांतिप्रद, सिध्यादि में उपकारक
१२ स्फटिक	मेद चर्वी से	कार्श्य, क्षय, प्लीहा, आदि में उपयोगी

ग्रहों की दृष्टि से नवरत्नों की योजना इस प्रकार की जाती है :—

सूर्य—	माणिक्य,	Ruby.
चन्द्र—	मोती,	Pearl
मगल—	प्रवाल,	Coral.

बुध—	पन्ना,	Emerald
गुरु—	पुखराज,	Topaz.
शुक्र—	हीरा	Diamond
शनि—	नीलम	Sopphire.
राहु-केतु—	लाजावर्त	
राहु—	लहसुनिया	Cats eye.
केतु—	गोमेद,	Zircon.

सर्व साधारण जनता उपरोक्त कुछ प्रसिद्ध रत्नों से ही परिचित है, इनमें भी विशेष ख्याति और प्रभाव की दृष्टि से 'नव' ही उपरत्न हैं परन्तु इनके उपरत्नों के रूपमें ८४ की और परिगणना की जाती है। जिनका परिचय नवरत्नों के साथ रंग-नाम सहित निम्नलिखित है :—

१ माणक—लालरंग रत्नशिरोमणि सूर्य से प्रभावित।

२ हीरा—सफेद पीला नीला आदि रंग शुक्र से प्रभावित।

३ पन्ना—हरा रंग बुध से प्रभावित।

४ नीलम—गहरा तथा साधारण आसमानी—शनि प्रभावित।

५ मोती—सफेद पीला, लाल आदिरंग चन्द्र से प्रभावित।

६ लहसुनिया—लहसुन की तरह रंग राहु-प्रभावित।

७ मूंगा—लाल-सिंदूरिया-रंग मंगल से प्रभावित।

८ पुखराज—पीला सफेद पीला गुरु से प्रभावित।

९ गोमेदक—लाल धूमिल रंग केतु प्रभावित।

१ लालड़ी—गुलाब की तरह।

११ पिरोजा—आसमानी रंग मुसलमानों में प्राय पहना जाता है।

१२ एमेनी—गहरा लाल स्याही रंग।
१३ जवर जद (सब्जी निर्मल रंग)
१४ आपेल—विविध वर्ण।
१५ तुरमली—पुखराज की जाति-पाच प्रकार का रंग।
१६ नर्म—पीलापन लिये लाल रंग।
१७ सुनेला—सुवर्ण में धूमिल वर्ण।
१८ धुनेला—उक्त वर्ण में जराही अन्तर।
१९ कटेला—बैंगनिया रग।
२० सितारा—विविध वर्ण पर सुवर्ण-विन्दु।
२१ स्फटिक—विल्लोर-सफेद।
२२ गोदन्त—साधारण पीत, गाय के दन्त की तरह।
२३ नामड़ा—स्याही वाले लाल रग।
२४ लुधिया—मंजीष्ठ के तरह लाल।
२५ मरियम—सफेद-पॉलिश्ड।
२६ मकनातीस—धूमिल श्वेत, चमकदार।
२७ सिंदूरिया—श्वेत-रक्त, मिश्रवर्ण।
२८ लिलि—थोड़ा जरद नीलम की हल्की जाति का।
२९ वेरूज—सब्ज-हल्का।
३० मरगज—आव रहित पन्ने की जाति का
३१ पितोनिया—हरे रग पर लाल विन्दु।
३२ बँसी—हल्का-हरा पॉलिश रहित।
३३ दुरेंनफज—कच्चे धान्य की तरह रंग।

३४ सुलेमानी—काले रंग पर सफेद रेखा।
३५ अलेमानी—भूरे रंग पर रेखा।
३६ जबेमानी—जर्दी लिए भूरा रंग, रेखा सहित।
३७ सलोर—हरा रंग भूरी रेखा।
३८ दुरचापा—गुलाबी पीत मिश्रित।
३९ बहवा—गुलाबी रंग पर बिन्दु।
४० लालाबर्द—(लालबहर) लाल रंग सोने के बिन्दु।
४१ कुदरत—काला रंग सफेद-पीले बिन्दु।
४२ बाबरी—कालापन लिए सोनेला।
४३ चीती—सुनहरी बिन्दु, सफेद रेखा।
४४ संगेसम—अंगूरी, और सफेद, कपूरी।
४५ मारबर—मोर की तरह लाल सफेद रंग मिश्र।
४६ लोस—मारबर की भाति की भूमिका।
४७ हालाफिरत—पिस्ते की तरह हल्का रंग।
४८ कसौटी—कालारंग (शालिग्राम की तरह)
४९ हारकना—दालचीनी का रंग, तस्बीह (माला में काम देता है)।
५० हवीजुल-बहार—हरे-पीलेरंग सहित, जल में जन्म।
५१ हालन—मटमैला गुलाबी—हिलता है।
५२ सिजरी—सफेद के ऊपर श्याम वर्ण वृक्ष का आभास।
५३ मुर्वनज्फ—सफेद रंग में जाली की तरह रेखाएं।
५४ कहरवा—पीला रंग (कपूर की भाति का)।
५५ झरना—मटिया रंग पानी देने से सारा पानी झर जाता है।
५६ संगे बसरी—सुरमें में उपयोगी होता है।
५७ दोम्का—पीत मसूक सफेद, दांत की तरह।
५८ मकड़ी—इसी जन्तु भाति का रंग और जाली।

५६ संखिया—शंख की तरह सफेद ।
६० गुदड़ी—प्रायः फकीरों के उपयोग में आता है ।
६१ कांसला—हरित-श्वेत वर्ण ।
६२ सिफरी—हरित-आसमानी सा ।
६३ हदीद—भूरेपन सहित काला रंग ।
६४ हवास—सुनहरा-हरित रंग ।
६५ सीगली—काला-लाल मिश्र ।
६६ ढेडी—काला, खरल-कटोरी में उपयुक्त ।
६७ हक़ीक—अनेक रग-लकड़ी की मूठ में ज्यादा उपयोगी ।
६८ गौरी—रत्न के तौल के लिये उपयोगी ।
६९ सीया—काला रग-मूर्तियों में उपयोगी ।
७० सीमाक—लाल-पीला, और मटमैला, सफेद-पीले, गुलावी छींटे भी ।
७१ मूसा—सफेद-मटिया खरलें वनती है ।
७२ पनघन—थोड़ा हरा-काला ।
७३ आमलिया—कालापन एव गुलावीपन ।
७४ डूर—कत्थई रग ।
७५ तिलवर—काले रंग पर सफेद छींटा ।
७६ खारा—हरेपन सहित काला ।
७७ सीरखड़ी—मटिया रग घाव पर उपयोगी ।
७८ जहरीमोरा—सफेदी सहित हरा, (विषहर)
७९ रात—लाल, या लहसूनी रंग, (रात्रि के ज्वर का नाशकारी है)
८० सोहन मक्खी—नीला रंग ।
८१ हज़रते ऊद—सफेद मिट्टी के रग ।

८२ सुरमा—काला रंग ।

८३ पायजहर—बांस की तरह रंग ।

८४ पारस—काला रंग सोना बनता है ।*

संस्कृत के विभिन्न-ग्रन्थों में रत्नों के लिये यत्र-तत्र विवरण बिखरा पड़ा है उनमें और भी रत्नों के नाम परिचय आदि का मिलना सम्भव है । हाँ, अनेक रत्नों को उपचार में उपयोगी समझ आयुर्वेदविज्ञान विदों ने विभिन्न विकारों के लिए प्रयुक्त किया है, उनके गुण दोष और प्रकृति का विश्लेषण भी किया है ।

परन्तु रत्नों का वैज्ञानिक उपयोग, और ग्रहों से उनका सम्बन्ध तथा उनकी शारीरिक उपयोगिता के विषय में प्रत्येक रत्नों को लेकर विचार विवेचन करने की आवश्यकता है रत्नों के जन्म से जिस प्रकार ग्रहों का सम्बन्ध है उसी प्रकार शरीरगत तत्वों से भी उनका सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है और परिणाम में वे उचित उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं । रत्नों और ग्रहों-धातुओं को लेकर हमने यथा पर्याप्त अपरिमित प्रयोग किए हैं और उनसे अधिकांश लाभ ही हुआ है । विविध रत्नों के विभिन्न प्रयोग और उनके परिणामों की गाथा अत्यन्त मनोरंजक है । हमारा अपना तो यह विश्वास है कि जिस ग्रह के प्रभाव से जो रत्न, अथवा धातु-प्रभावित है उसका प्रयोग उस ग्रह के विकृत समय में विचार-परीक्षण पूर्वक किया जावे तो आश्चर्यजनक परिणामकारी सिद्ध होता है । अवश्य ही उसका प्रयोग और परीक्षण शरीर प्रकृति के ग्रह जन्य प्रभाव के न्यूनाधिक स्वरूप में निर्णय के निश्चय के पश्चात् ही रत्न धातु के तत्व तत्तुलन-दृष्टि से किया जाना ही उपयोगी हो सकता है । इसमें सूक्ष्मावलोकन क्षमता की अपेक्षा है ।

'रत्नं समागच्छतु काञ्चनेन' इस सूक्ति में यही रहस्य निहित है ।

---

* यह सूची एक अज्ञात-पत्र के सुविज्ञांश से प्राप्त है ।

चिकित्सा में रत्नों का उपयोग

[श्री राधाकृष्ण नेवटिया]

रत्नों का स्थान महत्त्वपूर्ण है। हमारे वैद्यक शास्त्र के ग्रन्थों में औषधि के रूप में रत्नों के व्यवहार की विधि दी गई है। रत्नों के भस्म बनाने की बहुत पुरानी प्रथा है। इन रत्न भस्मों का साधारण और कठिन रोगों में उपयोग होता है।

मिश्र के फरांव टूटनखामेन के कब्र से जो रत्न निकाले गये उनका खोदनेवालों और आविष्कार पर बहुत बुरा असर पड़ा। कुछ लोगों का कहना है कि लार्ड कारनारवन और उनके साथियों पर जो विपत्तिया आ पड़ी थीं उसका मूल कारण इन रत्नों का निकालना है।

हिन्दुओं के कूर्म पुराण का तो यह कथन है कि सात ग्रह इन सात ज्योतियों की ही घनीभूत अवस्थाएँ हैं। और इन ग्रहों का पोषण भी इन ज्योतियों से होता है। इन्द्रधनुप में ये सात रग आपको देखने को मिलेंगे और ऐसा माना गया है कि मानव शरीर की रचना भी इन सात ज्योतियों से ही हुई है। एक पक्ष का कहना है कि सृष्टिकर्ता जगदीश्वर के दिव्य देह से ज्योतिया निकली हैं और उस ज्योति से सर्व चराचर विश्व का सृजन पालन होता है और इसके अभाव से ही संहार होता है। इस से तो आज का विज्ञान भी सहमत है कि रग चिकित्सा से अनेक प्रकार के रोग दूर होते हैं और यह अनुभव सिद्ध है।

रत्नों में भी वही रग पाये जाते हैं जिसके द्वारा रोगों का नाश होता है। ऐसे तो अनेक रत्न हैं और सभी रत्नों में रग पाये जाते हैं। पर सात ऐसे रत्न हैं जिनमें एक ही तरह का एक रत्न में रग होता है, बाकी रत्नों में मिश्रित रग मिलेंगे, इसलिये सात तरह के रत्नों का

महत्त्व शरीर के प्रायः सब रोगों को दूर करने में है। ज्योतिष शास्त्र में रत्नों के उपयोग को उच्चतम स्थान दिया गया है। स्वास्थ्य लाभ के लिये इन रत्नों का व्यवहार राजा महाराजा से लेकर गरीब तक शरीर में तावीज के रूप में अंगूठी के रूप में गले में पहनने के रूप में करते हैं।

आयुर्वेद में प्रधान महान रत्नों का औषधियों में प्रयोग भस्म के रूप में होता है। भस्म के अतिरिक्त रत्नों को औषधियों के रूप में प्रयोग करने का और कोई अच्छा तरीका आयुर्वेद में नहीं बताया है। हजारों वर्षों से वैद्य लोग कीमती रत्नों को जलाकर भस्म बनाते आये हैं। कमी कभी रत्न इस काम में लाये जाते हैं। इनमें हीरा पन्ना मोती चुन्नी, प्रवाल, स्फटिकपुखराज, नीलम आदि हैं। जटिल और परिश्रमसाध्य प्रक्रियाओं से वैद्य लोग बनाते हैं उसका मुख्य कारण यही है कि इन रत्नों में रोगों को दूर करने की असीम शक्ति भरी पड़ी है। आयुर्वेद के कथनानुसार जो कि सत्य है इनके गुण जानकारी के लिये जानना आवश्यक है। आगे आगे चल कर हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकेंगे कि इन रत्नों का उपयोग बड़े ही सरल तरीके से करके अस्वस्थ प्राणी मात्र की सेवा कर सकेंगे।

१ चुन्नी भस्म

आयुर्वेद में चुन्नी भस्म दीर्घायु प्रद माना गया है। इसमें वात पित्त, कफ को शान्त करने की शक्ति है और यह सब रोग दर्द उदर शूल पीड़ा वात वातरोग कोष्ठबद्धता आदि को आराम करती है। चुन्नी भस्म शरीर के अंग-प्रत्यंग के कष्ट को भी दूर करती है।

२ मुक्ता भस्म

मुक्ता भस्म मीठा ठंडा आंखों के लिये उपकारक, शक्तिवाला, विशेषतः औरतों के सौन्दर्य की वृद्धि करनेवाला और आयु को बढ़ाने

वाला होता है। मुक्ता भस्म से क्षय रोग, कृशता, पुराना ज्वर, सब तरह की खाँसी, श्वासकष्ट, दिल धडकना, रक्तचाप, हृदयरोग, जीर्ण आदि दूर होते हैं।

३ प्रवाल भस्म

प्रवाल भस्म कफ और पित्तजनित रोगों को दूर करती है। सौन्दर्य-वर्द्धक है। कुष्ट, खाँसी, अग्निमान्द्य, अजीर्ण, कोष्ठवद्धता, ज्वर, उन्माद, पांडु आदि की यह उत्कृष्ट औषधि है।

४ पन्ना भस्म

पन्ना भस्म मीठा, ठढा, मेदवर्द्धक है। इस से क्षुधा वढती है। अम्लपित्त और जलन दूर होती है। मिचली और वमन, दमा, अजीर्ण, ववासीर, पांडु और हर प्रकार का घाव आदि अच्छे होते हैं।

५ श्वेत पुखराज भस्म

श्वेत पुखराज भस्म विष और विषाक्त वीजाणुओं की क्रिया को नष्ट करता है। मिचली और वमन को रोकता है। वायु और कफ के रोगों को नष्ट करता है। अग्निमान्द्य, अजीर्ण, कुष्ठ और बवासीर में भी फायदा पहुँचाता है।

६ हीरक भस्म

हीरक भस्म से क्षय रोग, भ्रान्ति, जलोदर, मधुमेह, भगन्दर, रक्ताल्पता, सूजन आदि रोग दूर होते हैं। यह आयु की वृद्धि करती है और चेहरे के सौन्दर्य को बढाती है।

७ नीलम भस्म

नीलम भस्म वहुधा शनि से उत्पन्न रोगों में व्यवहार किया जाता है। इससे गठिया, सधिवात, उदरशूल, स्नायविक दर्द, भ्रान्ति, मृगी, गुल्मवायु, वेहोशी आदि रोग दूर होते हैं।

वैद्यक शास्त्र में ये भस्में अलग-अलग प्रयोग की जाती हैं और इनका मिश्रण के रूप में भी प्रयोग होता है।

वैद्यक शास्त्र में इन कीमती रत्नों को भस्म बनाकर नष्ट कर दिया जाता है। भस्म बनाने के लिये नाना तरह के तरीकों का इस्तेमाल किया जाता है। रत्नों का जो असली स्वरूप गुण है वह भस्म बनाने पर उसमें कितने गुण निकल जाते होंगे और कितने मय रूप में प्रवेश करते होंगे यह कहना कठिन है। पर यह तो मानना उचित होगा कि असली रूप तो नहीं रहता है।

रत्न चिकित्सा में रत्नों के तोड़फोड़ की आवश्यकता नहीं है। रत्न ज्यों-के-त्यों रहेंगे। उन्हीं रत्नों का उपयोग आप सैकड़ों-हजारों वर्ष कर सकेंगे। उसके बाद भी रत्नों का स्वरूप ज्यों का त्यों बना रहेगा। इन रत्नों के द्वारा बनाई हुई औषधि, शायद औषधि शब्द व्यवहार करना गलत है बनाये हुए जल या अलकोहल के उपयोग से हजारों रोगियों को अनेक रोगों से मुक्त कर सकते हैं। कीमत की दृष्टि से कहना चाहिए कि आज तक जितने प्रकार की औषधियाँ व्यवहार में लाई जाती हैं सभी से सस्ती हैं। केवल एक बार असली रत्नों के खरीदने में अवश्य अधिक रुपये खर्च करने पड़ते हैं। उसमें भी कम खर्च करके काम निकाला जा सकता है।

प्राकृतिक चिकित्सा में अभीतक रत्न चिकित्सा का समावेश नहीं हुआ इसका मुख्य कारण इस ओर प्राकृतिक चिकित्सकोंका ध्यान नहीं गया और न खोज ही हुई है। प्राकृतिक चिकित्सा में रंग चिकित्सा या वर्ण चिकित्सा द्वारा तो उपचार किया जाता है; किन्तु रत्न चिकित्सा, रंग चिकित्सा या वर्ण चिकित्सा का सजातीय है क्योंकि दोनों प्रणालियों में पीड़ित और रुग्ण मनुष्यों को आराम करने के लिये भिन्न रंगों के अन्तर्गत शक्ति का प्रयोग किया जाता है। वर्ण चिकित्सा में सूर्य या

विजली के प्रकाश से रग की शक्तियों की उत्पत्ति होती है। रत्न चिकित्सा में भी इन सात रत्नों से सात रगों की शक्ति उप्पन्न होती है।

इन्द्र धनुप में व्यजित सात रग हैं और उन सात रगों मे तीन देवी गुण हैं, जैसे .

१ सर्वज्ञता   ३ सर्व सामर्थ्य   ३ सर्व व्याप्ति

इसी तरह सात रत्नों में भी उक्त तीन गुण है। रग अपनी सर्व-सत्ता के कारण रोग को पहचान लेते हैं, अपनी सव सामर्थ्य से रोग को आराम करते हैं और अपनी सर्व व्याप्तिता के कारण सम्पूर्ण शरीर के करोड़ों कोशों और ततुओं में फैल जाते हैं।

आयुर्वेद-शास्त्र के अनुसार शरीर के रोगों को परखने के लिये जव वैद्य या डाक्टर नाडी की परख करते हैं तो वैद्य वात, पित्त और कफ के द्वारा निदान करते हैं और डाक्टर नाड़ी की गति देखकर निदान करते हैं। रत्न चिकित्सा भी आयुर्वेद-शास्त्र को मानते हुए वात, पित्त और कफ को आधार मानती है क्योंकि रत्नों में जो रग है उनका सम्बन्ध प्रत्येक रग अपना स्वभाव रखता है और उसी के अनुसार वह रोगों को दूर करता है। पाठकों की जानकारी के लिए सक्षेप में रगों के गुण दिये जा रहे हैं।

चुन्नी—यह लाल रग वितरण करती है। यह उष्ण शक्ति या पित्त है जो ऋणात्मक गुणयुक्त है।

मोती—मोती की नारगी विश्वज्योति है। इससे कफ उत्पन्न होता है जिसका गुण धनात्मक है।

प्रवाल—प्रवाल भी चुन्नी के समान पित्त है।

पन्ना—पन्ना हरे रग की विश्वकिरण प्रसारित करता है और धनात्मक है।

श्वेत पुखराज—श्वेत पुखराज आसमानी किरण छोड़ता है। इसका गुण उदासीन है।

हीरा—हीरा नीला रंग छोड़ता है जो कि कफ की शक्ति रखता है जिसमें धनात्मक और संयोजन का गुण है।

नीलम—नीलम बैंगनी रंग छोड़ता है। इन्द्र धनुष के समान आसमानी रंग का गुण रखता है। इसमें वायु की शक्ति है।

रत्नों की आलोचना यह तालिका नीचे दी जा रही है :

रत्न	त्रिदोष	किरणशक्ति	रंग
चुन्नी	पित्त	ऋणात्मक	लाल
मोती	कफ	धनात्मक	नारंगी
प्रवाल	पित्त	ऋणात्मक	पीला
पन्ना	कफ	धनात्मक	हरा
श्वेत पुखराज	वायु	उदासीन	आसमानी
हीरा	कफ	धनात्मक	नीला
नीलम	वायु	उदासीन	बैंगनी

अब हमारे कथन के अनुसार यह तो स्पष्ट हो ही गया है कि रोगों का प्रधान कारण किरण रंग की भूख है। इस भूख को मिटाना ही रत्न चिकित्सा का प्रधान काम है। जब रत्न इस रंग की कमी को पूरा करते हैं तो सातों मनुष्य शरीर कोष और तंतुओं को पर्याप्त पुष्टि हो जाती है और वे अपना खोया हुआ स्वास्थ्य पुनः प्राप्त कर लेते हैं। रत्न किरणरंग का अक्षय भंडार है। इस रंग के सुराधार या अलकोहल में एकत्रित कर के वैज्ञानिक तरीके से सूक्ष्म रूप में जनता के पास पहुँचाया जाता है।

॥ अर्हम् ॥

परमजैन श्रीचन्द्राङ्गज ठक्कुर फेरू विरचित।

प्राकृतभाषाबद्धा

रत्नपरीक्षा

सयलगुणाण निवास नमिउ सव्वन्न तिहुयणपयास।
सखेवि परप्पहियं रयणपरिक्खा भणामि अहं ॥ १ ॥
सिरिमाल कुलुत्तसो ठक्कुर-चदो जिणिंदपयभत्तो।
तस्सागरुहो फेरू जपइ रयणाण माहप्प ॥ २ ॥
पुव्वि रयणपरिक्खा सुरमिति-अगत्थ-बुद्धभट्टेहिं।
विहिया त दट्ठूंण तह बुद्धी मडलीय च ॥ ३ ॥

---

१ समस्त गुणो के निवास, त्रिभुवन प्रकाशक सर्वज्ञ को नमस्कार करके मैं अपने व पराये हित के लिए सक्षेप से रत्न-परीक्षा कहता हूं।

२ श्रीमाल वशोत्पन्न, जिनेश्वर—चरणो के भक्त ठक्कुर चद का पुत्र फेरू रत्नों का माहात्म्य वर्णन करता है।

३ पहले सुरमित्र (वृहस्पति) अगस्त्य और बुद्धभट्ट ने रत्न-परीक्षा (ग्रथ) बनाया उसे देखकर तथा मडलीक (जौहरी) बुद्धि से—

अल्लावदीण कलिकाल-चक्कवट्टिस्स कोसमज्झत्थं ।
रयणायरुव्व रयणुच्चयं च निय-दिट्ठिए दट्ठुं ॥ ४ ॥

पच्चक्खं अणुभूयं मंडलिय-परिक्खियं च सत्थायं (इ) ।
नाउ रयणसरूवं पत्तेयं भणामि सव्वेसिं ॥ ५ ॥

लोए भणंति एवं आसी बलदाणवो महाबलवं ।
सो पत्तो अन्न दिणे सग्गे इंदस्स जिणणत्थं ॥ ६ ॥

सहि पत्थिओ सुरेहिं जन्ने अम्हाण तु पसू होह ।
तेण पसन्ने भणियं भविस्सोहं कुणसु नियकज्जं ॥ ७ ॥

सो पसु वहिय सुरेहिं तस्स सरीरस्स अवयवाओ य ।
संजाया वर रयणा सिरि निलया सुरपिया रम्मा ॥ ८ ॥

---

४ कलिकाल चक्रवर्ती सुल्तान अलाउद्दीन के खजाने में रत्नाकर की तरह स्थित रत्नों को अपनी आँख से देखकर,—

५ प्रत्यक्ष अनुभव कर, जौहरियों द्वारा परीक्षित व शास्त्रों के अनुसार सब रत्नों का स्वरूप ज्ञात कर कहता हूँ ।

६ लोगों में ऐसा कहते हैं कि बल नामक एक महा बलवान दानव था । एक दिन वह इन्द्र को जीतने के निमित्त स्वर्ग में गया ।

७ देवताओं ने उससे 'हमारे यज्ञ में पशु बनो' इसकी प्रार्थना की । उसने संतुष्ट होकर कहा—मैं हुआ, तुम अपना काम करो ।

८ देवताओं द्वारा पशुवध होने पर उसके शरीर के अवयवों से उत्तम रत्न हुए जो देवों को प्रिय, सुन्दर और लक्ष्मी के निवास स्थान हैं ।

अत्थिस्स जाय हीरय मुत्तिय दताउ रुहिर माणिक्क ।
मरगय मणि पित्ताओ नयणाओ इदनीलो य ॥ ९ ॥

वइडुज्जो य रसाओ वसाउ कक्केयगं समुप्पन्न ।
ल्हसणीओ य नहाओ फलिय मेयाउ सजाय ॥ १० ॥

विद्दुमु आमिस्साओ चम्माओ पुसराउ निप्पन्नो ।
सुक्काउ य भीसम्मो रयणाण एस उप्पत्ती ॥ ११ ॥

एव भणति एगे भू [मि] विक्कार इम च सव्व च ।
जह रुप्प कणय तबय धाऊ रयणा पुणो तह य ॥ १२ ॥

तट्ठाणाओ गहिया निय निय वन्नेहिं नवहि सुगहेहिं ।
तत्तो जत्थ य जत्थ य पडिया ते आगरा जाया ॥ १३ ॥

---

९ हड्डियो से हीरे, दाँतो से मोती, रुधिर से माणिक्य, पित्त से मरकत मणि, आखो से इन्द्रनील ।

१० रससे वैडूर्य, मज्जा से कर्केतन उत्पन्न हुए। नखो से ल्हसिणिया और मेद से स्फटिक पैदा हुए।

११ मास से विद्रुम, चर्म से पुखराज, शुक्र से भीसम (भीष्म) निष्पन्न हुए यह रत्नो की उत्पत्ति है ।

१२ कुछ ऐसा कहते हैं, ये सब पृथ्वी के विकार हैं। जैसे सोना, चादी, तावा आदि धातु हैं वैसे ही रत्न भी हैं।

१३ उस स्थान से अपने अपने वर्ण के अनुरूप नवो सुग्रहों ने (रत्नोको) ग्रहण किया फिर वे उनसे जहा जहाँ पड गये वही उनके आकर (खान) हो गए।

सूरेण पउमरायंमुत्तियं चंदेण विद्दुमं भूमे।
मरगयमणीव बुद्धे जीवेण य पुसरायं च ॥ १४ ॥

सुक्केण गहिय वज्जं सणिंदनीलं समेण गोमेयं।
केउण य वेडुज्जं मुक्का तत्येव सेस गहिं ॥ १५ ॥

इय रयण नव गहाण अंगे जो धरइ सच्च सीछ जुओ।
तस्स न पीडंति गहा सो जायइ रिद्धिवंतो य ॥ १६ ॥

पुणु वाइ सत्ये भणिया अदोस अइमुल्लया गुणड्ढा य।
ते रयण रिद्धिजणया सदोस धण-पुत्त-रिद्धि हरा ॥ १७ ॥

---

१४ सूर्य ने पद्मराग, चन्द्रमा ने मोती, मंगल ने मूंगा बुध ने मरकत मणि (पन्ना), बृहस्पति ने पुखराज,

१५ शुक्र ने हीरा शनि ने इन्द्रनील, राहु ने गोमेद, केतु ने वैडूर्य लिये अवशिष्ट उन्होंने यहीं छोड़ दिये।

१६ इन नवग्रह के रत्नों को जो सत्यशील और गुणयुक्त पुरुष धारण करता है उसे ग्रह पीड़ा नहीं देते और वह धनवान हो जाता है।

१७ फिर भी शास्त्रों में कहा है कि—जो दोष रहित अत्यल्प मोले और गुणाढ्य रत्न है वे ऋद्धिदायक और सदोष रत्न धन पुत्र और ऋद्धि को हरण करने वाले हैं।

जइ उत्तिमरयणतरि इक्कोवि [स] दोसु कूड्ड समलु हवे ।
ता सयलउत्तिमाण कतिपहाव हणेइ धुव ॥ १८ ॥
भणिया मूलुप्पत्ती अओय वुच्छामि आगराईणि ।
वन्न गुण दोस जाई मुल्ल सव्वाण रयणाण ॥ १६ ॥

वज्रं जहा :—

हेमंत सूरपारय कलिंग मायग कोसल सुरट्ठे ।
पंडुर वि[दि]सए सुतहा वेणु नई वज्जठाणोइं ॥२०॥
तव सिय नील कुक्कुस हरियाल सिरीस कुसुम घणरत्ता ।
इय वज्जवन्नछाया कमेण आगरविसेसाओ ॥२१॥
पर विशेषोऽय :—

१८ यदि उत्तम रत्नो मे एक भी खोटा मलिन और सदोष रत्न हो तो वह समस्त उत्तम रत्नो की कान्ति और प्रभाव को निश्चयरूप से हरण कर लेता है ।

१६ मूल उत्पत्ति कही गई अव मैं समस्त रत्नो की खाने, वर्ण, गुण दोप, जाति, मूल्य आदि वतलाऊ गा ।

२० हेमन्त, (हिमवंत) सोपारक, कलिंग, मातग, कौसल, सुराष्ट्र, पण्डूर देश मे एव वेणु नदी मे हीरे की खानें हैं ।

२१ ताम्रवर्ण, श्वेत, नील, कुक्कुस (धान्यादि के छिलके जैसे रग का) हरताल, सिरीश के फूल जैसे घने रक्त रंग की छाया वाले क्रमशः खान विशेष के द्योतक हैं ।

कोसल कलिंगा पढमे दुइय हेमंव तह य मायंगे ।
पंडूर सुरट्ठ तईय वेणुन्न सोपारय कलिंमि ॥ २२ ॥
छक्कोण अट्ठ फलया बारस धारा य हुंति वम्मा य ।
अट्ठ गुणा नव दोसा चउ छाया चउर वन्न कमा ॥ २३ ॥
समफलय उच्चकोणा सुतिक्खधारा य वारितर अमला ।
उज्जल अदोस लहुतुल इय वज्जे होंति अट्ठ गुणा ॥ २४ ॥
कागपय बिंदु रेहा समला फुट्टा य एगसिंगा य ।
वट्टा य जवाकारा हीणाहियकोण नव दोसा ॥ २५ ॥

परन्तु विशेष यह है कि—

२२ कलिकालमें कोसल और कलिंग में प्रथम प्रकार के रत्न, हिमालय तथा मातंग में द्वितीय, पण्डुर सुराष्ट्र में तीसरे प्रकार के तथा अवशिष्ट हीरे वेणु नदी और सोपारक में होते हैं।

२३ हीरे में छः कोण अष्ट फलक, बारह प्रकार की धाराएं आठ गुण, नौ दोष, चार प्रकार की छाया और चार प्रकार के वर्ण क्रम से हुआ करते हैं।

२४ समफलक, उच्चकोण, तीखी धारा, पानीदार, निर्मल, उज्ज्वल निर्दोष एवं हल्का वजन, ये हीरे के आठ गुण होते हैं।

२५ काकपद, बिंदु रेखा (धारी) मैलापन विकृत एक सींग, गोलमटोल जवाकार और हीनाधिक कोण, ये हीरे के नौ दोष हैं।

सिय-विप्प अरुण-खत्तिय पीय-वइस्सा य कसिण-सुद्दाय ।
इय चउ वन्न दुजाई चुक्खा तह मालवी नेया ॥ २६ ॥
निद्दोस सगुण उत्तिम चत्तारि वि वन्न हुति जस्स गिहे ।
तस्स न हवत्ति विग्घ अकालमरण न सत्तुभय ॥ २७ ॥
चत्तारि वि वन्न तहा पीयारुण नरवराण रिद्धिकरा ।
सेसा नियनिय वन्ने सुहकरा वज्ज नायव्वा ॥ २८ ॥
लच्छीए आयड्ढी थभइ अरिणो परि [र] क्कम समरे ।
तेण अरुण पीय नरेसरो धरइ वरवज्जं ॥ २९ ॥

---

२६ श्वेत वर्ण ब्राह्मण, लाल का वर्ण क्षत्रिय, पीले का वैश्य, और काले का शूद्र, ये चार वर्ण हैं, ब्राह्मण वर्ण तथा चोखा हीरा मालवी जानना चाहिए। (चुक्खा और मालवी ये दो हीरे की जाति है।)

२७ जिसके घर मे निर्दोष, सद्गुणी और उत्तम चारो वर्ण के हीरे होते हैं, उसके घर विघ्न, अकालमरण व शत्रुभय नही होता ।

२८ चारो ही वर्ण के तथा पीले, और लाल हीरे राजाओ को ऋद्धिकर्त्ता हैं। शेष अपने अपने वर्ण को सुख देने वाले हीरे जानना ।

२९ लक्ष्मी को आकर्षण करने वाला, वैरियो को स्तम्भन करने वाला समरक्षेत्र मे पराक्रमदाता होने से राजा लोग लाल, पीले उत्तम हीरे को धारण करते हैं।

जह दप्पणेण वयणं दीसइ तह उत्तमेण वज्जेण ।
नर तिरिय रुक्ख मंदिर सुरिंदधणुहाइ दीसंति ॥ ३० ॥

अइसुक्ख तिक्खधारा पुत्तत्थीइत्थियाण हाणिकरा ।
चप्पडि मलिण तिकोणा रमणीण वज्ज सुहजणया ॥ ३१ ॥

भणियं च —

अहमेव पढमरयणं सुपुत्तरमणाण खाणि-सुह-कुच्छी ।
कोण वरायो वज्जो इय दोसं दाउ धर इत्थी ॥ ३२ ॥
समपिंड सगुण निम्मल गुरुतुल्ला हीणपिंड लहुमुल्ला ।
फार लहुतुल्ल मज्झा बहुमुल्ला सम समा मुल्लो ॥ ३३ ॥

३० जैसे दर्पण में मुख दिखायी देता है वैसे ही उत्तम हीरे में पुरुष, तिर्यञ्च, वृक्ष, मन्दिर एवं इन्द्र धनुष आदि दिखते हैं ।

३१ अति पोली तीखी धारा वाला हीरा पुत्रार्थी स्त्रियों को हानि कारक तथा चप्पड मलिन तिकोना हीरा रमणियों को सुखदायक है ।

कहा है कि:—

३२ मैं ही सुपुत्र रत्नों की खान रूप कुक्षि को धारण करने वाली प्रथम रत्न हूँ । ये पामर वज्र क्या चीज है ? यह दोष देनेवाले हीरे को स्त्री धारण करती है ।

३३ सम पिण्ड, अच्छे गुण वाले और निर्मल हीरे यदि तोल में भारी और हीन पिण्ड हो तो अल्पमूल्य होते हैं । तथा फार व हल्के वजन के हीरे बहुमूल्य एवं मध्यम हीरे मध्यम मूल्य के होते हैं ।

वज्ज लहु फलह सिर चित्थर चरणं तिलोवरिं काउ. ।
जो जडइ अह जडावइ तस्स धुव हवइ वहु दोस ॥ ३४ ॥

जस्स फलहाण मज्झे वुड्डो वुड्डो हुंति भिन्न वन्नाइ ।
कागपय रत्तविंदू त वज्ज होइ पुत्तहर ॥ ३५ ॥

वज्जेण सव्वि रयणा वेह पावति हीरए हीरा ।
कुरुविंदो पुण वेहइ नीलस्स न अन्नरयणस्स ॥ ३६ ॥

अयसार कच्च फलिहा गोमेयग पुसराय वेडुज्जा ।
एयाउ कूडवज्जा कुणति जे होंति कल कुसला ॥३७॥

---

३४ जिस हीरे के थान का ऊपर का भाग छोटा और नीचेका भाग वडा हो ऐसे को उलटा करके जो जटता है या जडवाता है उसे निश्चय पूर्वक वडा दोष लगता है ।

३५ जिस फलक(थान) मे वडे वडे भिन्न वर्ण, काकपद तथा लाल छीटे होते हैं, वह हीरा पुत्र का हरण करने वाला होता है ।

३६ वज्र (हीरे) से सभी रत्न बीधे छेदे जाते है, हीरे से हीरा भी । मानिक भी नीलम को वेधता है अन्य रत्नों को नही ।

३७ अयसार (लोहचूर्ण), कांच, स्फटिक, गोमेदक, पुखराज वैडूर्य —इनसे भी जो कलाकुशल व्यक्ति होता है, नकली हीरे वना लेता है ।

कुद्दाण इय परिक्खा गुरु विम्नाया य सुहमधारा य।
सायायं सुह घसिया दुह घसिया रयण जाइमवा॥ ३८॥

॥ इति वज्र परीक्षा॥

अथ मुत्ताहलं जहा :—

गयकुंभ १ सखमक्के २ मच्छमुहे ३ वंस ४ कोलदाढेय ५।
सप्पसिरे ६ तह मेहे ७ सिप्पउड़े ८ मुत्तिया हुंति॥ ३९॥
मंदव [प] इ पीय रत्ता इय पतिम जंबुनाय मज्झन्था।
मुामलयपमाणा गन्धदसा हुंति रज्जकरा॥ ४०॥

३८ सोने की यह परीक्षा है कि वह वजन में भारी लम्बी बींधा वाला पतली धारा वाला एवं साण पर घिसने से सरलता से घिस जाय वह खोटा तथा कठिनता से घिसे वह सच्चा रत्न जानना।

३९ हाथी के कुम्भस्थल, शंख, मच्छ के मुंह में बांस में, सूअर की दाढ़ों में सांप के मस्तक पर बादल में, तथा सीपी में इन आठों स्थानों में मोती उत्पन्न होते हैं।

४० गुलाबी, पीला और रत्ता उत्तम जामुनिया रङ्ग का मध्यम तथा आंवले के प्रमाण का मोल गज मोती राज रखाने वाला होता है।

दाहिणवत्ते संखे महासमुद्दे य कवुजा हुति ।
लहु सेया अरुणपहा नर-दुलहा मगलावासा ॥ ४१ ॥
मच्छे य साम वट्टा लहुतुला विमलदिट्ठिसंजणया ।
अरि–चोर-भूय-साइणि-भयनासा हुति रिद्धिकरा ॥ ४२ ॥
गु ज समा मदपहा हवति कत्थ (?च्छ) वन सव्व भूमीसु ।
रज्जकरा दुक्खहरा सुपवित्ता वंसउद्धरणा ॥ ४३ ॥
सूवरदाढे वट्टा घियवन्ना तह य सालफलतुल्ला ।
चिट्ठ ति जस्स पासे इ देण न जिप्पए सोवि ॥ ४४ ॥
सप्पस्स नील निम्मल कंकोलीफलसमाण लच्छिकरा ।
छल-च्छिद-अहिउवद्दव-विसवाही-विज्जु नासयरा ॥ ४५ ॥

---

४१ दक्षिणावर्त्त शख और महासागर मे सखजन्य मोती होते हैं। हल्का सफेद और अरुण प्रभा वाले मोती मनुष्यो को दुर्लभ और मगल के आवास हैं।

४२ मच्छोत्पन्न मोती श्यामल, गोल, हलके, विमल दृष्टि उत्पन्न करने वाले, शत्रु, चोर, भूत और शाकिनी इनके भयविनाशक और ऋद्धि कर्त्ता होते हैं।

४३ बास के मोती सब भूमि मे स्थित किसी बास के वन मे होते हैं। जो चिरमी जितने वडे मद प्रभा वाले, पवित्र राजकर्ता और दुखहर्त्ता हैं।

४४ सूअर की दाढों से उत्पन्न मोती गोल, घृतवर्ण, सालफल (सखुआ) जितने वडे होते हैं। जिसके पास ये मोती होते हैं, वह इन्द्र से भी अजेय है।

मेहे रवितेयसमा सुराण कीलंत पडइ निवड वि ।
गिण्हंति अतराले अपत्त धरणीयले देवा ॥ ४६ ॥
वायं विज्जइ कोवि हु जलबिंदु मसहरंमि वरिसंते ।
सु वि मुत्ताहल [फ] पच्छी मणंति चिंतामणी विउसा ॥ ४७ ॥
एए हुंति अवेहा अमुल्लया पूयमाण रिद्धिकरा ।
लोए बहु माहप्पा छडु महुमुल्ला य सिप्पिभवा ॥ ४८ ॥
रामावलोइ बब्बरि सिंघलि कंतारि पारसीद य ।
केसिय देसेसु तहा जलहितडे सिप्पिआ हुंति ॥ ४९ ॥

---

४५ सांप का मोती नीला निर्मल कंकोली फल जितना बड़ा लक्ष्मीकारक तथा छल छिद्र सर्पोपद्रव विष, व्याधि किसी व्याधि के उपद्रवों का नाशक होता है ।

४६ बादलों में सूर्य तेज जैसे मोती देवताओं के क्रीड़ा करते किसी तरह गिर जाते हैं तो उन्हें पृथ्वी पर पड़ने से पूर्व ही देवता लोग अन्तराल में ग्रहण कर लेते हैं ।

४७ बरसते हुए बादलों में से यदि कोई जल बिन्दु वायु से सूखकर मोती हो जाय, उसे विद्वान लोग चिन्तामणि मोती कहते हैं ।

४८ ये सब अबींधे पूजनीय अमूल्य और ऋद्धिकर्त्ता एवं लोक में बड़े माहात्म्यवाले हैं सीप के अलग व बहुमूल्यवान होते हैं ।

४९ रामावलोद, बब्बर, सिंहल कान्तार पारस और केसिय देश में तथा समुद्र तट में सीपियों से उत्पन्न मोती होते हैं ।

सव्वेसु आगरेसु य सिप्पउडे साइरिक्ख जलजोए।
जायंति मुत्तियाइ सव्वालकार-जणयाइ ॥ ५० ॥
तारं वट्ट अमल सुसणिद्ध कोमल गुरू छ गुणा।
लहु कढिण रूक्ख करडा विवन्न सह विंदु छह दोसा ॥ ५१ ॥
ससिकिरणसम सगुण दीह इक्कगि कलुसिय हवइ।
तस्स य खडस हीण मुल्ला निंबउलीए अद्ध ॥ ५२ ॥
अहरूव पक-पूरिय असार विप्फोड मच्छनयणसमं।
करयाभ गठिजुय गुरू पि वट्ट पि लहु-मुल्ला ॥ ५३ ॥

---

५० सभी खानो मे—सीप मे स्वाती नक्षत्र के जल पडने के योग से सर्व गहनो के योग्य मोती उत्पन्न होते हैं।

५१ देदीप्यमान, गोल, निर्मल, चिकना, कोमल, और भारी ये छः गुण तथा लघु, कठिन, रूखा, कडा, विवर्ण, दागी (धब्बे वाला) ये मोती के छः दोष हैं।

५२ चन्द्रकिरण जैसा (श्वेत शीतल) सगुण, दीर्घ, नींबोली से आधे परिमाण का मोती यदि एकांग कलुषित हो तो उसका मूल्य षडाश हीन होता है।

५३ कुरूप, पकपूरित, निस्सार, विस्फोट मच्छनेत्रजैसा, ओले जैसा ग्र थि युक्त मोती भारी व गोल होने पर भी वह कम मूल्य वाला है।

पीयद्ध अयठु विहा सद्दु मट्ठ सुवरड जइ जुग्गं ।
सद्दोसे य दसंसं इयराणं विद्वप मुल्लं ॥ ५४ ॥

॥ इति मुत्ताहल परीक्षा ॥

—:o:—

अथ पद्मरागमणि जथा —

पउमरागं जहा :—
रामा गंग-नई-तडि सिंघलि कलसउरि तुंबरे देसे ।
माणिक्काणुप्पत्ती विहु विहु गुण दोस गुण वना ॥ ५५ ॥
पउमित्य पउमरायं सोगंधिय नीलगंध कुरुविंद ।
जामुणिय पंच जाई चुन्निय माणिक्क नामेहिं ॥ ५६ ॥

५४ पीले का मूल्य आधा या तिहाई, मट्ठ का पच्चांश, रूक्ष का यथा योग्य सदोष का दसांश, दूसरे मोतियों के निगाह के अनुसार मूल्य करना ।

पद्मराग माणिक्य मणि :—

५५ रामा गंगा नदी के तट, सिंहलद्वीप कलसपुर, और तुंबर देश में माणिक्य उत्पन्न होते हैं जिनके दोष गुण, वर्ण आदि भिन्न भिन्न हैं ।

५६ पद्मराग १ सौगन्धिक २ नीलगंध ३ कुरुविंद, ४ जामुनिया ५ ये पांच जाति के चुन्नी—माणिक्य नाम से जानना ।

सूरु व्व किरण पसरा सुसणिद्ध कोमलं च अग्गिनिहा ।
ज कणयसम कढिया अक्खीणा पउमरायं सा ॥ ५७ ॥

किंसुय कुसुम कसु भय कोइल-सारिस-चकोर अक्खि समं ।
दाडिम—वीज—निह ज तमित्थ सोगंधिया नेया ॥५८॥

कमलालत्तय-विद्रुम-हिंगुलुयसमो य किंचि नीलाभो ।
खज्जोय—कंति—सरिसो इय वन्ने नीलगधोय ॥ ५९ ॥

पढम तह साव गधय समप्पह रगबहुल कुरविंदा ।
पुण सत्तास लहुयं सजल च इय सहाय—गुणं ॥ ६० ॥

जामुणिया विन्नेया जबू कणवीररत्तपुप्फसमा ।
मुल्लस्सतरमेय वीसं पनरस दस छ तिग विसुवा ॥६१॥

---

५७ सूर्य की तरह प्रसारित किरणो वाला, सुस्निग्ध, कोमल, अग्नि जैसा, तप्त स्वर्ण तुल्य और अक्षीण पद्मराग होता है ।

५८ किंशुक के फूल, कसु भा, कोयल—सारस—चकोर की आख जैसा, अनारदाने जैसे र ग वाला सौगधिक जानना ।

५९ कमल, आलता, मू गा और ई गुर के सदृश किंचित् नीलाभ और खद्योत काति जैसा नीलगध जानना ।

६० प्रथम (पद्मराग) व सौगंधिक जैसी प्रभा वाला, तेज र ग का कुरुविंद है । यह सत्ता मे छोटा और पानीदार होता है—ये कुरुविंद के स्वभाव गुण हैं ।

६१ जामुन और लालकनेर के फूल जैसे र ग का जामुनिया जानना । वीस, पन्द्रह, दस, छः और तीन वीस्वा मूल्य का अन्तर है ।

सुच्छाय सुसणिद्धं किरणामं कोमलं च रंगिल्लं ।
गरुयं सम महुरं माणिक्क हवइ अट्ठगुण ॥ ६२ ॥
गयछायं जड भूमी भिन्न लहसण सक्करं कढिणं ।
विषय ठक्कुर च तहा अट्ठ दोसा भणिय माणिक्के ॥ ६३ ॥
गुण पुवुत्त महुत्तं माणिक्क दोस वज्जियं अमलं ।
जो धरइ तस्स रज्जं पुत्त धणयं हवइ नूणं ॥ ६४ ॥
गुण सहिय पउमरायं धरिय नरनाह आवया टलइ ।
मदासेण उपज्जइ न संसयं इत्थ जाणेह ॥ ६५ ॥
अगुण विवन्नच्छायं लहसण जुयं धब्बयं च सग्गं च ।
इय माणिक्कं धरियं सुहेसमट्ट नरं कुणइ ॥ ६६ ॥

---

६२ सुछाया सुस्निग्ध किरणों सी कांति, कोमल रंगदार भारी सम सुडौल और मधुर ये माणिक्य के आठ गुण होते हैं ।

६३ गतछाय जड़ भूप भेदा हुआ दागी कर्कर, कठिन, पानी रहित और रूखा ये माणिक्य के आठ दोष कहे गए हैं ।

६४ पूर्वोक्त गुण वाले दोषवर्जित निर्मल माणिक का जो धारण करता है उसको निश्चय करके राज्य पुत्र और धन की प्राप्ति होती है ।

६५ गुणवाली पद्मराग मणि धारण करने से राजाओं की आपदाएं टलती हैं और शरीर से आनन्द उत्पन्न होता है यह निःसंदेह रूप से जानना ।

६६ गुणहीन विवर्ण छायावाला लहसुन युक्त (दागी) धनीभूत (रहस्य) और खप्पर के जैसा माणिक जो मनुष्य धारण करता है, वह देश भ्रष्ट होता है ।

कर चरण वयण नयण सु पउमराय पइस्स जणयती ।
तो वहइ पउमराय पउमिणि सुय-पउम जणणत्थ ।। ६७ ।।
अहवट्टि उड्ढवट्टी तिरीयवट्टी य जा हवइ चुन्नी ।
सा अहमुत्तिम मज्झिम कूडा पुण सव्व मट्टी य ।। ६८ ।।
जो मणिवहिप्पएसे मु चइ किरण जहग्गि-गय - धूम ।
सा इदकतिन्नेया चदोव्व सुहावहा सघणा ।। ६९ ।।
साणाइ पउमराय जो छिज्जइ अ गुली छिविय कसिणा ।
वच पहाउ सगब्भा चिप्पिडिया हवइ सा चुन्नी ।। ७० ।।

।। इति माणिक्क परीक्खा सम्मत्ता ।। ६ ।।

---

६७ पद्म सदृश पुत्र को उत्पन्न करने के लिए पद्मिनी स्त्री पद्मराग (माणिक्य) को धारण करती है और पति से पद्मराग मणि के जैसे हाथ, पैर, मुख और नेत्रो वाले पुत्र को जन्म देती है ।

६८ जो चुन्नी अधवर्त्ती, उर्द्धवर्त्ती और तिर्यकवर्त्ती होती है, वह क्रमशः अधम उत्तम और मध्यम है और कूडा को सब मिट्टी जानना ।

६९ बाह्य प्रदेश मे जो निर्धूम अग्नि की तरह कान्ति फैलाती है, वह सघन चन्द्रकान्त मणि, चद्र की तरह सुखावह जानना ।

७० रेती आदि से घिसने पर जो पद्मरागमणि छीजती है एव अगुली स्पर्श से ही दाग पड जाता है, उस प्रभा वाली सगर्भा चुन्नी को चिप्पडिया कहते हैं ।

माणिक्य परीक्षा समाप्त हुई

अथ मरगयं जहा —

अवलिंद मलय पव्वय बव्बरदेसे य उवहितीरे य ।
गरुडस्स उरे कंठे हवंति मरगय महामणिणो ॥ ७१ ॥

गरुडोदगार पढमा कीडउठी दुई य तईय वासउवी ।
मूगउनी य चउत्थी धूलिमराई य पण जाई ॥ ७२ ॥

गरुडोदगार रम्मा नीलाभल कोमला य विसहरणा ।
कीडउठि सुहमणिया कसिणा हेमाभ कंतिल्ला ॥ ७३ ॥

वासवई य सरुक्खा नील हरिय कीरपुच्छ-समणिया ।
मूगउनी पुण कठिणा कसिणा हरियाल सुसणेहा ॥ ७४ ॥

मरकत मणि —

७१ अवलिंद मलयाचल, पव्वरदेश व समुद्र तटमें, गरुडहृदय व कण्ठ में मरकत महामणि होती है

७२ प्रथम गरुडोद्गार दूसरी कीडउठी, तीसरी वासवती चौथी मूगउनी तथा पांचवीं धूलिमराई ये पांच जातियां हैं ।

७३ गरुडोद्गार रम्य नीलाम्ल कोमल और विष हरण करने वाली है । कीडउठी सुखमणि कृष्ण—हेमाभ कांति वाली होती है ।

७४ वासवती रूक्ष, नील (हरी) तोते की पूंछ जैसी हरितवर्ण की तथा मूगउनी कठिन काली हरतालवर्णीय तथा चिकनी होती है ।

धूलमराई गरुया तह कठिण नील कच्च सारिच्छा ।
मुद्द वीस विसोवा दस ट्ठ तह पच दुन्नि कमा ॥ ७५ ॥

रुक्ख विप्फोड पाहण मल कक्कर जठर सज्जरस तह य ।
इय सत्त दोस मरगय-मणीण ताण फल वोच्छ ॥ ७६ ॥

रुक्खाय वाहि-करणी विप्फोडा सत्थघाय सजणणी ।
मलिण वहिरधयारी पाहाणी वधु नासयरी ॥ ७७ ॥

कक्कर सहिय अउत्ता जठरा जाणेह सव्व-दोस-गिह ।
सज्जरसा मामिच्चू मरगइ दोसाइ ताण फल ॥ ७८ ॥

---

७५ धूलमराई भारी, कठिन और गहरे हरे काच सरखी होती है इन सव का २० विस्वे वाली का मूल्य क्रमशः दस, आठ पाच और दो (मुद्रा) जानना ।

७६ रूक्ष, विष्फोट, पत्थर, मैला, कडकडा, जठर और सद्यरस ये सात दोप मरकत मणि के कहे । अव उनके फल कहता हूँ—

७७ रूक्ष व्याधिकारक, विष्फोटक शस्त्रघातोत्पादक, मलिन वहरा अवा करनेवाली और पथरीली वन्धुओ का नाश करने वाली होती है ।

७८ कर्कर दोषी अपुत्रक, जठरा सर्व दोषो की घर जानना, सद्यरसा माता की मृत्यु करने वाली है ।
ये मरकत मणि के दोष और उनके फल कहे ।

सुच्छायं सुसणिद्धं अणेरुयं सह छह्हु च यन्नड्ड ।
पंच गुण विसहरणं मरगय मसराल्लं लच्छिकरं ॥ ७९ ॥
सूराभिमुह ठविय कर उयरे मरगयंमि विसिरुआ ।
विप्फुरइ जस्स छाया पुन्न पवित्ता भुरीणा सा ॥ ८० ॥

॥ इति मरकत मणि परीक्षा सम्पता ॥

अथ इन्द्रनील :-

सिंघलदीव समुब्भव महिंदनीला य वन्नसु वन्ना य ।
छ दोस पंच गुणाहि य छाय नव छाय जाणह ॥ ८१ ॥

---

७९ अच्छी छाया वाला सचिक्कन प्रसरतकिरण (अनेकरूप), मृदु और वर्णाढ्य ये मरकतके पांच गुण विष हरने वाले और अपार लक्ष्मी देने वाले हैं ।

८० सूर्याभिमुख हृदय पर हाथ स्थापित कर मरकत मणि का ध्यान करना, फिर जिसकी छाया विस्फुरित हो वह प्रधान (मरकत मणि) पुण्य पवित्र है ।

इति मरकत मणि की परीक्षा समाप्त हुई ।

---

८१ सिंहलद्वीप में उत्पन्न महेन्द्रनील के चार वर्ण छ दोष पांच गुण और नौ छाया जानना ।

सियनीलाभ विप्प नीलारुण खत्तिय वियाणाहि।
पीयाभ–नील वइस घणनीलं हवइ त सुद्द ॥ ८२ ॥

अब्भय मदि सकक्कर गब्भा-सत्तास जठर पाहणिया।
समल सगार विवन्ना इय नीले होंति नव दोसा ॥ ८३ ॥

अब्भय दोस धणक्खय सक्कर वाहीउ मदिए कुट्ठ ।
पाहणिए असिघाय भिन्नविवन्ने य सिंहभय ॥ ८४ ॥

सत्तासे वधुवह समल सगारे य जठर मित्तखय।
नव दोसाणि फलाणि य महिंदनीलस्स भणियाइं ॥ ८५ ॥

---

८२ श्वेत नीलाभ विप्र, लाल नीलाभ क्षत्रिय, पीताभ नील वैश्य और घननीले (कृष्णनीले) रग की शूद्र वर्ण वाली जानना।

८३ अभरक, मदिस, कडकडा गर्भ सत्रासी (दोषी) जठर, पथरीली, मलिन, सगार और विरगा ये नीलम के नव प्रकार के दोष होते हैं।

८४-८५ अभरक दोष धननाशक, कडकडा व्याधिकारक, मदे से कोढ, पथरीली से तलवारघात, भिन्न विरगा सिंहभयदाता, सत्रासी से बन्धुवध एव मलिन, सगार व जठर मित्रो का क्षय कराने वाला है। ये महेन्द्रनील के ९ दोष और उसके फल कहे।

गरुयं वट्ट य सुरंग सुसणिद्ध कोमलं सुरजणय ।
इय पंच गुणं नीलं धरंति म (?स) णिकोव पसमंति ॥ ८६ ॥

नील घण मोरकंठ य अलसी गिरिकन्नि-कुसुम संकासा ।
अलि-पंख कसिण सामल कोइल-गीवाभ नव छाया ॥ ८७ ॥

हीरय चुन्निय माणिक मरगय नीलं च पंच रयणमय ।
इय भरिए जं पुन्नं हवइ न त कोडि दाणेण ॥ ८८ ॥

इति इन्द्रनील महापंचरयणवुत्तं

---

८६ भारी सुरंगा चिकना कोमल और रजक इन पांच गुणों वाले नीलम को धारण करने से शनि का कोप शान्त होता है ।

८७ गहरा (घोर) नीला मेघवर्ण मोरकण्ठी अलसी गिरिकर्ण के फूल जैसी भ्रमरपंखो काली सांवली और कोयल ग्रीवा जैसी ये नौ छाया कही है ।

८८ हीरा चुन्नी मानिक, मरकत व नीलम इन पांच रत्नमय (आभरण) धारण करने से जो पुण्य होता है वह कोटि दान से भी नहीं ।

अह विद्रुम ल्हसणियय वइडूज्जो फलिह पुसराओ य।
कक्केयग भीसम्मो भणिय इय सत्त रयणाण ॥ ८९ ॥

विद्रुमं जहा :—

कावेर विंझपव्वइ चीण महाचीण उवहि नयपाले।
वल्ली-रूव जायइ पवालय कदनालमयं ॥ ९० ॥
[पाठान्तर :—वल्लीरूवं कत्थवि पवालय होइ उयहि मज्झम्मि।
वहुरत्त कठिण कोमल जह नाल सव्व सुसणेह ॥५०॥]
वहुरग सुसणिद्धं सुपसन्न तह्य कोमल विमल।
घणवन्न वन्नरत्ता भूमिय पय विद्रम परम ॥ ९१ ॥

ल्हसणियओ जहा :—

नीलुज्जल पीयारुण छाया कतीइ फिरइ जस्सगे।
त ल्हसणिय पहाण सिंघलदीवाउ सभूय ॥ ९२ ॥

---

८९ अब विद्रुम, ल्हसणिया, वैडूर्य, स्फटिक, पुखराज, कर्केतन और भीष्म इन सात रत्नो को कहता हूँ।

९० कावेर, विन्ध्याचल, चीन, महाचीन, उदधि और नेपाल देश मे वेलके रूप मे प्रवाल, कदनाल के साथ उत्पन्न होता है।

९१ वहुरगा, चिकना, सुप्रसन्न, कोमल और निर्मल, घनवर्णा लाल रगवाली भूमिसे उत्पन्न मूगा उत्तम होता है।

लहसनिया :—

९२ कान्ति से जिसकी छाया नील, श्वेत, पीली, लाल दिखायी देती हैं वह लहसणियापाषाण सिंहल द्वीप मे उत्पन्न होता है।

इक्काविय सुहसणियभो अदोस अह पुलआभो विराअन्तो।
नवगह रयण सम गुणो भणंति तं सपुलिय केवि ॥ ६३ ॥

वइडुज्जं जहा —
कुवियं गम वेसावहि वइडूरनगम्मु हवइ वइडुज्जं ।
वंसदलाभं नील वीरिय-संताण पोसयरं ॥ ६४॥
[पाठान्तर-रयणायरस्स मज्झे कुवियगय नाम जणवओतत्थ ।
वइडूर नगे जायइ वइडुज्ज वस पत्ताभं ॥ ५१ ॥]

फलिहं जहा :—
नयवाल कासमीरं चीण कावेरि जउण-नइ तीरे ।
विंझगिरि हुंति फलिहं अइ निम्मल दप्पणुव्व सियं ॥ ६५ ॥
[पाठान्तर—नयवाले कसमीरे चीण कावेरि जउण नई कूले ।
विंझ नगे उप्पज्जइ फलिहं अइ निम्मलं सेयं ॥ ५४ ॥

६३ एक भी सहसमिया अच्छी निर्दोष और बिजलीकी भांत जैसी हो तो नवग्रह रत्न के बराबर गुणवाली है। कोई इसको पुलकित कहते हैं, क्योंकि इसमें रेखाएं फिरती हुई दिखाई देती हैं।

वैडूर्य —
६४ कुवियगत (कोंग) देश के समुद्र में तथा वैडूर्य नाम के पर्वत में वैडूर्य होता है। बांस के पत्ते जैसा नीला, एवं सन्तान वीर्य को पुष्टि करने वाला होता है।

स्फटिक :—
६५ नेपाल, काश्मीर, चीन कावेरी और यमुना नदी के तट पर एवं विन्ध्याचल में दपण की तरह अत्यन्त निर्मल और श्वेत स्फटिक होता है।

रविकताओ अग्गी ससिकताओ झरेइ अमिय जल।

रविकत चदकते दुन्निवि फलिहाउ जायति॥ ६६॥

[पाठान्तर-उप्पत्तीओ अग्गी ससिकतिओ झरेइ अमिय जल।

रविकत चदकते दुन्निवि फलिहाओ जायति॥ ५५॥]

पुस्सरायं जहा :—

बहु पीय-कणय-वन्नो ससणिद्धो पुसराओ हिमवते।

जायइ जो धरइ सया तस्स गुरु हवइ सुपसन्नो॥ ६७॥

[पाठान्तर-बहुपीय रुहिर वण्णो ससिणेहो होइ पुसराओयं

भीमसु विण चउ समो दुन्निवि जायति हिमवतो॥ ५६ ॥]

---

६६ सूर्यकात से अग्नि, चन्द्रकान्त से अमृतजल झरता है। सूर्यकान्त और चन्द्रकान्त दोनो रत्न स्फटिक से उत्पन्न होते हैं।

पुखराज :—

६७ सोने जैसा गहरा पीला,सुस्निग्ध पुखराज हिमवत (पर्वत) मे उत्पन्न होता है। जो सदा धारण करें, उसके गुरु—वृहस्पति सुप्रसन्न होते हैं।

कक्केयण जहा —

पवणुप्पट्ठाण देसे जायइ कक्क यणं सुल्लाणीआ।
तंबय सुपक्क महुवय नीलाभ सचिक्क सुसणिद्ध ॥ ६८ ॥
[पाठान्तर-पवणुत्थ ठाण दसे जायइ कक्केयणं सुसाणिओ।
तंबय सुपक्क महुयं वय नीलाभं सुचिक्क सुसणेह ॥ ४२ ॥]

भीसम जहा—

भीसमु सियवद समो पंडुरओ हेमवंत संभूओ ।
जो धरइ तस्स न हवइ पाण्णं अग्गि विज्जुभयं ॥ ६९ ॥

इति रयण सतक ॥ छ ॥

कर्केतन —

६८ पवणु और पठान देश की खानों में कर्केतन उत्पन्न होता है जो तांबे और पके महुए जैसे नीलाभ रंग का सुन्दर और चिकना होता है।

भीसम —

६९ सूर्य जैसा पीत मिश्रित श्वेत वर्ण का भीष्म हिमवंत में उत्पन्न होता है। जो धारण करता है उसे प्रायः करके अग्नि और विद्युत का भय नहीं होता।

सिरि नाय कुल परेवग देसे तहय नव्वयानई मज्झे।
गोमेय इ द गोव सुमणिद्ध पडुर पीयं ॥ १०० ॥

[पाठान्तर-सिरिनायकुलपरेवम देसे तह जम्मल नई मज्झे।
गोमेय्र इंदगोव सुमणेह पडुर पीय ॥ ५३ ॥]

गुण सहिया मल रहिया मगल जणयाय लच्छि आवासा।
विग्घहरा देवपिया रयणा सव्वेवि सपहाया ॥ १०१ ॥

मुत्तिय वज्ज पवालय तिन्निवि रयणाणि भिन्न जाईणि।
वन्नवि जाइ विसेसो सेसा पुण भिन्न जाईओ ॥ १०२ ॥

इय सत्थुत्तर सत्तुत्तम रयणा भणिय भणामित्थ पारसी रयणा।
वन्नागर-सजुत्ता लाल अकीया य पेरुज्जा ॥ १०३ ॥
[पाठान्तर-इय सत्थुत्तयरन्ना भणिय, भणामित्थ पारसी रयणा
वण्णागर सजुत्ता अन्ने जे धाउसजाया ॥ ५७]

---

१०० श्री नायकुल परेवग देश मे तथा नर्मदा नदी मे गोमेदक इद्रगोप सचिक्कन एव श्वेत पीत रग का होता है।

१०१ गुण सपन्न, निर्मल, मंगलकारी और लक्ष्मी के आवास भूत सभी रत्न विघ्ननाशक, देवताओ के प्रिय और सप्रभाव हैं।

१०२ मोती, हीरा और प्रवाल तीनो ही भिन्न जातीय रत्न है। वर्ण भी जाति विशेष से सम्बधित हैं और अवशिष्ट भी भिन्न जाति के होते हैं।

१०३ इन शास्त्रोक्त रत्नो को बतलाया। अब लाल अकीक, पिरोजा आदि पारसी रत्नो को रंग और खान सहित बतलाता हूँ।

अइतेय-अग्गियन्नं लालं पंदं लासाए देसंमि।
जमण-देसे पत्तीयं लहु मुल्लं पिलु-सम-रंगं॥ १०४॥

[पाठान्तर-अइतेय अग्गी वण्णं, लाल पदमलासाए देसम्मि।
यमण देसे पत्तीर्य लहु मुल्ल पिलु समरंगं ॥ ५८]

नीलामल पेरुजं देसे नीसावरे मुवासीरे।
उप्पज्जइ खाणीओ दिट्ठिस्स गुणाइ भणियं ॥ १०५॥

इति वज्रादि सर्वरत्नानां स्थान जाति स्वरूपाणि समाप्ता ॥ छ ॥

[पाठान्तर—नीलनिह पेरुज्जं देसे, नीसावरे गुवासीरे।
उप्पज्जइखाणीओ दिट्ठिस्स गुणाइ भणियं ॥ ५६ ॥]

---

१ ४ अति तेज अग्नि जैसे वर्ण की लाल, पदमलासा देश में तथा पीलू जैसे रंग का पत्तीय, यमन देश में अल्पमूल्य वाला होता है।

१०५ गहरे हरे रंग का पिरोजा, नीसावर और मुवासीर की खानों में उत्पन्न होता है नजर से देखकर गुण आदि कहना चाहिए। यहाँ हीरा आदि सब रत्नों के स्थान, जाति स्वरूपादि समाप्त हुए।

अथैतेषामेव मूल्यानि वक्ष्यते यथाह—पुनः भावानुसारेण-
यथाः—

जे सत्थ-दिट्ठि कुसला अणुभूया देस काल भावन्नू ।
जाणिय रयणसरूवा मडलिया ते भणिज्जति ॥ १०६ ॥
हीणग अ तजाई लक्खण सत्तुज्झया फुड कलका ।
अय जाण माणया विहु मडलिया ते न कईयावि ॥ १०७ ॥
मंडलिय रयण दट्ठु परोप्पर मेलिऊण करसन्न ।
जपति नाम मुल्ल जाम सहा सम्मय होइ ॥ १०८ ॥
धणिओ अमुणिय मुल्लो हीणहिय मुणइ तस्स नहु दोसो ।
मडलिय अलिय मुल्ल कुणति जे ते न नदति ॥ १०९ ॥

अव उनके मूल्य कहे जाते हैं, फिर जैसे भावानुसार हो यथा —

१०६ जो शास्त्रज्ञ, दृष्टिकुशल, अनुभवी, देशकाल-भाव के ज्ञाता, एव रत्नो के स्वरूप के जानकार हैं वे मडलिक-जौहरी कहलाते है ।

१०७ हीनाग, नीच जाति, लक्षण तथा सत्त्व रहित, स्पष्ट कल कित व्यक्ति ज्ञाता और मान्य होने पर भी मडलिक-जौहरी कभी नही ।

१०८ जौहरी रत्न देखकर, परस्पर हाथ की सज्ञा मिलाकर जब सभा सम्मत हो तब मूल्य कहे ।

१०९ रत्न का मालिक बिना जाने ही नाधिक मूल्य भी कहे तो उसे दोष नही, पर जो जौहरी झूठा मोल करे वह सुखी नही होता ।

अहमस्स अहिय मुल्लं उत्तमरयणस्स हीण मुल्लं च ।
जे मय-लोह-पसाओ कुणंति ते कुट्ठिया होंति ॥ ११० ॥

रयणाण विहु मुल्लं निरुद्ध वद्धं न होइ कईयावि ।
तहवि समयाणुसारे जं वट्टइ तं भणामि अहं ॥ १११ ॥

तिहु राइएहिं सरिसम छहिं सरिसम तंदुलोय बिउण जवो ।
सोलस जवेहिं छहिं गुंजि मासओ तेहिं चहु टंको ॥ ११२ ॥

एगाइ जाव बारस तिग वुड्ढी जाम गुंज चउवीसं ।
चउ रयणाणं मुल्लं सोवीण सुवन्न टंकेहिं ॥ ११३ ॥

---

११० नीच रत्न का अधिक मूल्य, उत्तम रत्न का हीन मूल्य जो मद एवं लोभ के वशीभूत होकर कहते हैं वे कोढ़ी होते हैं ।

१११ रत्नों का मूल्य बंधा हुआ नहीं होता पर नजर के अनुसार है फिर भी समयानुसार जो मूल्य है वह मैं कहता हूँ ।

११२ तीन राई का एक सरसों छः सरसों का एक तंदुल, दो तंदुल का एक जौ सोलह जौ अथवा छः गुंजा (रत्ती) का एक मासा और चार मासे का एक टांक होता है ।

११३ एक से बारह तक और फिर तीन तीन बढ़ती हुई चौबीस रत्ती (गुंजा) तक चारों रत्नों के मूल्य तोल करके स्वर्ण टंका (मुद्रा) से बतलाना ।

पच दुवालस वीसा तीसा पन्नास पचसयरी य ।

दसहिय चउसट्ठि सय दो चाला तिसय वीसास ॥ ११४ ॥

चारिसय तहय छहसय चउदस सय उवरि विउण विउण जा ।

इक्कारसहस दुगसय मुल्लमिण इक्क हीरस्स ॥ ११५ ॥

अद्ध इग दु चउ अट्ठय पनरस पणवीस याल सट्ठी य ।

चुलसीइ चउ दसुत्तर सयं च कमसो य सट्ठिसय ॥ ११६ ॥

तिन्निसय सट्ठि समहिय सत्तसया तहय वारससयाय ।

दो सहस कणय टका मुत्तिय मुल्लं वियाणेहिं॥ ११७ ॥

११४।११५ पाच, बारह, वीस, तीस, पचास, पचहत्तर, एक सौ दस एक सौ चौसठ, दो सौ चालीस, तीन सौ बीस, चार सौ, छः सौ, चौदह सौ, फिर उसके ऊपर मे दूना दूना (अठाइस सौ, पांच हजार छः सौ) करके ग्यारह हजार दो सौ स्वर्ण (टका) एक हीरे का मूल्य जानना ।

११६।११७ आधा, एक, दो, चार, आठ, पन्द्रह, पचीस, चालीस, साठ, चौरासी, एक सौ चौदह और क्रमशः एक सौ साठ तीन सौ साठ, उससे अधिक सात सौ, बारह सौ फिर दो हजार स्वर्णटका मोती का मल्य जानना ।

दो पंच अट्ठ बारस अट्ठार छवीमा य [मास] सट्ठीय ।
पचासी वीसासउ सटिठ सयं दुसय वीसा य ॥ ११८ ॥

चउसय वीसा अट्ठसय चउदस चउवीस पिंडु पिंडु सयाणि ।
गुंजाइ [मास ?] टंक उत्तिम माणिक्क मुल्लु वरं ॥ ११६ ॥

पायद्ध पग दिवड्ढ दु ति चउ पण छच अट्ठ दह तेर ।
ठार सगवीस चत्ता सट्ठि महामरगयमणीणं ॥ १२० ॥

अस्यार्थ एव पत्र पूठि यंत्रेणाह ॥ छ ॥ छ ॥

११८।११६ दो पाँच, आठ, बारह अठारह, छब्बीस साठ, पचासी एक सौ बीस एक सौ साठ, दो सौ बीस, चार सौ बीस आठ सौ चौदह सौ, चौबीस सौ तक (उपर वर्णित रत्ती के हिसाब से) उत्तम माणिक्य का मूल्य स्वर्ण टंको से जानना।

१२० पाव आधा एक डयोड, दो तीन, चार पाँच छः आठ दस तेरह अठारह, सताईस चालीस और साठ क्रमशः मरकत मणि का मूल्य है।

इन ११२ से १२ गाथा तक का भावार्थ पीछे दिये हुए यंत्र से समझ० ।

गुजा	१	२	३	४	५	६	७	८
हीरा	५	१२	२०	३०	५०	७५	११०	१६०
मोती	०॥	१	२	४	८	१५	२५	४०
माणिक	२	५	८	१२	१८	२६	४०	६०
मराइ	०।	०॥	१	१॥	२	३	४	५

गुजा	९	१०	११	१२	१५	१८	२१	२४
हीरा	२४०	३२०	४००	६००	१४००	२८००	५६००	११२००
मोती	६०	८४	११४	१६०	३६०	७००	१२००	२०००
माणिक	८५	१२०	१६०	२२०	४२०	८००	१४००	२४००
मराइ	६	८	१०	१३	१८	२७	४०	६०

[अस्य यंत्र अर्थं गाह ११२ और गाह १२० जाव ३ जाणनीय ॥ छ ॥]

अर्द्धमासाय अहिय मास य अद्धद्ध जाम चउ मास ।
तोलीण हेमटकिहिं मुल्लु कमेण सुरयणाण ॥ १२१ ॥

१२१ आधे मासे से लेकर उससे अधिक आधा-आधा मासा बढाते ४ मासो तक वजन वाले सुरत्नो का मूल्य क्रमशः स्वर्ण मुद्रा से है ।

एग दुसड्ढ छ नवगं पनरस चउवीस तहय चउतीसं।
पन्नास लालमुल्लं पउमं पयाउ लहसणियमं ॥ १२२ ॥

पा अद्ध पउण एगं दु पंच अट्ठेव तहय पन्नरसं।
इय इंदनील मुल्ल तहेव परोजयस्स पुणो ॥ १२३ ॥

अस्यार्थ यंत्रे यथा :

मासा	०॥	१	१॥	२	२॥	३	३॥	४
लाल	१	२॥	६	९	१५	२४	३४	५०
लहसणी	०॥।	१॥२॥	४॥	६॥।	११।	१८	२५॥	३७॥
इंद्रनील	०।	०॥	॥।	१	२	५	८	१५
परोजा	०।	०।	०॥।	१	२	५	८	१५

---

१२२ एक ढाई, छः नौ पन्द्रह चौबीस चौतीस और पचास ये लाल के मूल्य हैं तथा लहसणिया का मूल्य इससे पौना जानना।

१२३ इन्द्रनील और पिरोजा का मूल्य पाव आधो पौन एक, दो पांच आठ और पंद्रह स्वर्णमुद्राएं हैं।
इसका अर्थ भी यंत्र से समझना।

सिरि वद्ध गुण अद्ध पाय अणुसार पाय करड च ॥ १२४ ॥
टकिक्क जे तुलंती मुत्ताहल त भणामि अह।
दस वारस पन्नरसा वीस पणवीस तीस चालीसा।
पन्नार[स] सत्तर सय चडति टकिक्कि तह मुल्ल ॥ १२५ ॥
पन्नास चालीख तीस वीस च तहय पन्नरस।
वारस दस ट्ठ पणतिय इय मुल्ल रूप्पटकेहि ॥ १२६ ॥

॥ इति मुत्ताहल ॥

अथ वज्र जथा :-
एगाइ जाम वारस तुलति गु जिक्कि वज्ज ताण मिम।
मुल्ल मडलिएहि ज भणिय त भणिस्सामि ॥ १२७ ॥

---

१२४ हाथी के कुम्भस्थल से प्राप्त अथवा आधे या पाव टक वाले मोती के अनुसार लक्ष्मी वर्धन गुण वाले हैं। जो मोती एक टाक मे तुलते हैं, उन्हे मै बतलाता हूँ।

१२५–२६ एक टाक मे दस, बारह, पन्द्रह, बीस, पचीस, तीस, चालीस, पचास, सत्तर, सौ मोती जो चढते हैं उनके मूल्य क्रमशः पचास, चालीस, तीस, वीस, पन्द्रह, बारह, दस, आठ, पांच और तीन रुपये (चादी के रुपये) हैं।

छोटे हीरे :—

१२७ एक से लगाकर बारह तक जो हीरे एक रत्ती मे तुलते हैं उनके मूल्य जो मडलीको-जौहरियो ने कहे हैं वह मैं कहूँगा।

पणवीस छव्वीस बीस सोळस तेरस [प] दसेवा ।
अट्ठ य पग ऊणा जाविय कमि रूप्पटंकाय ॥ १२८ ॥

अस्यार्थे जंत्रेमाह

मोती टंके ?	१०	१२	१५	२०	२५	३०	४०	५०	७०	१००		
रुप्य टंका	५०	४०	३०	२०	१५	१२	१०	८	५	३		
मध्य गुआ	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
रूप्य टंका	३५	२६	२०	१६	१३	१०	८	७	६	५	४	३

१२८ पैंतीस छब्बीस बीस सोलह तेरह, दस आठ और फिर
एक एक कम (सात छ, पांच चार, तीन) —क्रमशः
तीन रुपये (चांदी के टंके) तक के।
॥ इनके अर्थ भी य म से जानना ॥

मुद्रित प्रति के पाठ भेद :—

मुद्रित प्रति मे १२३ वीं गाथा का पाठ भिन्न रूप मे मिलता है और उसके नीचे यत्र रूप कोष्टक दिया गया है उसकी अङ्क गणना भी भिन्न प्रकार की है। गाथा और कोष्टक निम्न प्रकार है।

[अद्धति छह] दह तेरस सोलस वावीस तीस टकाइं।
लालस्स मुल्लू एव पेरुज्ज इदनील सम ॥ १२३ ॥

अस्यार्थं यंत्रकेणाह :-

मासा	॥	१	१॥	२	२॥	३	३॥	४
हीरा	७	१६	३०	६०	१००	१५०	२२०	३४०
चून्नी	८	१८	३०	६०	१२०	२४०	४८०	६६०
मोती	२	८	३०	८०	१२०	१८०	२७०	४०५
मराइ	४	६	१०	१५	२२	३४	५०	७०
इन्द्रनील	।	॥	॥।	१	२	५	७	१०
ल्हसणिया	।	॥	॥।	१	२	५	७	१०
लाल	॥	३	६	१०	१३	१६	२२	३०
पेरोजा	।	॥	॥।	१	२	५	७	१०

मुद्रित प्रति में १२४ १२५ १२६ इन गाथाओं के आधार पर पाठ भेद वाली भिन्न गाथाएं हैं तथा उनके नीच यंत्र रूप से जो कोष्टक दिए हैं उनमें अंकादि भी भिन्न गिनती पड़ाते हैं। गाथाएं और कोष्टक निम्न प्रकार हैं :—

भत्यार्थं पुन यंत्रकेमाह :—

मोती टंक प्रति	१२	१४	१६	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०	१००
रूप्य टंकग	४०	३५	३०	२४	१६	११	८	६	५	४	३	२

हीरा गुञ्जा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
रूप्य टंकग	२०	१६	१२	११	९	८	७	६	५	४	३	२

वारस पउदस सोलस वीसाई दसहिय च जाव सय ।
टकिकि जे तुलती मुत्ताहल ताण मुल्लमिमिं ॥ १२४ ॥
चालीम पणतीसं तीस चउवीस सोल मिक्कार ।
अट्ठ छ इगेग हीणं जाव दु कमि रूप टकाण ॥ १२५ ॥
एगाई जाव वारस चडत्ति गु जिक्कि वज्ज ताणमिम ।
वीसाय सोल तेरस गारस नव इगूण जाव दुग ॥ १२६ ॥
[पाठ भेद '— अइचुक्ख निमला जे नेय सव्वाण ताण मुल्लमिमं ।
सद्दोसे सयमस भमालए मुल्लु दसमस ॥ १२७ ॥
गोमेय फलिह भीसम कक्केयण पुस्मराय वइडुज्जे ।
उक्किट्ठ पण छ टका कणयद्ध विद्दुसे मुल्ल ॥१२८॥
॥ इति सर्वेषां मूल्यानि समाप्तानि ॥
पाठ भेद — तेणय रयण परिक्खा रइया सखेवि ढिल्लिय पुरीए
कर मुणि गुण ससि वरिसे अल्लावदीणस्स रज्जम्मि ॥१२६॥
मूल प्रति का पाठ :—
अइचुक्ख निम्मला ज नेयं सव्वाणूताण मुल्लुमिम ।
नहु इयर रयणगाण कणयद्ध विदूदुमे मुल्ल ॥ १२९ ॥
गोमेय फलिह भीसम कक्केयण पुंसराय वेडुयज्जे ।
एयाण मुल्लु दम्मिह जहिच्छ कज्जाणुसारेण ॥ १३० ॥

---

२९ अत्यन्त चोखे, तेजस्वी, और निर्मल जो हो उन सबके ये मूल्य जानना, अन्य रत्नो के नही। कनकार्द्ध विद्रुम का मूल्य है।

३० गोमेदक, स्फटिक, भीसम, कर्केतन, पुखराज, वैडूर्य, इनके मूल्य यथेच्छ कार्यानुसार द्रम (मुद्रा) से होता है।

सिरि धंधकुले आसी कन्नाणपुरम्मि सिट्ठि कालियओ।
तस्सुव ठक्कुर चंदो फेरू तस्सेव अंग रुहो ॥ १३१ ॥
तेणिह रयण परिक्खा विहिया निय तणय हेमपाल कए।
कर मुणि गुण ससि वरिसे (१३७२) अल्लावदी विजयरज्जम्मि ॥ १३२ ॥

इति परम जैन श्रीचंद्रांगज ठक्कुर फेरू विरचिते
संक्षिप्त रत्नपरीक्षा समाप्ता ॥ छ ॥

१३१ १३२ कन्नाणपुर में श्री धंधकुल (धांधिया-श्रीमाल) में श्रेष्ठी कालिक उनके पुत्र ठक्कुर चंद और उनके अंगज ठक्कुर फेरू ने यह रत्नपरीक्षा अपने पुत्र हेमपाल के लिये सं० १३७२ में सम्राट् अल्लाउद्दीन के विजयराज्य में बनाई

परम जैन चंद्र के पुत्र ठक्कुर फेरू की रचाई हुई संक्षिप्त रत्नपरीक्षा समाप्त हुई ॥

पं० तत्त्वकुमार मुनि कृता

रत्न परीक्षा

॥ दोहा ॥

आदि पुरुष आदीसरू, आदि राय आदेय।
परमातम परमेसरू, नमो नमो नाभेय ॥ १ ॥

अवनीतल अधिकी बनी, नयरि अयोध्या नाम।
नाभि नरिंद दिणद सम, राज्य करै अभिराम ॥ २ ॥

ऋषभ वृषभ ज्यूँ धारवा, निज कंधे भू भार।
वंश इक्ष्वाग दीपावियौ, ता घर ले अवतार ॥ ३ ॥

ए मर्यादा जगत की वरणावरण विचार।
न्यात पात कुल नीतता, अभिनव कीध आचार ॥ ४ ॥

ब्राह्मण क्षत्री वैश्य ए, शूद्र वरण जग माहि।
च्यार वरण ते चूप से, दीर्घ वताइ सबाहिं ॥ ५ ॥

महिम कला चत्रसहु सुणी पुरुष यहुधर धार।
तामें अधिकी चणयु, रत्नपरीक्षा सार॥ ६॥
वाणी संस्कृति की वण्या, जिनका ग्रंथ अनेक।
चड़े वड़े सो ग्रन्थ हैं, जग में एका एक॥ ७॥
ता कारन रचना रचु सूक्षम शास्त्र संभार।
रत्नपरीक्षा जाण नर ताहि ज्ञान आधार॥ ८॥
जिस पूर्व दीपै सदा, ता मझ वंग सुदेस।
न्याय नीत पाले प्रजा, आज अकबर नरेश॥ ९॥
राजगंज नामा नगर, वसै जु नागर लोक।
कोस पंरा कुल दीपता, अधिक महाजन लोक॥ १०॥
धर्म अर्थ सहु साधवै कुल व्यापार अपार।
सघन घरे सत्र थोक है, नित प्रति अतिहि उदार॥ ११॥
ता मझ गोत्र चखालिया, आसकरण बड़ भाग।
सुख संपति ता घर अधिक दिन दिन अधिक सोभाग॥१२॥
ताके आग्रह ए रच्यौ रतन परीक्षा ग्रन्थ।
ताके समरण योग से प्रगट होत सुभ पंथ॥ १३॥

अथ नव रत्न नाम —

प्रथम नाम नौ रत्न के, कहुं शास्त्र मग धारि।
हीरा मोती मानिकहुं, पन्ना नील विचार॥ १४॥
लहसुनिया पुष्कराग ही गोमेदक परवाल।
प्रथम जाति ए संमहो जतन महा अंजाल॥ १५॥

अथ वज्र विज्ञान :—

हीरा आगर आठ है कौशल और कालिंग ।
सोरठ पौंढ हेमजा वेणू सुपारमतंग ॥ १६ ॥
वर्ण च्यार है वज्र के, ब्राह्मण क्षत्री जाण ।
वैश्य शूद्र च्यारे भणों, गुण से वर्ण पिछाण ॥ १७ ॥
शंख फटिक शशि रुच ससी, छाया ताकी होइ ।
चिकनाई अति कांति द्युति, ब्राह्मण वर्ण्यो सोइ ॥ १८ ॥
लाल रंग कछु पीत छवि, क्षेत्री सोय कहाय ।
तनु पीरे कछु श्वेत छवि, वैश्य वरणिये ताइ ॥ १९ ॥
दीप्तता रंग श्याम है, शूद्र कहावे सोइ ।
अब आगु फल वज्र के, सुनहु सहू को लोइ ॥ २० ॥
द्विज हीरा ब्राह्मण धरे, ता मुख शारद वास ।
क्षत्री धारण क्षत्रिया, शत्रु सबे तसु दास ॥ २१ ॥
वैश्य वज्र वैश्ये धर्यो, ता घर लक्ष्मी शोभ ।
शूद्र हीर शूद्रे धर्यो, कबहु न पामे क्षोभ ॥ २२ ॥
ब्रह्म वज्र गुण हीन है, ताको तनक न मोल ।
गुण संपूरण शूद्र है, सो बहु पावत मोल ॥ २३ ॥
गुणहि युक्त हीरा कोउ, धारत है नर कोई ।
ताको भय कोऊ नहीं, मीच अकाल न होइ ॥ २४ ॥
जो फल है निर्दोष मे, दातें फल विपरीत ।
दोषवत नित देत है, रोग कष्ट बहु भीत ॥ २५ ॥

वज्री चारे पांच गुण दोष सुधारे पांच।
च्यार छाम मोल भेद हैं चार प्रकारह जांच ॥ २६ ॥

अथ हीरा के पांच गुण —

तीखी धार जु निमला अठफूलौं षटकोण।
इन ये गुण से युक्त है, सो दुर्लभ विदु भौंण ॥ २७ ॥

अथ हीरा के पाँच दोष कथन —

काकपदी मल बिन्दु जो, यवाकृति पुन रेख।
ए पांचे दूषण निपट भय दायक ए लेख ॥ २८ ॥

अथ काकपदी दोष —

काक परीक्षा काक पग काला बिंदु जब होइ।
ताकु लागै मीच भय, जा ढिग हीरा सोय ॥ २९ ॥

अथ मल दोष —

च्यार प्रकारे मल कह्यौ, रत्न विशारद लोक।
अम मेल पुन मध्य मल धारा कूण विलोक ॥ ३० ॥
धारा म्याली भय करे, मध्यमली बल भाग।
कूण-मली त्रस सोच है, अग्र-मली दुख भाग ॥ ३१ ॥

अथ बिंदु दोष —

बिंदु दोष त्रिभेद है, सुणज्यौ चित्त लगाय।
जे बिंदु आवर्त सम, तातें नवनिधि थाय ॥ ३२ ॥

विंदु वर्ण्यो वाती समो, ताकौ धरै नरेश।
सो पीडा गद की लहै, ए फल कह्यो विशेप ॥ ३३ ॥
रक्त विंदु ता वज्र मे, तातें अधिक विनाश।
लक्ष्मी सपति पुत्र क्षय, पुन उपजै अति त्रास ॥ ३४ ॥

अथ यव दोप :—

रक्त श्वेत पीयरै वरण, यव के भेद ज तीन।
सपत हरता लाल है, पीत करै कुल छीन ॥ ३५ ॥
श्वेत जवाकृत देख के, ताहि धरै नर कोइ।
इति भीति सहु उपसमं, सुख सपति अति होइ ॥ ३६ ॥
दोप दोइ यव मे कह्या, यव को गुण है एक।
दोप हरौ गुण सग्रहो, चित मे आणि विवेक ॥ ३७ ॥

अथ रेखा दोप :—

च्यिहु रेखा का फल कहू, युक्ता युक्त विचार।
विपमी डावी जीमणी, चौथी ऊरध धार ॥ ३८ ॥
वाई रेखा मृत्यु कर, वधन विपमी रेख।
दाहिण रेखा योग तैं, लछि अचानक देख ॥ ३९ ॥
ऊरध रेखा योग तें, लगे जु छिन मे घाव।
रेख दोप तीनु कह्या ,एक धरै शुभ माव ॥ ४० ॥

पुनः हीरा के च्यार दोप :—

वाह्य मध्य रेखा फटी, जो हीरन में होइ।
कूण हीन अथ गोल है, निरफल हीरा सोइ ॥ ४१ ॥

अथ च्यार छाया —

श्वेत रक्त अरु पीत है, स्याम छाय चौ नाम ।
च्यार वर्ण च्यारू कही सब ही सुख को धाम । ४२ ॥

अथ सामान्य परीक्षा —

धारा अंगे अमलछ, करो निरख सुम हर ।
दोष अदोष निहार के, तुला चढावहु फेर ॥ ४३ ॥

अथ तोल मान —

सरसूं आठ कहीजिये, ता सम तंदुल एक ।
तंदुल चिहुं ते मूंग इक, चिहु मुंगा गुंज एक ॥ ४४ ॥
मंजाडी दोइ गुंज की, तीन मंजाडी माष ।
चो मास को साण इक, साण दुई टंक माष ॥ ४५ ॥
या विधि गिनती कीजियें, तोल चोल परमाण ।
रत्न विशारद लोक के, यह तोलन परमाण ॥ ४६ ॥

॥ इति तोल परमाण कथनम् ॥

पुन' पाठान्तरम् —

विरवा बीस कहीजिये रती एक परमाण ।
कलिंग एक हू गुंज को अठ गुंज मासा जाण ॥ ४७ ॥

॥ इति पाठान्तरम् ॥

अथ हीरा कौ मोल कथन :—

मोल तीन है वज्र के, ताहि लेतु हु नाम ।
उत्तम मध्यम अधम है, वज्र मान तसु दाम ॥ ४८ ॥
पिंड मान यव एक है, तोल जु तंदुल एक ।
ताको मोल ज अर्द्धशत, कहजो धरिय विवेक ॥ ४६ ॥
पिंडमान यव दोइ है, तंदुल एक ज तोल ।
तासे चौगुण मोल धरि, गिणज्यो द्वै शत मोल ॥ ५० ॥
तोल एक तंदुल समौ, गात्र मान यव तीन ।
ताको बोल्यो आठ गुन, रत्न परीच्छक कीन ॥ ५१ ॥

अथ मोल द्वितीय भेदः—

मोल कह्यौ पाठांतरे, ताहि सुण्यो अधिकार ।
पिंड पंच गुण तीन थी, अठ शत तासु विचार ॥ ५२ ॥
षट् गुण होइ जो तोल तें, एक सहस्र तसु मोल ।
सात गुनौ पिंड तौल तै, सहस्र दोइ तसु बोल ॥ ५३ ॥
तोल घटै ज्यातें वढै, त्यों त्यों दाम वढाइ ।
रत्न परीक्षा शास्त्र को, दीयौ जु सार पढाई ॥ ५४ ॥
जो हीरा जल कै विचै, तिरता रहै दोई भाग ।
मोल लहै छत्तीस गुन, देह लेह वरि राग ॥ ५५ ॥
तीन भाग तिरते रहै, जल में हीरा सोइ ।
ता हीरा को मोल फुन, सहस वहुत्तर होई ॥ ५६ ॥

अथ सामान्य भेद हीरा के कहै —

जा हीरा में ज्योति नही लछन गुन नहि कोइ।
ताको मोलउ एक शत सशय धरो नही कोइ ॥ ५७ ॥

नां परखो ना पहरखो ज्योति रहित सो हीर।
तासौ काज न को सरै, जैसे अंध शरीर ॥ ५८ ॥

लछन गुण संयुत जु धरिहौं स्वण मडाय।
लछमी संपति देत है दिन दिन अधिक बढाय ॥ ५९ ॥

जो हीरा जल मां तिरै सुपर्ण्ण स्यू ।
सेत दोष के पत्र सरीखे वर्ण स्यु ॥
ताको मोल सुवर्ण तुला इक जानियें।
सुख संपति दातार, अधिक कर मानियै ॥ ६० ॥

वज्र जरै विपरीत जो कवहु जरईया भूल।
दुष्ट दोष ता संग है जरीया के सिर शूल ॥ ६१ ॥
करौ परीक्षा हीर की जात राग रग रोल।
वर्ति गात्र जु दोष गुण आकृत लाघव मोल ॥ ६२ ॥
ए दस भेद विचार के करहु परीक्षा हीर।
दोषवंत मणि देख के ताहि न करिवे सीर ॥ ६३ ॥
लच्छन बिन पुन भंग है वरन च्यार कर हीन।
शून्य मंडली ताहि को कहियें रत्न प्रवीन ॥ ६४ ॥
हीरा निर्मल गुणहि युत योग मंडली धार।
देवहि दुर्लभ होई सो, गुण है तासु अपार ॥ ६५ ॥

अति निशद अठकूण है, पुनः पट्कूण विशाल।
सो हीरा दिन प्रति धरै, मुकुट बीच भूपाल॥ ६६॥
कोऊ कठ भुजानि मध्य, धरै ताहि धन धान।
रण अभग सुख संग तैं, उत्तम गुण सतान॥ ६७॥
भूपन हीरन को कहूँ, धरै गर्भिनी नारि।
गर्भपात निहचै हुयै, कह्यो तासु निरधार॥ ६८॥
गंधक अरु रसराज मिलि, वज्र योग रस राज।
नरपति सेवत सुख लहै, भोग योग यह साज॥ ६६॥
कबहु कपट न कीजियै, फल वाको अति दुष्ट।
मान महातम सब गलै, अतहि उपजै कुष्ट॥ ७०॥
कृत्रिम से जो ठगत है, वह है कर्म चडाल।
हत्याकारक मनुज कु, कहियै जाति चडाल॥ ७१॥

कृत्रिम परीक्षा :—

कृत्रिम कौ संसै पड्यौ, रत्न अछै शुद्ध अंग।
ताहि परीक्षा कीजियै, क्षार, खटाइ संग॥ ७२॥
जामै होवे कूर कछु, ताको वर्ण विनास।
पीछै धोवो सालि जल, निकलै कूर प्रगास॥ ७३॥
हीरा में हीरा घसै, सब सैं बड़ो कठिन्न।
ता कारण ए रत्न को, बज्र नाम धरि दीन॥ ७४॥

अथ हीरा हीरी वर्णनम् :—

(प्रति मे यह वर्णन नहीं मिला, स्थान रिक्त छोड़ा हुआ है)

॥ इति श्री हीरा प्रबन्ध प्रथम॥

● मुक्ताफल विचार ●

घन सें कर सें संख सें सीप, मच्छ अहि वंश ।
शूकर सें मुक्ता हुवै, आठें खानि प्रशंस ॥ १ ॥

घन मोती वर्णन :—

घन मोती कबहु गिरत, हरत भयप्रद बीचि ।
जैसी है बिजुरी चमकि, तैसी ताहि मरीचि ॥ २ ॥
सो मुक्ता सुरपुर बसै, सुरगण ताके जोग ।
मानव सें पावैं नहीं ताकों उत्तम भोग ॥ ३ ॥

गज मोती वर्णनम् —

विन्ध्याचल ताके निकट बीच महावन सोइ ।
भद्र जाति हस्ती तिहां ताके मस्तक होइ ॥ ४ ॥
दूजो स्थान कपोल हैं पर हो मुगता हीन ।
अंग गात्र पीयरी झलक दुष्ट निफल कहि दीन ॥ ५ ॥

मच्छ मोती वर्णनम् —

तिम तिमिंगल मच्छ के मुख मह मोती होइ ।
मानस कु नाहिं मिलै वेद प्रयासें सोइ ॥ ६ ॥
गुरु मान लघु गात्र रुचि पाडल पुष्प समान ।
किंचित् आभा हरित हुइ ता सम ना कोऊ आन ॥ ७ ॥

सर्प मोती वर्णनम् :—

कोऊ वृद्ध फणिंद के फणधर मोती जोइ ।
अति उज्वल नीली झलक फल अशोक सम होइ ॥ ८ ॥

ताकौ धारत भूप जों, विप पीड़ा नहिं होइ।
गज वाजी सुख सपदा, जा घर मुगता सोइ॥ ९ ॥

वंश मोती वर्णनम् :—

उत्तरदिशि वैताढ्यगिरि, ता ढिग है कोउ वश।
आठ अधिक शत गठ है, ताकी जाति सुवश॥ १० ॥
ताके ऊर्द्ध विभाग मे, नर मादी की जोड़ि।
ता सम मोती ना मिलै, जो खरचै धन कोड़ि॥ ११ ॥
ता मझि देव निवास है, पूरै पूरण ऋद्धि।
गज वाजी अरु सुन्दरी, दायक ऋद्धि समृद्धि॥ १२ ॥
तीन साझि पूजै जुगति, धरि थिर चित्त सदाय।
रोग दोप विष वैर का, भय कवहु नहि थाय॥ १६ ॥
उज्वल अति द्यु ति चीकनी, वेणु कपूर मरीचि।
उग्र पुण्य के योग तें, रहिहै पुरुष नगीचि॥ १४ ॥

शंख मोती वर्णनम् :—

उदधि वीच जो स ख है, त्निन सै नावत हाथ।
लघु वन्धु लक्ष्मी तणो, ता संग सपत साथ॥ १५ ॥
सध्या रुचि सम वान है, गुण जाका असमान।
पुण्ययोग तैं सो मिल्यां, लक्ष्मीपति सो जान॥ १६ ॥

शूकर मोती :—

वन वाराह कोऊ किहां, ता सिर मोती जाणि।
अति सुन्दर है शास्त्र में, वेर मान परमाण॥ १७ ॥

सीप मोती वर्णनम् :—

सीप तें मोती नीपजे सो मानवं सब लोग।
मास आमोजे ऊपजे स्वात जलन्द संयोग ॥ १९ ॥
मुक्ता आगर सात हैं, नाम कहुं निरधार।
जल में जेती जात है तेती जात विचार ॥ १६ ॥
सिहलद्वीपी काहली वारण आरव ठीक।
पारसीक बाबर भलों नाम कह्या तहतीक ॥ २० ॥
ज्योति बडे अति चिकनी, चिक्क मधु सम रंग।
अति बहु लता सोमही, सिंघल काहली अंग ॥ २१ ॥
वारण आरव श्वेत है ज्योति चन्द्र सम होत।
सामे पीरी छवि तनक निर्मल अधिकी ज्योति ॥ २२ ॥
श्वेत स्त्री सु निर्मलो पारसीक सब जाण।
रंग ज्योत के भेद तें च्यार ठाण पिछाण ॥ २३ ॥
स्वर्ण सीप उदधि में रहि हैं सूप समान।
ताकी मुक्ता अति सरस जाती फल सम मान ॥ २४ ॥
देखे दुर्लभ होइ सो ताके मृगमेद गन्ध।
कोडि एक सुवर्ण को ताहि मोल प्रतिबन्ध ॥ २५ ॥
अति परतापी कांत से अधिक ज्योति ता अंग।
ता गुण अपरंपार है कुंकुम सम तो रंग ॥ २६ ॥

मुक्ताफल के फलाफल विचार कथन :—

पट गुणी नव दोष है, तीन छाय अठे मोल।
रत्न विशारद यूं कहै, सात जाति अठ तौल ॥ २७ ॥

नव दोष कथन :—

सीप फरस रु जाठरा, मच्छ नेत्र पुन लाल ।
त्रि आवर्त्त चापल्यता, म्लान दोप तसु भाल ॥ २८ ॥
दीरघ एक दिशा कह्यो, निष्प्रभाव निस्तेज ।
वृद्ध च्यार तुछ पंच है, गिणल्यो धरकै हेज ॥ २९ ॥

चार वृद्ध दोष :—

सीप लग्यो मोती भण्यो, स्पर्श दोष तसु षोष ।
मच्छ नेत्र सो देखिये, सो मच्छाक्षी दोष ॥ ३० ॥
रक्त तुच्छ जल वीच में, सो जठरा तुम जाण ।
चौथो दोष जु रक्तता, वड के च्यार पिछाण ॥ ३१ ॥
सुक्ति स्पर्श मोती भयो, सदा धरै दुख पोष ।
ताकै सग तै होत नहिं, कवहु तनिक सतोष ॥ ३२ ॥
द्रव्य हरत है जाठरा, मच्छ नेत्र दुखकार ।
रक्त दोष आयु हरे, च्यारहि दोष निवार ॥ ३३ ॥

लघु पंच दोष कथनम् :—

तीन चक्र जामै वण्या, करै जु धन के नास ।
बहुरंगी को दोष है, चपल कुजस को वास ॥ ३४ ॥
मलिन मध्य मली कहौ, करै जु बल की हानि ।
दीरघ मुक्ता योग तें, मदमती वह जानि ॥ ३५ ॥
तेजहीन निस्तेज तें, उद्यमता सब हीन ।
पाच दोष लघु जाणि कै, ता तैं त्याग जु कीन ॥ ३६ ॥

सामान्य दोष कथन :—

रेख शर्करा जाछगि रहौ, फटी ज तामें रेख।
वेध्यो अंगज दोष है, मोल साहि कम लेख ॥ ३७ ॥
पीरी तामें छवि परे, एक ओर गुण चोर।
सो मुक्ता कुन काम को, आयु हरत यह दोर ॥ ३८ ॥

षट गुण कथन —

तारा ज्योति प्रथम्म है, द्वितीयह भारी तोल।
अति चिकनाई तीसरो, ओर कह्यो अति गोल ॥ ३९ ॥
गात बडे ए पांचमों, छट्ठो निर्मल तेज।
ए फलदायी जगत में, धारौ अति धर हेज ॥ ४० ॥

छाया विचार कथन :—

सेत पीतर मधु सभी, कही श्याई इह तीन।
पहिल छाया हीन है, ओर श्याय नहिं हीन ॥ ४१ ॥
उज्वल भारी चीकणो, बत्तु ल निर्मल तेज।
दर्पण ज्योति झीलती, कबहु न कीजै जेज ॥ ४२ ॥

मोल प्रमाण :—

गु ज एक तें दाम धरि, सात रजत मुखगीश।
दोइ गु ज सम ताहि के दाम धरौ तुम बीस ॥ ४३ ॥
तीन गु ज शत अद्ध है, मोल असी चिहुं गुंज।
पांच गु ज द्व शत कह्यो, चार सया दश गु ज ॥ ४४ ॥

सात गुंज तन सात सै, एक सहस अठ गुंज ।
चौदहसै नव गुंज को, द्वाविंशत दस गुंज ॥ ४५ ॥

एकादश गुंजा कहै, अठावीस शत जाण ।
द्वादश गुंजा मोल है, च्यार सहस्र समान ॥ ४६ ॥

तेरह रती प्रमाण है, छह सै छ हजार ।
यातै बाढि तुला चढै, ताहि मोल अधिकार ॥ ४७ ॥

रत्नपरीक्षा जाणका, यह है सब को बोल ।
तोल सवाया तोल है, मोलहि दुगुणा मोल ॥ ४८ ॥

तिगुण वढ्या तें वोलियै, मोतिन तिगुणा मोल ।
तीस गुंज तातें वढ्या, ताहि चौगुणा मोल ॥ ४९ ॥

आठ तीस गुंजा चढ्या, ताहिं पंच गुण मोल ।
एक लछि ऊपर अधिक, एक सहस पुन बोल ॥॥ ५० ॥

मोती चौसठ गुंजको, ताहि लेत नर कोइ ।
कोर एक तसु देय कै, मोल लेत है सोइ ॥ ५१ ॥

सामान्य मोल भेद कथन :—

सवगुण मोती युक्त है, मच्छ नेत्र कहु होइ ।
ताकै गुण सहु व्यर्थ है, ताहि न ग्रह्यो कोइ ॥ ५२ ॥

कृत्रिम परीक्षा कथनम् :—

मुक्ता कौ भ्रम मेटवा, लोन गोमूत्रहि लेइ ।
सेत वसन ते बाँधिकर, प्रहर च्यार धर देइ ॥ ५३ ॥

पीछे मदन कीजिये हथारी के बीच।
कूर कपट ताको सहु, काढत है यह सीज ॥ ५४ ॥

नर मादा मोती की परीक्षा कथनम् —

उबल विमल सुवृत्त है, सब गुण मोती सार।
निदू षण ल्यावे अधिक, सो मुगता भीकार ॥ ५५ ॥
ऐसे मोती युग्म है, चौवीस रती प्रमाण।
अठ चौवीसा गुण सम, नर मादी वसु जाण ॥ ५६ ॥
॥ इति मुक्ताफल विचार ॥

मानक व्यवहार

रोहणाचल के पास है, श्रवण गंगा विस्तार।
गिरि सरिता के बीच है माणक तीन प्रकार ॥ १ ॥
तामें माणक नीपजे नील रत्न पुष्फराग।
तीनु एकहि खाण में संग होय त्रिहुं लाग ॥ २ ॥
पद्मराग पहिलो कह्यौ सौगंधी पुन भेद।
कुरुविंद तीजौ कह्यो तीनु माणक भेद ॥ ३ ॥
रोहणाचल आवे कह्या संभल राडल रत्न।
रंभर तु बर ए कह्या तावे अधिक अपून ॥ ४ ॥
रोहणाचल सहु के सिर, सिंघल कुंकम खाण।
कालब गौर्सर मध्य है, तु बर ग्रान न खाण ॥ ५ ॥

रधू खान सो अधम है, नाम मात्र मण जाण।
रग रूप तामै नहीं, उपजै मणकी खाण ॥ ६ ॥

चार खान का वर्ण कथन :—

पद्मराग अति सोभहि, चिकनी द्युति अति लाल।
निर्दूपण शोभै भलो, रोहणाचल ते भाल ॥ ७ ॥
पद्मराग लाली लियै, सिघल ताकौ थान।
डाहल पीरी झाइ है, रधू ताम्र सम वान ॥ ८ ॥
हरित प्रभा तैं जाणियै, तुवर मणि की खान।
क्राति राग कुं देख कै, सब कै आगर जान ॥ ९ ॥

सोलह छाय दश दोप कथन :—

माणक तीनु वर्ग के, ताके भेद विचार।
सोल छाय दस दोष है, मोल जु तीस प्रकार ॥ १० ॥

दस दोप विचार :—

प्रथम विछाय द्विपद है, भग जु कर्कर धारि।
मस खड पचम लसुन, कोमल जडुता धारि ॥ ११ ॥
धूम्र दोप चीरी दसम, वरणु तासु विचार।
धार्यें ता सग ऊपजै, सुणज्यो सो अधिकार ॥ १२ ॥
त्रि छाया इकठी मिलै, अथवा छाया हीन।
वदन विछाई ताहि सैं, देश त्याग कहि दीन ॥ १३ ॥
जैसो पाव मनुष्य को, ता सम लछन होइ।
द्विपद दोषी सो कह्यो, कवडी मु हगो सोइ ॥ १४ ॥

तासे रिण में भंग है मरण अचानक जाण।
ताकु कहुं न धारिये आघ घटी परमाण ॥ १५ ॥

भग होइ कर सें परख्या भंग दोष सोई होइ।
ताते मूरख हीनमति दीन हीन विदरोह ॥ १६ ॥

नारि मरै विधवा हुवै बंश छेद तत्काल।
ए लक्षण है भंग के ताहि तजो मतिपाल ॥ १७ ॥

कंकर दोषी ते कह्यो, गर्भित कंकर रूप।
मित्र बंध सुख संग तें तातें करत विरूप ॥ १८ ॥

लसुन दोष ताको कह्यो, फल अशोक सम बिंदु।
दुष्ट बिंदु सी मधु समो महादुष्ट दुख कंद ॥ १९ ॥

चूरण लेहु कुरंज को, मर्दन कर ता संग।
तनक तेज कछुइ घसै ताको कोमल अंग ॥ २० ॥

जड़ दोषी प्रकाश बिन रंग बहु कछु होइ।
अपकीर्ति की खाण है ससय धरा न कोइ ॥ २१ ॥

धूम्र दोष ते धूम्र सम ते माणक बकवास।
हीनमती ता संग ते धारत उपजै लाज ॥ २२ ॥

मंस गंध सो जो कहुं, होइ है माणक बीच।
ताको फल कुछ हीन है ताहि न धार नगीच ॥ २३ ॥

जो माणक रेखा कीटिये अधीरी तह नाम।
धारन ते पुछ फल नहीं मोछे तमु घट दाम ॥ २४ ॥

माणक रंग विचार—

तीन रग ताके कहु, सुणज्यो हित चित आण।
फल अशोक कै रग सै, दायक सो रिधि जाण॥ २६॥
माणक मधु कै वर्ण जो, सो फलदायक जाण।
वेर रग सौं तै सदा, दुखदाई अरु हाण॥ २७॥
जड़ दोषी प्रकाश विन, रग वद्व जसु होइ।
अपकीर्ति की खान है, ससय धरो न कोइ॥ २८॥

सोलह छाय कथन :—

केसू सवल लोधू के, रग दुपुहरी फूल।
इन्द्रगोप कोसभ कै, खजुवा चिरमी फूल॥ २६॥
केसर रग सिन्दूर कै, लाक्षा हिंग जु रग।
पिक सारस के नेत्र सम, दार्यों कुसुम सुचग॥ ३०॥
ए सोरह छाया लियैं, माणक होत प्रसग।
माणक तीने वर्ग मे, सोलह छाय सुचग॥ ३१॥

पद्मराग वर्णनम् :—

इन्द्रगोप के रग है, पिक चकोर की चक्षि।
दारौं फूल सुरग जो, पद्मराग इन लक्षि॥ ३२॥

कुरुविंद वर्णनम् :—

लोधू दुपुहरी फूल कै, चिरमी आध सरूप।
जैसि छांव सिंदूर की, ए कुरुविंद सरूप॥ ३३॥

सौगधी वर्णनम् :—

केसर छाया हींगळू जैसी खाय सोगंधि ।
कछु काई नीली लिये, छवि जाकी अनुबंध ॥ ३४ ॥

सामान्य भेद :—

कान्तिराग छाया सहु, मैल होत सम तीस ।
मोल भेद पहचान के धारें अधिक जगीस ॥ ३५ ॥
कांति रंग उच्च गती और अधोगति जान ।
पार्श्व गती रंग होत है, तीनु अधम बखानि ॥ ३६ ॥

रंग विस्वा ज्ञान कथन :—

पद्मराग के रंग का विरवा जाणन हेत ।
रत्नपरीक्षा शास्त्र में, एहिम प्रयों संकेत ॥ ३७ ॥
मणि विरवा जाणे बिना, मोल न जानत मूल ।
रंगभेद बूझ्या बिना ताकी न मिटत सूल ॥ ३८ ॥
ता काजे इक गु कसे धरिये सरस्सु सेत ।
ता पर गु जा एक सम मानक धरिये हेत ॥ ३६ ॥
प्रात समे रवि किरण से, ताकी प्रभा निहाळ ।
ताहि प्रभा से कमळवे तेता विरवा माळ ॥ ४० ॥
जैसी भांति निहाळ के गिणीमे विरवा रंग ।
गात रंग विरवा गिणो धरिये मोल सुचंग ॥ ४१ ॥
ब्राह्मण विरवा ग्यारहे क्षत्रिय विरवा तीन ।
वैश्य दु विरवे जाणिमे शूद्र हि एकत्र लीन ॥ ४२ ॥

माणक मोल कथनम् :—

माणक च्यारा और सु, पिंड होइ जव एक ।
द्वै शत मोल कहीजिये, ताको धरिय विवेक ॥ ४३ ॥

पद्मराग के मोल सैं, भाग चतुर्थ जु ऊन ।
कुरुवंदी कु जाणियै आध सौगंधि जबून ॥ ४४ ॥

एकै यव ते घाट है, एक ही यव तें बाढ ।
यव तें आठ प्रमाण लौ, दुगुणा दुगणा बाढ ॥ ४५ ॥

सौगधी मत भेद सें, ऊरध गुन जो होइ ।
मोलै आठ गुनौ कह्यौ, इस में भूल न कोइ ॥ ४६ ॥

मध्य गुनी को मोल है, निश्चय सैं सत पाच ।
दैन लैन को मोलहै, मैं कहि दीनौ साच ॥ ४७ ॥

घाट सुघाटै ज्युं वढै, ताहि मोल अधिकाइ ।
घाट वर्ण ते हीन है, त्यों त्यों मोल घटाइ ॥ ४८ ॥

क्राति एक सरस्यु चढै, द्वै शत चढियै मोल ।
एक सरस्यु हीनते, द्वै शत घटता बोल ॥ ४९ ॥

उत्तम आगर को बन्यो, होइ जु लछन हीन ।
तोल वाधि मोलै चढै, यामे मेख न मीन ॥ ५० ॥

मानक हरुओ हीन है, हीरो हरुवो वाढ ।
हीरो भारी हीन है, मानक भारी वाढ ॥ ५१ ॥

कुरुवदी सौगध ते, पद्मराग गुन वाधि ।
हीन छाय ना होइ तौ, ताको गुन अति लाधि ॥ ५२ ॥

अच्छा माणक देत है ऋद्धि रमण भडार।
शत्रु सबै भागे फिरै, ता सग तेज अपार ॥ ५३ ॥

परीक्षा कृत्रिम की —

माणक देख्या काहु कै उपज्यो कुछ संदेह।
कृत्रिम के ससय पड्यां करौ परीक्षा एह ॥ ५४ ॥
घरी दोई ताकु घसौ जे न होइ अविरुद्ध।
मन का धोखा टालिकै, मोल म्है धरि शुद्ध ॥ ५५ ॥
पदरागरु नील मैं वज्र करत है छेक।
वज्र बिना जे रत्न है, यातैं अधिक न देख ॥ ५६ ॥
मुसका चिहुं विस्वा छ्यै ता पर चूनी लाग।
चूनी विस्वा बीस लौं माणक ता पर ठाण ॥ ५७ ॥
एक गुञ ते आद ले गुञ गुणो त्रय बीस।
पच दश विस्वा अधिक माणक ताहि कहीस ॥ ५८ ॥
पाद हीन चौबीस लौं माणक होइ बहाल।
तार्थे अधिको जो चढयौ ताकु कहियइ लाल ॥ ५९ ॥

इति श्री मुसका चूनी मानक लाल विचार कथनम्।

नील रत्न विचार

माणक जेती खान है, तेती खान जु नील।
वर्ण च्यार ताके कहु, सुनत न कीज्यो ढील ॥ १ ॥

श्वेत छवी ब्रह्म कह्यौ, क्षत्रिय रक्त पिछान।
पीत प्रभा से वैश्य है, शूद्र जु श्याम पिछाण ॥ २ ॥

च्यार गुण छ दोष है, छाय एकादश भेद।
सोरह भेदे मोल है, गिणल्यो धरि उमेद ॥ ३ ॥

च्यार गुण वर्णनम् :—

पहिलै भारी गुण कह्यौ, चिकनाई अति ज्योति।
रजक गुण के योग ते, ए च्यारे गुण होत ॥ ४ ॥

श्वेत वस्त्र ऊपर धर्यो, वस्त्र प्रभा होइ नील।
सब मे उत्तम ते कह्यौ, रजकता होइ सील ॥ ५ ॥

उत्तम गुण नीला कह्यौ, लखमी दायक जाण।
एकादश छाया कही, ताका करत वखाण ॥ ६ ॥

एकादश छाया कथन :—

नारायन के रग सम, मोर भमर की पाख।
शुक्र कठ पिक कंठ सी, सैन गऊखी आंख ॥ ७ ॥

फूल पात सरेस कै, अरसी फूल समान।
एकादश छाया कही, नील नीलोत्पल वान ॥ ८ ॥

सेन गऊ के नेत्र की ए दोइ छाय विरुद्ध।
ऐसी छाया नील महि ओर कही सब सुद्ध ॥ ९ ॥

दुग्ध लेहु गो भैंस कौ निसिभर ताके बीच।
दुग्ध होत नीलो छवै, ताकु मन धर खीच ॥ १० ॥

इन्द्रनील मणो कह्यौ चंद्र रेख तिन माहि।
ता मण के संयोग तें, दुख दूर ह्वसि जाहि ॥ ११ ॥

तोक्ष दूखे रंगकु, रंजक अपने रंग।
ताइ मोल ताकी लहै, मणि है सोइ सुचंग ॥ १२ ॥

नील रत्न गुण युक्त है निर्दोषी सुविवेक।
ताकी मोल्य पंचासे, पिण्ड धम्यो यव एक ॥ १३ ॥
एक पक्ष रंजक धरे, दूजै पक्ष रंग हीन।
तेसदंत विकनी विलक, ताकु उत्तम चीन ॥ १४ ॥

तीन अवस्था :—

हिम सींच्यो सूर्य ढरै शोभित अलसी फूल।
ताइ कह्यो ता रंग तें देखत कान्ति न भूल ॥ १५ ॥

वही फूल दुपहोर मैं, श्याम रूप रुचि हीन।
वही रंग नीला धरैं, छबि ताहि कहि हीन ॥ १६ ॥

सूर्य अस्त समै बनी अलसी फूल जु भाय।
ऐसो जब देखाइ है सो परिपक्व कहाय ॥ १७ ॥

च्यार दोष कथन :—

अभ्र छाय पुन कर्बुरो, रेख भग विंदु लाल।
मिटी उपल मध्य है, मस खड पुन जाल ॥ १८ ॥

अभ्र छाय जो नील कु, धरे नरेसर कोई।
तापर उल्कापात हो, वश अचानक खोइ ॥ १९ ॥

कर्बुर दोषी सग तें, रोग असाध लहेइ।
रेख दोष तन पीव हुइ, वाघ वयाल भखेइ ॥ २० ॥

भंग दोष नीला धर्यें, नर पुरुपारथ जाइ।
नारी धारन जो करै, तसु भरता मरजाइ ॥ २१ ॥

रक्त बिन्दु अति दुष्ट है, ताहि न धरज्यो कोय।
मध्य मिटीया दोष है, मास सरीरहि खोय ॥ २२ ॥

मध्य पाषाणी दोसतैं, लगैजु मस्तक घाव।
रेण भगी ता सग तै, लगै जु दुर्जन दाव ॥ २३ ॥

मस खंड कै योग तै, हरै जु सपति सुख।
आधि व्याधि चिन्ता करत, पुन देवहि अति दुख ॥ २४ ॥

भाति भाति के होत है, पृथवी माहि पाषाण।
शुद्ध मणी वैही भहै, रतन परीक्षा जाण ॥ २५ ॥

शुद्ध नील के सगते, वाधत लच्छि अभग।
शनि पीड़ा व्यापै नहीं, यश सोभाग सुचग ॥ २६ ॥

॥ मरकत विचारो लिख्यते ॥

च्यार जाति पन्ना कह्यो प्रथमै गरुड़ोदूगार।
इन्द्रगोप वंश पत्र सो, चवथो धूवाधार ॥ २९ ॥
गरुड़ोदूगार सदा भलो इन्द्रगोप सुखकार।
लक्ष्मी संपद पूरवै मेटै विपदि विकार ॥ ३० ॥
भाग्यवंत कु मिलत है, मरकत जे निर्दोष।
बारह छाया पंच गुन सात कहे तिहि दोष ॥ ३१ ॥

सात दोष कथन :—

रूखो फूटो मलिन है, कंकर मध्य पाषाण।
सिपकी सठरा ताप है, करल्यो ताहि पिछाण ॥ ३२ ॥
रूखे राखा रूपलत, शीघ्र रोग तसु अंग।
मंगल रिण में भंग है लगे घाव सिरभग ॥ ३३ ॥
मध्य पाषाणी संग तें बंधव वनिता वैर।
बंधा-पोला दोहिला ए सहु मलकी लैर ॥ ३४ ॥
पुत्र मरण कंकर करे, जाठर सिम सरप्प।
शिपका दोषी संग तें गहै महाविष सर्प्प ॥ ३५ ॥

पन्ना गुण कथन :—

गात बड़े सु स्निग्धता, स्वच्छ हरियाइ अंग।
क ति बड़ी भलक है, पुन है रंजक रंग ॥ ३६ ॥
गात बड़े मोटै पड़ी अति स्निग्ध बहु मोल।
हरी कान्ति पाया हुवै बड़ती ताहि सु मोल ॥ ३७ ॥

नीलोत्पल पत्रै ठव्यो, दीसत स्वच्छ शरीर।
स्वच्छ गुनी ताकू कहौ, जानहु लिछमी वीर॥ ३८॥
कान्त वडी सोई लहै, दायक अधिक मूल।
गात अखंडित ताहि कौ, गिणता मोल न भूल॥ ३९॥
रंजक सूर्य सामुहौ, धरके करो विचार।
कान्ति हरी ताकी अधिक, सो कहु रजक सार॥ ४०॥

छाया विचार :—

सूवा मोरा चांस पिछ, थूथ सोवा दूब छाय।
पता फूल सरेसका, वेणु पत्र वतलाय॥ ४१॥
ए सहु छाया में कही, पन्ना रतन मझार।
तामे भेदा भेद कर, च्यारू वरण विचार॥ ४२॥
नीली छायै श्याम कति, थूथा रग समान।
नील श्याम ताकी कही, पहिली जात वखान॥ ४३॥
रग हर्य छवि श्वेत है, सरेसपत्र सम वान।
सेत श्यामता नाम है, दूजी जात सुजान॥ ४४॥
शुक पिच्छ सम रंग है, कंति सुवर्ण सरीखि।
पीत नील ताकौ कहौ, तजी जाति परीख॥ ४५॥
स्नेह द्यु ती वर्ण हर्यौ, तनक तनक सेवार।
जात चतुर्थी एकही, रक्त नील निरधार॥ ४६॥
पन्ना इतनी भाति का, नर पावै बड़ भाग।
मद भाग्य कु ना मिलै, धारक सकल सोभाग॥ ४७॥

चक्रवर्ती के भाग्य है वासुदेव पद लाग।
रत्न काकणी सो हरै धार्यै सकल सोभाग ॥ ४८ ॥
कोट सुवर्ण दे ताहिकौ पद्मराग सम मोल।
थावर जंगम जे सहु विष निर्विषता बोल ॥ ४९ ॥

मोल गुण कथन :—

सेत स्याम शुक पिच्छ सो विस्तीरण गुण संग।
दीसत तामें पद जिम ताहि मोल सहु चंग ॥ ५० ॥
जैसा फूल सरेस का वर्णकहुं वसु साच।
एकादश शत मोल है पिंड होइ जब पांच ॥ ५१ ॥
रंग हीन जु होइ तौ, ताहि मोल शत पांच।
छाया वर्ण विचार के ताहि मोलकरि सांच ॥ ५२ ॥
ऐसे जब की बाढ़ता, बुद्धिवंत कहि देत।
जब आठांकी मोलहै, सहस चौसठै हेत ॥ ५३ ॥
जो अनेक रंगै वण्यौ अवगुन गुन सें हीन।
ताका देवो पंच शत, देत न होइ मलीन ॥ ५४ ॥

कृत्रिम परीक्षा :—

बुधहु चित में ऊपज्यो शुद्ध अशुद्ध विचार।
ऐसे भ्रम कु मेटबे, ताहि सुनो उपचार ॥ ५५ ॥
पाथर संग मलीलिये सबै नांहि अविरुद्ध।
तातें यह पिछानिये जाति वरण ते शुद्ध ॥ ५६ ॥
महारत्न पांचू कहै सुगता हीर पदम।
नीला मरकत पांचमो, ताहि कह्यो सहु मर्म ॥ ५७ ॥

॥ अथ चार उपरत्न विचार ॥

पुष्फराग गोमेद है, लहसुनिया प्रवाल ।
ए उपरत्न चिहु कह्या, गुण सुणज्यो तत्काल ॥ १ ॥

(१) पुष्फराग वर्णन :—

पुष्कराग चिहुं भेद है, जरद (१) सोनेला(२) जाण
धनेला (३) कर्कतनी (४) चारू लेह पिछाण ॥ २ ॥

पुष्कराग रंग वर्णनम् :—

पीत रग पुष्कराग है, सणकै पुष्प समान ।
निर्मल काति पराग युति, चिकनाइ सगवान ॥ ३ ॥
निर्दोपी वर्ण विशद, कोमल अग सुरग ।
स्वच्छ मनै अर्चा किये, ता घर लच्छि अभंग ॥ ४ ॥
पुत्रलाभ ता सग तै, सव सपति कौ वास ।
नृप सतोप धरै सदा, जस ताको जग खाश ॥ ५ ॥

(२) गोमेदा वर्णनम् :—

गोमेदक तासौ कह्यौ, वह गोमूत समान ।
गात वढै अति निर्मलो, चिकनी द्यु ति ए जान ॥ ६ ॥

चार वर्ण वर्णनम् :—

ब्राह्मण वर्ण सेत है, क्षत्रिय होत अरन ।
वैश्य पीयरे जानियै, शूद्र जु श्याम वरन ॥ ७ ॥
पीरी छवि ताकी सरस, विशद गात है जास ।
गोमेदा उत्तम कह्यौ, मोल अधिक है तास ॥ ८ ॥

(३) लहसनीया वर्णनम् :—

तीन क्षेत्र पहचानिये प्रथम लहसन के सार।
कनक क्षेत्र धु क्षेत्र है, पुष्पराज सिरदार ॥ ९ ॥
कनक क्षेत्र सब में अधिक, धु पुष्पराज जु हीन।
क्षेत्र एह लहसुन के, गिमरुयौ मुरतैं तीन ॥ १० ॥
म्लेच्छ खंड के मध्य में श्येनक आगर एक।
तामें लहसुन ठानिये, संधि सूत्र सुविवेक ॥ ११ ॥
पीत प्रभा तामें अधिक मोर ग्रीव के रंग।
कनक क्षेत्र है ताहि के संधि सूत्र तिहि संग ॥ १२ ॥
मार्जारी के नेत्र सम झलकत तेज अपार।
अंधारी निशा के लखैं, चिलकै तेज अगार ॥ १३ ॥
कर्कोटक ते जानिये कठिन चीकने अ ग।
अति ही कान्ति विराजत है, ता मध्यिसूत्र सुचंग ॥ १४ ॥
एक दोय अथ दोय ईं अरू अढाई सूत।
शुद्ध सूत्र ते जानिये महालक्ष्मी कौ पूत ॥ १५ ॥
सूत नेत्र दोमु मही झलकत तारा जेम।
जबरजद सोनाम है मध्य गुनी कहो पेस ॥ १६ ॥
तातै हीन सु कान्त है, स्वच्छ वस्त्र समान।
अधम गुनी सो होत है कहिये चपरी मान ॥ १७ ॥

अथ प्रवाल अपरनाम मुंगा वर्णनम्

सिन्धु वीच पूरव दिसै, हेंम कु दला सेल।
मु गा तहा निरतरे, ऊगत है अति फैल ॥ २० ॥
रग दुपुड़री फूल सो, दार्यो कुसम समान।
जैसो फूल कणेर को, पुन सिन्दूर कै वान ॥ २१ ॥
पाहण जेम कठोर है, धरै स्वाभावक रग।
कीटक सगी ना हुवै, सो परवाल सुचग ॥ २२ ॥
मु गा सीढी पाच हे, रग भेद बाईस।
कल रगा पहला कह्यौ, सहज रग पभणीस ॥ २३ ॥
मिट्ठ रगा अरु पांवरा, फीका पचम जाण।
घोर उतारस मिट्ठरग, पांवर फींका माण ॥ २४ ॥

॥ इति प्रवाल समाप्तम् ॥

नवरत्न के रंगवर्णनम्—

हीरा मोती स्वेत लाल माणिक्क वखाणौ।
नीला रग हे श्याम हरी छवि पन्ना जाणो ॥
सेत पीत गोमेद पुष्कराग तन पीरे।
ल्हसुनी नेत्र बिलाव कह्या मूगा सिन्दूरे ॥
नवे रत्न नवरग है, रत्न परीक्षा जाण (नर)।
वाणी एह सुचग है उत्तम गुणको खाण ॥ २६ ॥

नवरत्न के स्वामी वर्णन कवित्त—

माणक स्वामी सूर्य, चंद्र मोती बखाणो ।
मंगल मू गा स्वामि ईश पन्ना बुध आणो ॥
वृष गुरु पुष्कराज असुर गुरु हीरा स्वामी ।
इंद्रनील को ईश राहु गोमेदक धामी ॥
——— ————सहसुनिमा कहत कई ।
सकल मनोरथ नितफलै । नव रत्न स्वामी कई ॥ २७ ॥

नवरत्न के घर वर्णनम्—

॥ दोहा ॥

वसु ख च्यार त्रिकोण है, नाग पत्र पंच कोण ।
आठ कोण गाला समो सूर्यदिक ए भौण ॥ २८ ॥
सूप समो घर राहुको, केतु धजा सम होइ ।
यही भांति विचार के, नव घर दिनप्रति जोइ ॥ २९ ॥

नवग्रह परख उच अंश वर्णनम्—

॥ कवित्त ॥

मेष दश वृष तीन गिणहु मकरे अठवीसह ।
कन्या से गिण पनर कर्क के पंच गिणीसह ॥
मीन गिणौ सतवीस तुला के वीस पिछाणो ।
मिथुन पनरे गण्य केतु धनह पिण पनरे जाणुं ।
अनुक्रम ग्रह जाणी करौ ।
मुख पुहवी जुगत सें नर नरिंद निहचै भरौ ॥ ३० ॥

नवग्रह उच्च राशि वर्णनम्—

सूर्य मेषें जाणियै चद्र वृषै उच्च जाण ।
मगल मकरै उच्च है कन्या वुध पिछाण ॥ ३१ ॥
कर्कें वृस्पति जाणियै शुक्र मीन ते उच्च ।
एही मगते जाणियै तुल तै होइ शनि रुच्च ॥ ३२ ॥
राहु मिथुन कौ उच्च है धन कौ केत पिछाण ।
नौ ग्रहा की अनुक्रमे उच्च राशि ए जाण ॥ ३३ ॥

नवरत्न जड़नै का विचार वर्णनम्—

प्रथमै एक वनाइयै, वर्त्तुल गोल आकार ।
तामै नव घर धारियै, विच घर माणक धार ॥ ३४ ॥
तापर पूरव दिश धरौ, गिणलो श्रेष्ठ प्रकार ।
श्रेष्ठ धरै नव रत्न कुं, ता घर लच्छि अपार ॥ ३५ ॥
पूर्व अग्नी दक्षणी नैॠत, वायव्य पच्छिम जाण ।
उत्तर दिग् ईशान लौ, ए दिशि आठ वखाण ॥ ३६ ॥
हीरा मोति प्रवाल धरि, गोमेद नीलक धारि ।
ल्हसनिया पुष्कराज ते, पन्ना धारि सभारि ॥ ३७ ॥
परम उच्च जा दिन हुवै, तादिन जरियै सोइ ।
अही भाति नौ रत्न जर, धारन करौ स कोइ ॥ ३८ ॥
दुःख सोग दूरैं हरै, दायक अभिनव ऋद्धि ।
नव ग्रहै धारन किया, पुत्र कलत्र अति वृद्धि ॥ ३९ ॥

॥ इति श्री नवरत्न विचार सपूर्णम् ॥

नौरस नाम द्वादश वर्ण—
हीरा १ सुलेमानी २ (पंचरंगी) माणक २१ लहसनी ?
पन्ना १ मरगज २ (पचछाय) मोती १ छीला १ छाली २
पंच छाय पुष्कराग १ सोनैला २ ॥
सोनेला १ पंचछाय ॥ लहसणिया १ ॥
जबरजद २ ॥ गोमेदा १ ॥ पंचछाय ।
इति नवरत्न नाम विचार ॥ शुभंभवतु ॥

॥ ॐ नमः ॥

॥ छूटक रतन विचार लिख्यते ॥

स्फटिक रत्न विचार कथनम्—

फटिक च्यार प्रकार है, सुणज्यो शास प्रबन्ध ।
फाटिक है कान्ते कनक, पन रुचि हैं सोगंध ॥ १ ॥
सूर्यकान्ति १ शशिकांति २ है हंसकांति ३ जलकांति ४ ॥
ताका गुन मैं कहत हुं मम मत भरजो भ्रांति ॥ २ ॥

सूर्यकान्ति गुण वर्णनम्—

सूर्यकान्ति मणि लेइ करि उजल वत तस लेइ ।
अग्नि भरत ता मध्य तें, ततगिण म्हाबे कठइ ॥ ३ ॥

चंद्रक्रान्ति मणि गुण वर्णनम्—

ग्रीष्म रित में नर कहु, अति तृप व्यापति होइ।
चन्द्रकान्ति मुख में धर्यो, तिरपा मेटति सोइ ॥ ४ ॥

हंसगर्भ गुण वर्णनम्—

थावर जगम विप थकी, नरव्यापत कोउ होइ।
हसगर्भ जल खोल करि, पावत निर्विष होइ ॥ ५ ॥

जल क्रान्ति मणि गुण वर्णनम्—

जलक्रान्ति वंशाग्र धर, धरो जु जल के बीच।
नीर फटै चिहु ओर कौ, ताहि न लागै कीच ॥ ६ ।

रत्न चिन्तामणि गुण कथनम्—

हीराक्रान्ति समान द्यु ति, दोष रहित निज अग।
षट कौनौ हरवौ तिरत, टांक सवा शुभ रग ॥ ७ ॥
जा घंरि चिन्तामणि रहै, तीन साझि तिहि ठौर।
अरचाकरि फल लीजियै, ओरन की कहा दार ॥ ८ ॥

पीरोजा लच्छनम्—

॥ चौपाई ॥

पीरोजा जो पीयरें रगि, निर्मल दीठ करत तिहि सगि।
भाग्य जगत् अरु भजत दरिद्द,
वढत प्रताप करत रिपु रद्द ॥ ९ ॥

रक्तवर्ण पीरोजा जो बण्यौ, ताहि धरत फल गुरु गुन सुण्यौ।
वसीकरण या सम नहीं आन,
याहि धरौ मन धरि गुरु ज्ञान ॥ १० ॥

स्याम रंग, पीरोज प्रमाम, ताहि धरत विष माहिं निधान।
सर्पादिक विष अमृत पीयै
त्यौं नर अल्प आयु बहु जीयै ॥ ११ ॥

मणि विचार कथनम्—

मैंडक मनि अरु मनुज मनि सर्पम की मनि जानि।
ए तीनौ का जाति गुन तुम्हें कहूँय बखानि ॥ १२ ॥

मैंडक मणि लक्षण चौपाई—

हरित वर्ण अरु होत त्रिकोण, सिंघारन आकारन[1] और।
जोति बहुत गु जा तिहि मान
सोइ मैंडक मनि परमानि ॥ १३ ॥

मैंडक मणि गुण कथनम्—

जा धरि मैंडक मस्तक बनी, सदा जु होवत नर यह धनी।
धन विलसत नरपति के माम
वर अधिकार न खंडित आम ॥ १४ ॥

सर्प मणि कथन—

कम्मल सामल तनु तिहि रूप, अरु मसूल आकार अनूप।
हेजवंत दर्पन अनुहार तामैं प्रतिबिंबित आकार ॥ १५ ॥

तोल पाच गुंजा तिहि होत, कठिनाई एन गुन अधिक उद्योत।
वासिग कुल क्षत्र ह्वै नाग, ताके सिर उपजत यह लाग ॥ १६ ॥

सर्प मणि गुण कथन—

इन तें सर्पन कौ विप नसै, जल पखारि पीवत सुख लसै।
कवहु कंठ वध तिहि भयौ, जलनहिं
उतरत तिहि यह भयौ ॥ १७ ॥
सर्प डक ऊपरि मन धरौ, लगै ताहि तु वी परि खरौ।
विप पीवत प्रफूलत सोइ, विप टारन यह और न होइ ॥ १८ ॥
पीछे धरियै भजन भरी उतारि परत पद्म माक्षि जुहरी।
होत नील छवि पय जानियै,
जल पखारि निज घर आणियै ॥ १९ ॥

नरमणि विचार चौपाई—

कोऊ उत्तम नर जो होइ, ताकै मस्तकि उत्पति जोइ।
चौकोनी ह्वै पाडुर रग, पीत छाय ताकौ तनि सग ॥ २० ॥
च्यार गुंज सम ताकौ तोल, वस्तु अनोपम होत अमोल।
याके ढिग यह रहत सग्यान,
सो नर पूजा लहत सयान ॥ २१ ॥

रक्तवर्ण पीरोजा जो भन्यौ, ताहि धरत फल गुरु मुख सुन्यौ।
वसीकरण या सम नहीं आन,
याहि धरौ मन धरि गुरु ज्ञान ॥ १० ॥
श्याम रंग पीरोज प्रमाम, ताहि धरत विष मारहि निधान।
सर्पादिक विष अमृत पीयै
त्यों नर अरुप आयु बहु जीयै ॥ ११ ॥

मणि विचार कथनम्—

मैंडक मनि अरु मनुज मनि सर्पन की मनि जानि।
ए तीनों का जाति गुन तुम्हें कहुँय बखानि ॥ १२ ॥

मैंडक मणि लक्षण चौपाई—

हरित वर्ण अरु होत त्रिकोण सिंघारन आकारन और।
जोति बहुत गुंजा तिहि मान
सोइ मैंडक मनि परमानि ॥ १३ ॥

मैंडक मणि गुण कथनम्—

जा धरि मैंडक मस्तक बली, सदा शु होवत नर वह भली।
धन विलसत नरपति दे मान,
वर अधिकार न खंडित मान ॥ १४ ॥

सर्प मणि कथन—

कम्बल सामक तनु जिहि रूप, अरु मसूर आकार अनूप।
तेजवंत दर्पन अनुहार तामें प्रतिबिंबित आकार ॥ १५ ॥

तोल पाच गु जा तिहि होत, कठिनाई एन गुन अधिक उद्योत।
वासिग कुल क्षत्र ह्वै नाग, ताके सिर उपजत यह लाग ॥ १६ ॥

सर्प मणि गुण कथन—

इन तें सर्पन कौ विप नसै, जल पखारि पीवत सुख लसै।
कबहु कठ वध तिहि भयौ, जलनहिं
उतरत तिहि यह भयौ ॥ १७ ॥

सर्प डक ऊपरि मन धरौ, लगै ताहि तु वी परि खरौ।
विप पीवत प्रफूलत सोइ, विप टारन यह और न होइ ॥ १८ ॥

पीछे धरियै भजन भरी उतारि परत पद्म माक्षि जुहरी।
होत नील छवि पय जानियै,
जल पखारि निज घर आणियै ॥ १६ ॥

नरमणि विचार चौपाई—

कोऊ उत्तम नर जो होइ, ताकै मस्तकि उत्पत्ति जोइ।
चौकोनी ह्वै पाडुर रग, पीत छाय ताकौ तनि सग ॥ २० ॥

च्यार गु ज सम ताकौ तोल, वस्तु अनोपम होत अमोल।
याके ढिग यह रहत सग्यान,
सो नर पूजा लहत सयान ॥ २१ ॥

सोऊमाग्य अधिकारी कह्यो, सो प्रधान नर शास्त्र हि कह्यौ।
तिहि रणमाहि न जीतहि कोइ,

तिहां विवाद तिहां विजयी होइ ॥ २२ ॥

अभि आजात रहै न कमों घाउ,

यह नरमणि फलकौ कहै दाउ।

पढ़ै गुनै सो होइ सम्यान सुनत नराधिप दै बहु मान ॥ २३ ॥

॥ इति नरमणि विचार ॥

रत्नशिक्षा कथन—

रत्न जाति जेती विध कही, ताकी राखन की विधि यही।
सहम्य बम्यौं त्यों ही राखिबौ

धा करन घसिबौ धासिबौ ॥ २४ ॥

कबहूं कोइम घसीइ सोइ स्याम रतन छेदन तें कोइ।
धरन मठारन गुन की हानि,

ग्यान विशारद गुरु की बानि ॥ २५ ॥

॥ इति रत्न धारन शिक्षा कथन सम्पूर्णम् ॥

॥ चौरासी रत्न नाम ॥

पदमराग (१) पुष्पराग (२) गिनहौ पन्ना (३) कर्कैतन (४)।
वज्र (५) अनै वैडूर्य (६) चद्रकान्ते (७) वलि मनि भन ॥
सूर्यकान्ति (८) भनीश नवम जलकान्ति (९) कहीसह ।
नील (१०) अने महानील (११) इन्द्रनील (१२) सुजगीसह ।
रोगहार (१३) ज्वरहार (१४) है। विभवक (१५) विपहर (१६)
शूलहर (१७) शत्रुहरन (१८) सिरदार है ॥ १ ॥
रुचक (१९) अनैराग कार(२०)लोहिताक्ष (२१) अरुविद्रुम (२२)
मसार्गल (२३) हसगर्भ (२४) विमर (२५) अक (२६)
अजनद्रुम (२७) अरिष्ट गिनौ अठवीस (२८) शुद्धामुक्ता (२९)
श्रीकान्तह (३०) शिवकर (३१) कौस्तुभ (३२) प्रभानाथ (३३)
शिवकतह (३४) वीत सोग (३५) महाभाग (३६) है।
सौगध (३७) रत्न गगोदमणि (३८) प्रभकर (३९)
सौभाग है (४०) ॥ २ ॥
अपराजित (४१) कोंटीय (४२) पुलक (४३) सुमग (४४)
नें धृतिकरि (४५)।
ज्योतिसार (४६) गुणमाळ (४७) स्वेतरुचि (४८)
अरु पुष्टिकर (४९) ॥
हसमाल (५०) अशमालि (५१) पुनः भणियै देवानदह (५२)

गिणियै फाटिक खीर (५३) सेत फाटिक (५४) मुक्ति चंदह (५५)
नरमैंढक मणि (५६-५७) जाणियै ।
गरुडामुगार (५८) भुयंग मणि (५९)
चिन्तामणि पहिचानियै (६०) ॥ ३ ॥

॥ मधुकरमणि व्यवहारो ॥

अनेक रूप अनंत गुन, चिदानंद चिद्रूप ।
मयमथन गंजन अरी रंजन सकल सरूप ॥ १ ॥
ताहि नमनकरके सुनहु मणिके भेद विचित्र ।
ताके रूपरु गुन सुन्यां, बहुत भूप वर चित्र ॥ २ ॥
दक्षिण दिशा रेवा नदी बहैजु अति गंभीर ।
रत्न पहार तहा रहै, गिरवर मंडन धीर ॥ ३ ॥
तहां गरुड़ अवूगार तें, महानदी मणि ताख ।
चली ज्योति परकास कर पाप पवन मल ज्वाल ॥ ४ ॥
नाम हिमा तें प्रगट हुई मणी जु नाना रूप ।
भोगद मोष्यद गदहरन सुकल गुनन को कूप ॥ ५ ॥

॥ चौपाई ॥

प्रथम मत्रमय देह बनाय गो सीसी रस लेपहु काय ।
पाछहि रत्न परीक्षा करौ, शास्त्र वचन मन में यह धरौ ॥ ६ ॥
धन हंस सम वर्ण जु होइ, नीकी रेखा जामहि कोइ ।
सेत रंग पर रेखा पीत रक्त रेखा पर धरियै चीत ॥ ७ ॥

श्याम रेख जामे परछाइ, नीलकठ ता नाम कहाइ।
ज्ञान भोग सौं देत जु घनौ,
दीरघ जीवत कर यह हम सुनौ ॥ ८ ॥
यो मनि हुय नक्षत्र कैमान, सेत रेख ता मध्य कहात।
सो मनि राखत होत कवीस,
वढत आयु सुख भोग जगीस ॥ ९ ॥
यो मनि कारी लियैं रेख, बिल्ली नयन समौ फुनि देख।
सोई करत धन लाभ अनेक, यह राखन कौ धरहु विवेक ॥१०॥
मणि जो लाली तन में धरै, अरु पारद रुचि तनक्कि्कपरै।
इन्द्रनील रेखा छवि सेत, द्रव्य देव ताकौ सकेत ॥ ११ ॥
शुद्ध फटिक सम रूप जु होइ, नीली रेखा तामैं कोई।
बिष्णु रूपना मानिक कौं नाम,
देत राज मन पूरन काम ॥ १२ ॥
कृष्ण विन्दु या मणि के मध्य, सो मनि पूरत सगरी सिद्ध।
पीत श्वेत रेखा नहीं बनी, स्वच्छ नाम ताही कौ गिनी ॥१३॥
बन्यौ कबूतर कंठ समान, ता महि सेत सिंदु ठहरान।
ताकौ दृढ चित करि जो धरै, ता तनकी विप पीरा हरैं ॥ १४॥
सारग नयन समी रुचि याहि, महा मत्त गज नेत्र लखाइ।
श्वेत विंदु कवहु तहा रहै, ताको विपहर सद्गुरु कहै ॥ १५ ॥
केइ हर्यँ केते ह्वै लाल, के दामिनि शुभ रुचि सुविशाल।
के पिक लोचन छाया बने, ए सबहिन के गुन यौ सुने ॥ १६ ॥
करि वाधत कोऊ नरराज, भूत प्रेत व्यतर सव भाजि।
जात ओर पीरा तिहि टरै, पृथवीपति जु प्रीति वहु करै ॥१७॥

गिमियें फाटिक खीर (५३) तेज फाटिक (५४) मुवि चंवद (५५)
नरमैंडक मणि (५६-५७) आनिये ।
गरुड़ादूगार (५८) मुयंग मणि (५९)
चिन्तामणि पहिचानियें (६०) ॥ ३ ॥

॥ मधुकरमणि व्यवहारो ॥

अनेक रूप अनंत गुन, चिदानंद चिद्रूप ।
मयमथन गंजन अरी रंजन सकल सरूप ॥ १ ॥
ताहि नमनकरकै गुनहु मणिके भेद विचित्र ।
जाके रूपरु गुन सुन्यो अवत भूप वर चित्र ॥ २ ॥
दक्षिण दिशा रेवा नदी, बहैसु अति गंभीर ।
रत्न पहार तहा रहै, गिरवर मंडन धीर ॥ ३ ॥
तहां गरुड़ उद्गार तें महानदी मणि काछ ।
चली ज्योति परकास कर, पाप पवन मल ज्याछ ॥ ४ ॥
नाम हिंमा तें प्रगट हुई मणी जु नाना रूप ।
भोगद मोच्छद गदहरन सुकल गुनन की कूप ॥ ५ ॥

॥ चौपाई ॥

प्रथम मत्रमय देह बनाय गो खीमी रस लेपहु जाय ।
पाछहि रत्न परीक्षा करो, शास्त्र वचन मन में यह धरो ॥ ६ ॥
तस हेम सम वर्ण जु होइ, नीली रेखा आमहि सोइ ।
सेत रंग पर रेखा पीत रक्त रेख पर परिखै चीत ॥ ७ ॥

विष वीछु काटत पुरत, मेटत तनु दुख जाल ॥ २८ ॥
अर्द्ध कृष्ण पुनि अर्द्ध महि, लाली उजरी छाय ।
तनक परत सब विष हरत, कहत गुनी ठहराय ॥ २९ ॥
रक्त देह पुनि रेख तिहां, रक्त वनी शुभ छाय ।
भमर परत ता मध्य यह, गरुड नाम ठहराय ॥ ३० ॥
याते सर्प रहै कदा, और विषनि कहा वात ।
सूर उदय तम ना रहत, गुन इह कहायत भ्रात ॥ ३१ ॥
पीत अग पीरी परी, रेख रक्त पुनि ताहि ।
सकल रोग हर जानियै, मृगनयनी सुखदाय ॥ ३२ ॥
पीयरे तन कारी परत, रेख विन्दुअन लेख ।
मेटत विप अहिराज कौ, ओरन कौन विशेष ॥ ३३ ॥
कूष्माण्डी फूलन भनक, तामे विन्दु अनेक ।
रोग सकल नयना हरत, यह गुन याकी टेक ॥ ३४ ॥
रक्त वर्ण वहु विन्दु युत, तेज पुज तिहि देह ।
ए सव विपनासन कहौ, यामैं नहिं सदेह ॥ ३५ ॥
विंदुनाभ यह नाम मनि, महा तेज तिहि मांझि ।
कृष्ण विन्दु भूषित सकल, रोग हरन गुन साझि ॥ ३६ ॥
आम्र फल समान रुचि, ता महि कारे विन्दु ।
सोह पुत्र सुख देत तुम्ह, कुल कुमुदन को इन्दु ॥ ३७ ॥
दार्यौ पुहफ समान द्युति, कृष्ण विंदु कन आन ।
सो सौभाग्य करै प्रिया, यह गुरु वच परमान ॥ ३८ ॥
कुद फूल सम मनि वन्यौ, वन्यौ वृत्त आकार ।
सो विप मर्दन जानियै, गुरुवचननि अनुहार ॥ ३९ ॥

नाना रंग भरत तन मांहि, नाना रेखन की तहां झांहि।
बिन्दु अनेक परे तनुकहों, नाग दर्प हर ताहित कहो ॥ १८ ॥
कामकरन दुखहरन जु सुन्यौ हम अपनी रुचि ताको बन्यौ।
कहत ईश अग सुख के काजि, सबे उपद्रव टरत अकाज ॥१६॥
नील वर्ण सु दर तनु भयौ बिन्दु पांच गुन ताको ठम्यौ।
निर्मल अंग छाय तिहि छाक,
पुष्ट गरुड सुन कहौ अम आक ॥ २० ॥
जो सिंदूर छाय तनि गहै रेखा सु दर तामें रहै।
कृष्ण वर्ण कछु छीये सरूप टारत विष अमृत गुन रूप ॥ २१॥
कांसी रंग भरत मनि कोइ नानाबिधि रेखा मधु होइ।
बिन्दु मांहि मांहिन के बने ज्वर नाशन गुन ताके गिने ॥२२॥
पीयरी छाया सेत अनूप रेखा है ता मध्य सरूप।
सेतबिन्दु तिहि मध्यहि परै, बिच्छू बिष उतरै कहु डरै ॥ २३ ॥
इन्द्रनील सम याकी सोम सेत पीत गुम रेखा सोम।
नेत्र रोग टारत यह शुक्र, अम पीवत ताको जम भूखि ॥ २४ ॥

॥ दोहा ॥

स्वेत पीत रेखा बनी हरित वर्ण तन छाय।
ताको जल पाम जु कीम बिप सब देस बहाय ॥ २५ ॥
मिहो वर्ण पीयरी तनिक, गज मयज सम तात।
सेतबिन्दु ता मध्यगत मिटत जलोरन पात ॥ २६ ॥
छाकी आपे तनि छीइ अर्द रहत पुनि श्याम।
रक्त शुक्र बस (बघु) हर कहौ सही गुन धाम ॥ २७ ॥
निर्मल स्फाटिक सौ धम्यौ, तनक श्याम कछु छाम।

२४ गोरी, २५ जवरजद्द, २६ मरगज, २७ दहीयल, २८ बागुर, २९ सहसवेल, ३० चमक, ३१ विछीया, ३२ सदली, ३३ चुदडीया, ३४ मुसा, ३५ झीला, ३६ वादल, ३७ मकडाणा, ३८ मरवर, ३९ गिलगच ४० मगसेलिया, ४१ हाबुरा, ४२ कसोटी, ४३ जाफरान, ४४ कुरंड, ४५ सीमाक, ४६ अरणेटा, ४७ पलेवा, ४८ लीली।

॥ चौरासी संग विवरण ॥

१ सग एमनी जाति—१ हप्सानी, २ आकुदी, ३ सरचनी ४ खभाइती।

२ पीरोजा जाति— १ नेसावरी, २ भसमी, ३ भोटगिया।

३ दाहिण पिरग जाति—१ लोहाइ, २ मिसाई, ३ तुकराई, ४ चिल्हाई।

४ सग रेसमकी जात—१ सग कपूरी, ३ सग अगूरी।

॥ क्रय विक्रय व्यवहार कथनम् ॥

॥ दोहा ॥

रत्न परीक्षा ए कहीं, ताते मोल कहाय।
क्रय विक्रय के भेद विनु, द्रव्य लाभ कहा थाइ ॥ १ ॥

देश काल गति बूझ कै, गाहक सपति देखि।
मोल करै सोऊ सुघर, यह विवहार विशेषि ॥ ३ ॥

मिष्ट वचन बहु मान तें, गाहक लेह बुलाय।
मिलत परस्पर हेत सै, आसन देहि विछाय ॥ ३ ॥

छागज नेत्राकार मनि मंजारी नयनाभि।
गरुड़ देव सम तेज है पूजत पद्मस छाम ॥ ४० ॥
मनि मयूर चित्रज यम्यो कछयक स्फाटिक ज्योति।
सो सब राजा ताहि के मन वंछित फल होत ॥ ४१ ॥
मनि सुक पिच्छ समान है, सेत बिन्दु तिहि मांझि।
विषन कोरि मेटत मनी भरिनि सकैत न गज ॥ ४२ ॥
पारद बरन समान रुचि, ता महि कजरी रेख।
आयु बढ़त ता संग तैं, या महि मीन न मेख ॥ ४३ ॥
सकल वर्ण या रत्न माहि, नाना रेख सरूप।
अर्थ विविध पर देत सो माम देत नर भूप ॥ ४४ ॥
विविध रूप धर विविध मनि, दीसत है जग माहि।
ते सब गरुड़ समान है विष मर्दक गिन ताहि ॥ ४५ ॥
पदर मध्य उजरी मनक कृष्ण वर्ण तिहि पीठ।
सर्प सरूप बन्यौ सरस विष मासत दग दीठि ॥ ४६ ॥

॥ चौरासी संग जाति वर्णन ॥

१ एमनी २ हकीक, ३ दाहिण फिरंग ४ पारस ५ रेसम ६ सुलेमानी ७ कपूरी ८ पन गम्म ९ मारफेस १० फिटक, ११ बिलोवर, १२ दंतला, १३ तुरूमिरी १४ सोमेला, १५ धोमेला, १६ तांबड़ा १७ लालवर्ग १८ मखनीया १९ गोदंता २० दन बावरी, २१ मेसावरी, २२ असमी २३ बाबागोरी

२४ गोरी, २५ जवरजद्द, २६ मरगज, २७ दहीयल, २८ वागुर, २९ सहसवेल, ३० चमक, ३१ विछीया, ३२ सदली, ३३ चुदडीया, ३४ मुसर, ३५ झीला, ३६ वादल, ३७ मकडाणा, ३८ मरबर, ३९ गिलगच, ४० मगसेलिया, ४१ हाबुरा, ४२ कसोटी, ४३ जाफरान, ४४ कुरड, ४५ सीमाक, ४६ अरणेटा, ४७ पलेवा, ४८ लीली ।

॥ चौरासी संग विवरण ॥

१ सग एमनी जाति—१ हप्सानी, २ आकूदी, ३ सरचनी ४ खभाइती ।

२ पीरोजा जाति— १ नेसावरी, २ भसमी, ३ भोटगिया ।

३ दाहिण पिरग जाति—१ लोहाइ, २ मिसाई, ३ तुकराई, ४ चिल्हाई ।

४ सग रेसमकी जात—१ सग कपूरी, २ सग अगूरी ।

॥ क्रय विक्रय व्यवहार कथनम् ॥

॥ दोहा ॥

रत्न परीक्षा ए कही, ताते मोल कहाय ।
क्रय विक्रय के भेद विनु, द्रव्य लाभ कहा थाइ ॥ १ ॥

देश काल गति वूझ कै, गाहक सपति देखि ।
मोल करै सोऊ सुघर, यह विवहार विशेषि ॥ २ ॥

मिष्ट वचन वहु मान तें, गाहक लेह वुलाय ।
मिलत परस्पर हेत सैं, आसन देहि विछाय ॥ ३ ॥

पान फूल सौगंध की बहुते कर मनुहार।
आदर कर संतोप तें मोल कहो सुविचार ॥ ४ ॥
जो कोउ अति निपुण है, जाने रत्न विचार।
तो वह साखी लेह के मोल कहो निरधार ॥ ५ ॥
कर पर ढांक्यो वस्त्र तें, लेन देन संकेत।
दस बीस शत सहस की, कर अंगुली गग देत ॥ ६ ॥
रत्नविशारद लोक जे मुख हित बोलें मोल।
कहिये हाथ पसारि के मणि मोतिन को तोल ॥ ७ ॥
ऐसी विधि से जो करें, क्रय विक्रय व्यवहार।
ताके घर बहुते रहें मणि माणक भंडार ॥ ८ ॥
॥ इति क्रय करण विधिः ॥

नवरत्न महिमा कथन —

॥ कवित्त ॥

पन्ना परम निधान पास जब लगौ हीरा।
मुक्ताहल प्रकाश गुणहि गोमेदक वीरा ॥
लोभालामें छक्ष लेत बहु मास लसणीया।
पुष्कराग की शोभ सोइ है अति ही हसणिया।
मणि मायक माणक सुवे।
कुंदन बारह मानसे ए नव घर दिन प्रति धरे ॥ १ ॥

फल कथन चौपाई —

सुघर पुरुष को याको धरै, ताहि सुखी निहचै यह करै।
राज्य मान लक्ष्मी होइ घनी निहचै रहत ताहि घरि बनी ॥[1]

लोक सकल तिहि देवत मान, सुखी होत गुरु मुख यह ज्ञान।
इह नवरत्न विचारज भयौ, कहत अबै फल इन कौ नयौ ॥३॥

ग्रन्थालङ्कार वर्णनम्

॥ छप्पय ॥

विद्या विनय विवेक विभौ वानी विधि ज्ञाता।
जानत सकल विचार सार, शास्त्रन रस श्रोता ॥
पढत गुनत दिन रयन, विविध गुन जानि विचच्छन।
फला वहुत्तरि धारि, धरै वत्तीसहु लच्छन ॥
कुलदीपक जीपक अरिय, भरिय लच्छि भडार तिहि।
होहि रत्न व्यवहार से, इह कारन धारन किरिय ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

ता कारन कीनौ सुगम, ग्र थ जु मो मति सार।
सज्जन तुम शुद्ध कीजियौ, भूलचूक आचार ॥ ५ ॥
श्रावन बदि दशमी दिनै, सवत अढार पैताल।
सोमवार साचौ सुखद, ग्र थ रच्यौ सुविशाल ॥ ६ ॥
खरतर गच्छ जाणो खरौ, मोटिम वड़े मडाण।
सागरचंदसूरीश की, ता मझ शाखा जाण ॥ ७ ॥
ता शाखा में दीपते, महो पाठक सुजगीश।
आगम अर्थ भडार है, पद्मकुशल गणीश ॥ ८ ॥
प्रथम शिष्य तिनके कहूं, वाचक पद के धार।
दर्शनलाभ गणी कहै, ताहि शिष्य सुविचार ॥ ९ ॥

पं० संज्ञा धारक प्रवर, रत्नकुमार मुनीशा।
ग्रंथ रच्यो बहु हेतधर, दिन दिन अधिक जगीश ॥ १० ॥
मेरु रहै भूमंडले शशि सूरज आकाश।
पाठक तौलु थिर रहै, रत्नसी छील विलास ॥ ११ ॥

॥ इति रत्नपरीक्षा ग्रंथ संपूर्णम् ॥

(१) सं० १८७१ मिती भाद्रवा सुदि १ दिने लिपिकृता।
पं० जयचंद ॥

यादृशं पुस्तकं दृष्ट्वा, तादृशं लिखितं मया।
यदि शुद्ध मशुद्ध वा, मम दोषो न दीयते ॥ १ ॥
गगन धरा बिच मेरु गिर, धरै सहा ससि भार।
जुग ज्याउं थिर जीवज्यो पोथी वाचणहार ॥ २ ॥
पोथी प्यारी प्राणथी हिर हियड़ा को हार।
कोड़ जतन कर राखजो पोथी सेती प्यार ॥ ३ ॥
पोथी मांहे गुण घणा कहियै केता बखाण।
जयचंद ए पोथी लिखी वांचो चतुर सुजाण ॥ ४ ॥

सुश्रावक पुण्यप्रभावक साहजी मौजीरामजी तत्पुत्र गुलाबचंदजी स्यात वाचु पठनार्थम् ॥ श्रीमहिमापुर नगरे ॥

[गुटकाकार पत्र ३]

(२) संवत् १६११ का शाके १७७८ का मिती कार्तिक सुदि १३ लिखी मकसूदाबाद बालोचरगंज में बड़ी पोशाल।
पोथी ईसरदासजी दूगड़ की ॥ श्रीरस्तु ॥ शुभमवतु ॥१॥ श्लोक संख्या ६ १ ॥ [पत्र १८ राय बद्रीदास म्युजियम]

वाचक रत्नशेखर कृत

रत्नपरीक्षा

ॐकार अनेक गुण, सिद्धि रूप परगास ॥
पाचु पद यामे प्रगट, सुमरिन पूरन आस ॥ १ ॥
अलख रूप यामे वसे, अनहद नाद अनूप ॥
ब्रह्मरंध्र आसन सजे, रच्यो अनादि सरूप ॥ २ ॥
सुमरिन याको साधि के, रचिहु ग्रन्थ मति[1] आनि ॥
रत्नपरीछा देस के, भापा करहु वखानि ॥ ३ ॥
आन कवीसर के किये, ससकृति सब ग्रन्थ ॥
तातै मो मन मे भई, भापा रस गुन ग्रन्थ ॥ ४ ॥
सो० भापा रस को मूल, भापा सबको वोधकर ।
ताते हम अनुकूल, भापा कारन मन कह्यो[2] ॥ ५ ॥
कानौ वगला मा[3] दोन, ताके मध्य विभाग ।
नदी तपती या तीर तहाँ, वसत नगर नृप लाग ॥ ६ ॥
सूरति गुन मूरति जिहा, वसत लोक वन आढ ।
ताहि विलोक कुवेर कत, मान धरत्ति मनि गाढ ॥ ७ ॥
तहाँ वसत दातार मनि, गुनी धनी शुचि सोल ।
भाग्यवन्त चतुरन चतुर, भीम साहि लछि लील ॥ ८ ॥

---

१ मान, २ करूया, ३ ना ।

शकर शंकर तास सुथ, कुल मंडन जस जास।
ताहि विलोक विचक्षनहि, होवत हीय प्रगास ॥ ६ ॥
श्री श्री हस मयोत कर परमनन्द धरि भीर।
सकल साहि सिरदार बर मंडन शाहिद मीर ॥१०॥
ताकी इच्छा हुइ भई रतन सबन[1] में सार।
याकी भाषा करि पढे गर्र हीयनहि हार ॥११॥
ताकि लखि सुधि साधि कै रचिहुं चित धरि चोप।
मन वच क्रम मग पाइ बर मन बिन आनहुं कोप ॥१२॥
वाचक रत्न प्रकाश कर रत्न परीक्षा भेद।
कहत रत्न व्यवहार हुइ मन मौं पावो उमेद ॥१३॥
सवत सतरह से अधिक साठि एक करि जौन।
अगहन सुदि पचमी दिने गुरु मुख कहि गुरु मौन ॥१४॥
मृपि सबै करि जोरि कै, मुनि अगस्ति ढिग जाई।
पूछत रत्न विचार सब विधिसौं प्रणमी पाय ॥१५॥
सो० सुर असुरनि के इंद्र अरु विद्याधर नाग फुनि।
मुगट कट करि बन्द कर इत्यादि सिंगार सब ॥१६॥
तहा कही जे रत्न ताकी उत्पति जानिवी।
कहो मुनि करि यत्न श्रेष्ठ सबे मुनि विधि हो ॥१७॥
चौ० सुनौ सबै मुनि कहो विचार उत्पति जानकि वर्णाकार।
जाति दोष पुनि गुन अरु मूल छैन अछैन सब अनुकूल ॥

———

[1] सबे संसार, [2] सौ हियन हइ हार।

जो सब देवन को है वध्य, वलि दानव तिहु लोगनि मध्य।
सव देवन सो हन्यो न जाय, यग्य काज प्रारथना पाय॥
तिनि दीनो अपनी तव काय, दे देवन सनमुख ठहराई।
देह किये बज्री मन वज्र, वल मस्तक छेद्यो वरि वज्र॥

दो० हन्यो जवै वलि दैत्य तव, रुधिर विन्दु सव देखि।
वज्रनाम देवनि धस्यौ, श्रेष्ठ सबनि मे लेखि॥
वल सिरतैं ब्रह्म जु भयो, भुज से छत्री जानि।
वैशि नाभि ते प्रगट हुअ, शूद्र चरन ते ठानि॥
ते सवहिन च्यारू लीयें, सुर असुरनि मुनि यक्ष।
नाग विद्याधर किन्नरनि, भुषन करन सुदक्ष॥

अथ वज्र के आकर कथन —

ो० तिहु लोक परसिद्ध कीय, ताके आकर आठ।
युग मै द्वै द्वै अनुक्रमहि, ए आगर[1] गन ठाठ॥
कृत्त मे कौसल अरु कालिंग, त्रेता हेमज फुनि मातंग।
द्वापर पौंडरू सोरठ खानि, कलि सोपार वेणुज द्वे जानि॥
च्यारू युग के आकर[2] कहे, शास्त्र पंथ गुरु ढिग यौ लहे।
महिमा तेज सवै गुन आध, आगर बाँटि लेत सुत[3] साध॥
इम विधि युग मे आगर दोय, होई अनुक्रम जानहु सोई।
अव भातौ दीपन की रीति, सुनत चित्त बाढत वहु प्रीति॥

दो० चारु युग की जे कही, द्वे द्वे आगर वात।
ते सब जम्बूद्वीप की, आननि औरं विख्यात॥

---

१ ए आदिनी का ठाठ, २ आगर, ३ सुग।

फल दीप नै तेज जस, मिटे न जावे मान।
जसो याको रूप गुन, ताको सुद्धी जान॥
च्यारो वर्न बिचारि के, कहत परीक्षा छन्द।
ज्यो गुन मूल लखै सबै, फल पाइयइ अविरुद्ध॥
सेत फटिक के मान छबि शशि रूपि प्रबल प्रकाश।
चिकनाई संयुक्त फुनि सो ब्राह्मन शुचि वास॥
जो हीरा लाली लीयइ पीयरी तामै झाई।
ताको क्षत्री मुनि कहत तुमै सबा समुझाई॥
बहू पीयरे तमि बन्यौ धीये[1] सेत पर झाई।
वैश्य वरनीयै ताहि को, कहइ अगस्ति बनाइ॥
स्याम रंग हीरा लीयइ तामे तेज अनन्त।
शूद्र जाति तासो कह्यो इहि मुनि कह्यो जु तन्त॥
चौ० इह बिध हीरा लछन कहै, वर्ण परीक्षा गुण करि गहै।
मिश्रित रहै ताको फल सुन्यौ, जुदो-जुदो करिके जो बन्यौ॥
जथा-जथा हीरा जो धरै, वेद चार पाठी फल करै।
सर्व जग्य कीनो फल होई, सात जन्म विद्या फल सोई॥
क्षत्री-क्षत्री हीरा पास शत्रु सबे है ताके दास।
सब स्वजन पूरन जो होइ, रन दुर्जन सम बैर न कोई॥
वैश्य वैश्य हीरा अनुसरै, सो धन कला सबै करि धरै।
चातुरता सब कारण रहइ इहि बिधि फल पावै परतछ॥

---

१ छीनै।

चौ० शुद्र शुद्र राखे जो हीर, धन धान्य की लहै न पीर।
पर उपगारी अरु बलवंत, लोग कहे यह नर है सन्त ॥
शुद्र जाति हीरा जो होई, गुन संपूरन लछन सोई।
ताको मोल लहे बहु मानि, इहि विधि बोले मुनि की बानी ॥
ब्रह्म जाति हीरा गुनहीन, ताको मोल नहीं मति हीन।
गुन करि मोल सकल जन वाच, यामें कहा कथन मैं साच ॥
दो० हीरे च्यारौं वर्ण के, तामे कोउ होय।
मीच अकाल रु सर्प गद, वैर वन्हि भय खोय ॥

सदोष हीरा को फल कथन —

जे फल निर्दोषनि कह्यौ, तासौ इह विपरीत।
ता कारन निर्दोष ले, भूषन धरो सुरीत ॥

अब हीरों के गुण दोष कथन —

दो० पाँच दोष गुन पाँच फुनि, छाया चार विचार।
मोलवार परकार यह, करौ शास्त्र मग धारि ॥

पाँच दोष भिन्न भिन्न कथन —

मल विंदु यव रेख यह, काकपदनि मिलि पाच।
यह ढिग राखि ताहि को, स्थान मान फल साच ॥
धारा अतरगति रहे, कौण माझि मल खोय[1]।
वज्र अग्रमल कहत है, रत्न विशारद होई ॥
चौ० मध्ये मल भय अग्निहि करई, धारा मल दृष्टिक उर धरइ।
कौण अग्र मल यश कौ हरै, ताको पंडित फल उच्चरै ॥

१—सोइ

अथ बिंदु के प्रकार कथन —

आवर्तिक पुनिबल कर, रक्तबिंदु यव रूप।
पच्यौ विधि जानीये बिन्दु दोष तुल कूप॥

वाहिन को फल कथन —

दो० आयु पुष्टि धन वृद्धि पुनि होत जिहि आवर्त।
ताको फल निहचै कहै, धरज्यौ मत अमत्र्य॥
यामे बाती सी धनी ताको धरै नरेस।
सो नर गद पीड़ा लहै यह फल कह्यो विशेष॥३६॥
रक्त बिन्दु जिहि बज महि, सोई धरै फल देखि।
त्रिया पुत्र हय दोष है देरा त्याग यव लेखि॥३७॥
रक्त पीत अरु सेत यव यह मुनि कहैं सुतीन।
ताको धारत फल कह्यो, तामे मेष न मीन॥३८॥
रक्त वर्ण यव क्षय करत, गम वासिम महाराज।
पीत वंश क्षय करत पुनि धारत होत अकाज॥३९॥
सेत यवाकृति देखि के धरै शु हीरा कोइ।
ताको धन अरु धाम बहु अति बीज परि होइ॥४०॥
सो० यव को गुण है एक, दाप दोष कोविद कहै।
धारहु परखि विवेक रत्नपरीक्षा गुण लहै॥४१॥
पुनि रेखा रिहुँ भेद नाम सम अरु विषम मत।
ऊर्ध्व गता प वेद याको फल सु विचार हित॥४२॥

१—मेर कहै मुनि तीन

सो० पासै डावे रेख, सो हीरा अलपायु कर।
यामै सोधी देखि, सो राखि वहु सुख करै ॥४३॥
विसमी यामै होइ, रेख सोइ वंधन करी।
ऊरध रेख फल जोइ, शस्त्र घाउ छिनमै लगे ॥४४॥
इह रेखन के तीन, दोप एक गुन गुरु कहै।
कवहों होहि न दीन, जो गुरु सीख सदा गहै ॥४५॥
दो० जो हीरा पटकोण है, तीखा लघुता सूल।
पुनि अठकोना आठ दल, काकपदी तिहि कूल[1] ॥४६॥
काकपदी जु काकपद, सिरसी रेखा होइ।
ताकौ फल इम कहतु है, गुरु मुख देखहु सोई ॥४७॥
सो हीरा जिहि ढिग रहत, ताकौ आनत मीच।
सुनत सयाना ना गहै, नही आनत घर वीच ॥४८॥
चौ० वाहिर फाटा हीरा होई, अरु अन्तर्गत फाटा सोइ।
भग्न कोट पुनि वृत्ताकार, सो फल देन समर्थ न धार ॥४९॥

अथ वज्र के पांचों गुन कथन —

दो० वाहिर मध्यरू अग्रग्रत, समता[2] होइ सुग्यान।
सो हीरा कौ प्रथम गुन, कहत कुभ भू मान ॥५०॥

अथ मतांतरे प्रकारांतरेण पांच गुन कथन —

दो० हरूओ अठ कोनो षटकौन, तीखी धाररु निर्मल जौन।
इन गुन पंच सहित कर सेव, ता भूषण कौ धारहि देव ॥५१॥

१—वल २—तमना

अथ छाया गुन—

सो० सेत पीयरी राती स्याम, इह छाया च्यारौं गुन नाम।
च्यार वर्ण कौगिणी कीजइ ब्रह्म आदि अनिक्रमि कीजई ॥ ५२

अथ तोल को भेद कथन :—

मारा संग अमल तक[१] देखि, सकल सबै शास्त्र विधि लेखि।
पाछे तुला चढाई मोल, कहो परीक्षक वाई तोल ॥५३॥

अथ तोलन को मान कथन :—

सो० सरषप आठै सेत मान चढ़े तंदुल तुला।
वचन को संकेत मोल करन मन मैं धरौ ॥ ५४ ॥
वज्र तुल्य[२] परमान पहिले पिंड सु कलपीये।
तापि तन के मोल, त्रिधा उत्तम मध्यम अधम ॥ ५५ ॥
ज्यौं भारी त्यौं मोल, अधम मध्यते अधम फुनि।
इतवे उत्तम मूल यामैं कछू न विचारना ॥ ५६ ॥

सो० भारी हीरा होइ, मोल त्रिविध ताकौ कह्यौ।
कपुता कीयें सु कोइ ताहि को पुनि तीन विधि ॥ ५७ ॥
अति इतको जो होइ, वज्र सोइ पट भेद गिन।
भेद चार विधि सोइ मोल कहत पौ रतन विद ॥ ५८ ॥
पहिले हीरा देखि पिंड मान मन मैं धरौ।
पीछे तोल विसेष मोल मान मुनि ते कह्यौ ॥ ५९ ॥
यव मिति याकौ गात्र तोल एक तंदुल समौ।
मोल अढ़ै शत मात्र, ताकौ कह्यौ निसंक मनि ॥ ६० ॥

१—तक २ तुल्य।

पिंड मान यव दोय, तोल चढ़े तन्दुल तुला।
मोल चोगुणो होइ, कहौ सयान वयान करि ॥ ६१ ॥
पिंड मान यव तीन, तदुल एक समौ वजन।
मोल आठ गुन कीन, रत्नपरीछक नर निपुन ॥ ६२ ॥

पुनि मोल के भेद कहतु है—

चौ० याके पिण्ड समान, तोल पुनि जानियइ।
ताको मोल पचास, ठीक करि ठानीयै॥
रत्नशास्त्र मग जान, कहै इहि भांति सौ।
ताको मग तुम हेरि, कहौ मन खाति सौं ॥ ६३ ॥
या हीरा को मध्य, दुगुण होइ तोलइ तई।
ताकौ चौगुणो मोल, कहौ मुख वोलंतइ॥
याकौ त्रिगुणो मोल, पिंड तोल तै जानीयै।
ताकौ मोल विचार, च्यारि सें मानिये ॥ ६४ ॥
पिंड मान गिन लेउ, पंच गुन वजन सौ।
ताकौ धन शत पंच, कहो तुम सजन सौ॥
होहि पच गुन पिण्ड, वज्र चढतै तुला।
मोल तै लहै सत आठ, सही गुन तै भला ॥ ६५ ॥
याहि षट गुनो गात्र, तोल के पात्र तै।
सहस्र एक तस मोल, देत द्रग मात्र तै॥
सात गुनौ जो पिंड, तोल तै वाढि है।
हीरा लैहै सोइ, सहस दोय काढि है ॥ ६६ ॥

जानौ इन ही भाँति गात ज्यौं-ज्यौं बढ़ै।
चढ़त तुला तब तोल हीन तुम्है चढ़ै॥
बाढ़ै त्यौं त्यौं मोल, मुनीसर यौं कहै।
तुम ही जानौ जान, मोल कपुता लहै॥ ६७॥
बज्र मध्य इहि भाँति अधिक ज्यौं ज्यौं कहै।
ताते भाग जु एक, एक घटते रहै॥
ताको मोल सुबोल अठार गुन सुन्यौं।
कम्पमान इहि रीति प्रीति करि कै भन्यौं॥ ६८॥

दो० जिहि हीरा के भाग द्वै जल माहि तिरे जु साइ।
मोल कहै त्रिस गुन, संसय धरौ न कोइ॥ ६९॥
तीन भाग तिरते रहै बहुत्तरि गुन तिन मूल।
कह्यौ कह्यौ मुनिराज ने, यामैं कछु न भूल॥ ७०॥
ज्यौं ज्यौं पिंड प्रमान ते लघुता गुन होइ बाढ॥
बज्रमोल त्यौं त्यौं सरस सहस बहुत्तरि पाठ॥ ७१॥
भार बढ़ो पिंडहि बढ़ै त्यौं मोलन की हानि।
जिहि भाँति बरतो कह्यौ घटत तिहि परमानि॥ ७२॥
जो है गुन करि हीन ज्योतिवंत ताकी कला।
ताको मोल जु हीन कह्यौ बिचार उत्तम सदा॥ ७३॥
या हीरा में ज्योति नहीं, अरु लच्छन गुन सोइ।
ताको मोल जु करत सब ससम धारक होइ॥ ७४॥

१ घटै २ कोई।

ता कारन चित थिर ह्वै, आतुरता करि दूर।
लघु कर पुरनि[3] दृष्टि दे, मोल कहो मन पूरि ॥ ७५ ॥
पाछै बोलि सुजान नर, जुगति जरईआ[4] हाथ।
दीजै फल लीजै बहुत, लछि लील सुख साथि ॥ ७६ ॥
ज्यो सविता को तेज अति, कहा करै दृग हीन।
त्योही ज्योति विना धरै, सो नर होत जु छीन ॥ ७७ ॥
ना जडिहौ ना पहिरिवौ, ज्योति रहित यहि रूप।
ताकौ गुन कोउ नहीं, जैसो अधम[1] सरूप ॥ ७८ ॥
यो हीरा उत्तम गुनहि, सो धारो उत्तम संगि।
उत्तम रत्न सुवर्ण जुरि, सोभत ताहि संगि ॥ ७९ ॥

सब हीरन में श्रेष्ठ वज्र निरूपण—

अडिल्ल—जो हीरा जल माहि तिरै सुनिपण सू
सेत दीप के पत्र सरीखे वर्ण त्यौ
ताको मोल सुवर्ण तुला इक जानीयइ
कहत रत्नविद कोटि साच करि मानीयं ॥ ८० ॥

चौ० सब ऋषि मेलि कही यों बात, मंडलीक को करहु विख्यात।
कबहौ जरईआ होई अजान, इह विपरीत जस्थै सुख हानि ॥८१॥
मुख अरु धारा कौण जु लहै, ताकौ थान हृदय सब गहै।
जरिया परीछि बिना जो जरै, ताके सिर इन्द्रायुध परै ॥ ८२ ॥
इहि विधि आठौ भेद सुचित्र, बाह्य अभ्यन्तर लहै विचित्र।
जो नर नरपति आगै कहै, सो नर मान थान थिर लहै ॥ ८३ ॥

---

३ पुरषनि. ४ या . १ अंध।

अथ रत्न के दश भेद कथन—

दो० सो० जाति राग[१] रँग रोछ[२] वर्ति[३] गात्र[४] गुण[५] दोष[६] फुनि।
आकृति[७] छाया[८] मोल, ए[९] दश भेद विचार सुनि ॥ ८४ ॥

अथ वज्रमणि के क्रय-विक्रय के देश कथन—

दो० आगर पूरब देश के, कासमीर मध्यदेश ॥
सिंघल देशरु सिंधु फुनि इहाँ वज्र कय लेख ॥ ८५ ॥
यौं हीरा चारू बरण छक्ति बिन ही भंग ॥
सो हीरा सुनि मण्डली योग नाहिं गुन भंग ॥ ८६ ॥
जिहिं कारण छक्ति रहित हीरा मोहिं जु कोई ॥
देव दैत्य अरु नाग जग करत प्रवेशन छोई ॥ ८७ ॥
एते गुण संयुक्त होई योग्य मण्डली होई[१] ॥
देवहि दुख़म होइ जहाँ, सोई उत्तम ठाम ॥ ८८ ॥

हीरा के क्रय विक्रय को व्यवहार कथन—

अडिल्ल—गाहक आप बुलाई बहुतर आदर कीइ।
आसन सुन्दर गन्ध पहुपमाला दीइ ॥
मधे सभा सम बोल मान बहुते दीयै।
मुख ते गुण अरू विचारेफु है
ऊपरि टाँके वस्त्र समस्या मोल है ॥ ८९ ॥
छाल सहस संकेत करै कर आँगुली।
सैत देत ढिग मोल कहो इह क्यों पुरी ॥
कीजे हाथ पसार द्रव्य संख्या सदा।
मुल हिल बोलहु बोल तोल[३] गुन को मुदा ॥ ९० ॥

१ नाम २ दिव ३ तौल।

दो० जो कोऊ होवे दक्ष अति, जानै रत्न विचारि।
तोऊ साखी एक करि, मोल कहो निरधारि ॥९२॥
कूर करत कोऊ रत्न, ठगत सयान अयान।
ते मध्यम नर नरग गति, लहत दुख असथान ॥९३
हत्याकारक सै[1] अधिक, तातै करहु न कोई।
फल याकौ अति दुष्ट गति, कृत्रिम करहौ न सोइ ॥९४॥
अथवा कृत्रिम शुद्ध महि, ससय उठत तरंग।
तबहि परीछा करि गहौ, क्षार खटाई संग ॥९५॥
क्षार खटाई लेह पुनि[2], खरै धरै खुरसान।
तातै तिलजु धरै नहीं, यह हीरन परमान ॥९६॥
या मै कूर कछु होइ, ताकौ वर्ण विनाश।
पाछै धोवत शालि जल, खिरत कूर परगास ॥९७॥
इसै[3] कूर अरु साच की, करत परीक्षा होई।
कूडा तजे साचाहि गहौ, दुरजन हसै न कोई ॥९८॥
यामै नाहीं कूर कछु, सो लोहन के साथि।
घसै न भेदै और कछु, ताकौ ल्यौ तुम हाथि ॥९९॥
हीरा में हीरा घसै, लसै न कोउ और।
ता कारन यह वज्र को, मान[4] धस्यौ मुनि भोर ॥१००॥
अबै इहां कलि बीच नहीं, जाति शुद्ध अठ अंग।
षटकोनो पुनि देखि गुन, साधत सकल सुरंग ॥१०१॥

१—कह्यो २—फुनि ३—ऐसे ४—नाम

ऐसे सुन्दर शुद्ध गुन ताहि सकल भूपाल।
मुकट माँहि मस्तक धरै करिहु सु कृपा कृपाल ॥१०२॥

कोऊ कठ मुक्तानि मध्य, धरै ताहि मन मान।
रन अभंग सुख सम अरू, उत्तम गुन संतान ॥१०३॥

जो भूपन हीरन जव्यो, धरै गरभिनी नारि।
गर्भपात होई ताहि को कह्यो मुनीश विचारि ॥१०४॥

गंधक अरु रसराज मिलि वज्र योग रसराज।
नरपत सेवत सुख लहै भोग योग इह साज ॥१०५॥

अथ मौक्तिक व्यवहारो निरूप्यते :—

ॐकार अनन्त गुन यामें सकल प्रकास।
ताको ध्यान हिये धरी मोतिन कहूँ विकास ॥१॥

वभ्रु बात मघहिम सुनि मुनी सबन के ईस।
अब मोतिम उतपति कहौ मम धरि विसवा बीस ॥२॥

जिहि भाँति उतपन्न है मोल तोल परमान।
सुदे सुने करि त्यों कहो, ज्यों देवे नृप मान ॥३॥

मा सुनहो सत्व जिहि मान कहौ तुमइ संछेप तै।
जिहि तिनको विग्यान सभा लोक जाते पते ॥४॥

मुक्ताफल की माठो खानि वर्नन —

गा घन मं करिले मछलें[१] अहि संख[२] अरु बंस[३]।
मुनि बराह सीपनि सुनी मुक्ता खानि प्रसस ॥५॥

थानि आठ कोविद कही, तामे सीप प्रसिद्ध।
मोल लहै कलि मे अधिक, अगीकृत करि सिद्ध[1] ॥ ६ ॥

प्रथम मेघ मोतिन को व्यवहार कहतु है—

अडिल्ल—घन मोती जुहोइ सोइ आकाश ते।
हरत देव तिहि बीच भूमिकापास ते॥
[2]जिहि विमान ले जाहि अपछरा भोग कौ।
सुख विलस संसार सदा रति योग कौ॥ ७ ॥
याकौ ज्योति प्रकाश दामिनी भानु सौ।
निरख्यो काहू जाइ होइ मन आन सौ॥
सुर सिद्धनि के काज आज इह जानीयै।
ताको भोग विलास ताही को मानीयै॥ ८ ॥

अथ गज मोतिन को विचार कहतु है—

सो०—गज मोती गजराज, कुभस्थल तै प्रगट हुई।
अरु कपोल त साज, दोई थान मुनि पै सुने॥ ९ ॥
थोरी उतपति ताहि, ना लेवौ ना पारिखौ।
मुनि वच धरि मन माहि, गज मोती गिनवौ अकज ॥१०॥
रतन शास्त्र मग जानि, इन दोऊ अधमजु कहै।
मान आभरनि मानि, छाया पीतली लइ रहै ॥११॥

अथ मछ मोती कहतु है—

सो०—मछ जाति उतपन्न, मुकता वृत दरस शुभ।
हरखाहि तिहि तिन्नि, गुजमान जानहु गुनी ॥१२॥

१—लिद्ध, २—निज, ३—ये।

दो०—तिमि तिमिंगिल मच्छ के, मोती परघन रीठि।
'हीन मागम भर की कहूँ यह मुनि करै वसीठ ॥१३॥
पाटल पहुप समान छवि भाग छोक है ताहि।
मनुस मध्य पईयत नहीं कहत मुनि ठहराहि ॥१४॥

अथ सर्प मोतिन को सरूप कथन—

चौ०—अति उज्ज्वल उपरितनि छायै, तामैं नीकी झांस न झांही।
तन असोक फल जैस मानि ता मोतिन अति सतपति जानि॥१
ताको धरै नरेसर कोई बिष पीड़ा ताहि न होई।
यौं अगस्ति मुनि भोखति बानि यामैं फूर नहीं सही जानि॥१६॥
दो०—जाके घरि मुगता सरस, ताके सुन्दर राज।
गज अरु बाजि समाज सब धन बिलास सुख साज ॥१७॥

पाचों की खानि कहा है कहत हैं—

अड़िल्ल—दिसि उत्तर बैताढ्य पहार महार है।
रूपा को सो रूप तहां न बिचार है॥
ताको कूट बिचित्र चित्र देखत करै।
जाके ढिग कोउ हंस-सु-हंस मुनी करै ॥१८॥
पथ एक रात आठ गिने गिनि राखीये।
अद्ध भाग ता मध्य छिद्र है भाखीये।
नर मादी दोइ होइ आनि मन रंग सौं।
मुगता सुन्दर रूप धरा च संग सौं ॥१९॥

१—हीन।

तामैं देव निवास आस सब काज की।
पूरै पूरन रिद्धि दीय सुख साज की ॥
जाकै घरि यह होइ सोइ कुल अन्य तै।
पावत सुन्दर राज पुरातन पुन्य तै ॥२०॥
गज अरु सुन्दर वाजि सुरूपा सुन्दरी।
पुहपमाल ले हाथ सखी ढिग ह्वै खरी ॥
छत्र धरै एक नारि वजै वहु किन्नरी।
ढारत चामर दोय मनु यह भूचरी ॥२१॥
सो०—जाके ढिग यह होइ, ताहिन काहू की कमी।
कहै मुनी तिहु लोय, ताकौ यश मिथ्या न गिनि ॥२२॥
अथ वाको लेवे को विधानु कहतु है—
अडिल्ल—ता देवन के वशि जाण मुगता वन्यौ।
राक्षस राखै ताहि महामुनि तै सुन्यौ ॥
ताकौ डर मनि राखि ताहि वली दीजीयइ।
कर नीके जु विधान भली विधि लीजीयइ ॥२३॥
साधक सब विधि जान मान करि वोलीयै।
पठउ ता ढिग ताहि हीया निज खोलि कै ॥
सो सब देवन साधि करै वसि आपने।
नांतरि लेवौ वाहि कहौ किहि विधि वने ॥२४॥
पुनि ता मोतिन काजि विप्र वर आनीयै।
वेद उकत तहां मंत्र भलीगति ठानीयै।
कीन प्रतिष्टा तास होम हित दिल आनि कै ॥
फुनि निज मन्दिर आनि महुरत जानि कै ॥२५॥

दो०—अगस्त मनुरस देखि के घर आन्यो नृप ताहि।
या घर में यह राखीयो, तीन सांझ ता माहि ॥२६॥
सुन्दर धनि वाजित्र पुनि, मंगल दीप बनाइ॥
अरचा करि पूजो पलंठे, राखहु खचित[1] राई ॥२७॥
यह मुक्ता जा घरि रहै, ता घरि दुख नहीं कोइ।
थावर विष जंगम कह्यो, भय नहीं इनको होइ ॥२८॥
राग द्वेष अरु रोगमय को न उपद्रव आन।
दुख-नाशन सुख करन यह, कही अगस्ति मुनि ग्यान ॥२९॥
चौ० इन्द्रहि एक समय मनि आनि राखा हेतु धमाए आगनि।
वंश अनोपम कीए विशेखि तामें इनकी उतपति देखि ॥३०॥
पाछै कलि उतपति भई, तब दानव अदरसता थई॥
ताते वंश अदरस जु भए, रत्न परीक्षक मुनि ते कहे ॥३१॥
तिहि वंशन में मोती यह, मोरमान ताको गिनि लेह।
महाज्योति घन उपल समान निरमलता लखि इहि अनुमान॥३१॥
दो०—ताको सेत सरूप यह, जैसो वंश कपूर।
इहि विधि मोती वंश के यामें नाहिं न कूर ॥३३॥
नर माथा मोती कहै इहे वंश के भेद।
संखन में मुनि कहन को मन में धरे उमेद ॥३४॥
अब संख ते कहत है—
सोरठा—दानव अरि श्रीकृस्न ता कर संखम ते भए।
ताते अति ही विष्णु प्रिय राखत पातक गए ॥३५॥

१ मराई २ पीछे कलि व्यापन जब भई ३ मुनियों कहि गये ४ शंखन

चौ०—मोती जो संखन ते गह्यौ, संध्या रुचि सम ताको कह्यौ ॥
रंग देखि मन होवहि खुशी, ताको लेत चतुर उलसी ॥३६॥
पुन्यहीन कौ सोइ न मिले, भर समुद्र मो संख जु चले।
ताते काके नावे हाथ, कौन गहे तिहि मोतिन साथ ॥३७॥
दो०—इह मोती संखनि कौ कह्यौ, लहै शास्त्र मग मानि।
अव शूकर मुख तैं भयो, ताको कहौं वखानि ॥३८॥

अथ सूकर के मोतिन को विचार कथन—

दो०—जव वराह रूप जग क्ह्यौ, नारायण वर देह।
तव ताकौ वंशहि भयौ, सूकर मुगता तेह ॥३९॥
गोई फिरे वन माहि जिही, ताहिन कोउ ठौर।
स्वापद विचरे नाहि डर[1] जाये ताकी दौर ॥४०॥
ताके मस्तक ते भए, वेर मान परमान।
ता मोतिन की छवि कही, सूकर दाढ समान ॥४१॥
पुनि वराह मोती वन्यौ, गिन्यौ जु ताकौ वर्ण।
अति सुन्दर शास्त्रनि क्ह्यौ, गुरु मुख सुन्यौ जु कर्ण ॥४२॥
रतन परीक्षा करनि पुनि, धरि अपनी मन माझि।
वानि प्रमानिहि मोल करि, वानि न होवत वाझि ॥४३॥
वलि के दान निपात जिहि, थान भए तिहि थांन।
आगर मुगता के भए, कहै ग्रथन मे ग्यान ॥४४॥
परे समुद्रनि माझ जिहा, तहा स्वाति जल जोग।
मुगता सीपनि ते भए, जानत सिगरे लोग ॥४५॥

१—नर

प्रथम सिंघल अरु दूसरा, आरब पुनि पारसीक।
तीन गिले बाबर सुन्यौ न्यारौ आगर ठीक ॥४६॥
सिंघलद्वीपनि को भयौ मुगता मधु सम रंग।
ज्योति अधिक चिकनी चिलक, पहिलै आगर संग ॥४७॥
बाबर आगर ते धवल ज्योति चन्द्र सम देखि।
निरमल पीयरी रूचि घनक घनक दूसरे लेखि ॥४८॥
निरमलता झलमेल द्युति पारसीक तिहि जाति।
ए न्यारौ कलियुग कहै सीपन मुगता मांहि ॥४९॥
तहां उदधि अरु बीचि हैं, सीप सुवर्ण समान[1]।
सब समुद्र गति ताहि सुनि, ताको मुगता मान ॥५०॥
ताकौ मुगता अति सरस दरस देव को दूरि।
मान लई पई कहा गुन लछन को परि ॥५१॥
तातें मुगता जानीयइ जाती फल सम रूप।
कुसुम रूचि व मृग अधम कोमल स्निग्ध सरूप ॥५२॥
सो सुवर्ण रूचि सीप सौ मुगता जानहु मीति।
ताकौ मूल कहै मुनी सुनि जानौ तुम मोति ॥५३॥
तेती पृथिवी बीच मर, सहस पल करि ठाउ।
तेती सुबरण दापीइ, मोल पाहि ते भाइ ॥५४॥

अथ सीपन के मौतिन की विचार वचनम्

दो —अब मोती कलियुग को मांझि, गहत देव गुन लछन तांझि।
ताकौ और सीप ते भाग पाहिन को सुनि मुनि महाभाग ॥

१—सुवान

अब विस्तार जगत जिहि रीति, ताकी उतपति सुनिधरि प्रीति।
पहिले आगर च्यारों कहै, तामे सीप सरद ऋतु लहै॥
आवत निकट समुद्र जल तीर, गहत स्वाति जल निज मुखवीर।
फिर समुद्र जल सीप समाई, मास आठ साढे ठहराई॥५७॥
पूरन दिन पूरन गुन भयौ, नातरि काचौ यह गुन कह्यौ[1]।
अरु अधिके दिन तापरि जाय, तौ मोती विनसै तिहु वाय[2]॥५८॥
ता कारन दिन लीजे गिनी, यही वात मुनि मुख तै गुनी।
यहि[3]प्रमान वरखा कन कह्यौ, तिहि प्रमान मुगतासन[4]भयौ॥५९॥

अब मोतिन के गुनदोष तोल मोल कहतु है—

दो०—नवदोष रु षट गुन कहै, छाय तीन मनि आनि।
तोल मोल आठौ गिनौ, रिखवानी इह जानि॥६०॥
रत्न विसारद गुन कहतु, जो मुगता गुन हीन।
ताकौ मूल कहै कहा, कहत होत मुख दीन॥६१॥
सच अजव पूरन वन्यौ, ताके तीन विभाग।
उत्तम मध्यम अरु अधम, मोल करहु लहि लागि॥६२॥

चौ०—सीप फरस पहिलौ कहै दोष, मछाक्षी दुतियन को पोष।
जाठर दोष लहौ तीसरौ, चौथौ रक्त कहा वीसरौ॥६३॥
दोष त्रिवर्त पंचम सुनि भाई, चपलता छठइ ठहराई।
म्लान दोष सप्तम गिनि लीजै, एक दिशि दीरघ आठम कीजै॥६४॥
नि प्रभाव निस्तेज कहावै, नवमौ दोष मुनीश वतावै।
चीन्हौ दोष बड मानि के, अलपमानि पुनि पाच॥
यह नव दोष विचारि कै, मोल करहु तुम सांच॥६५॥

---

१ गह्यौ, २ निश्चैविडसाय ३ जिहि ४ फल रयो, कनभयो।

चार दोषनकि बात सुनि कहौ तोहि गुरु ग्यान।
मोती सौ लागौ जिहा सपरस दोष कहात ॥६६॥
मछ नेत्र सम देखि कै, सो मछाक्षी दोष।
जो गुरु सेवै सो लहै पावै कैसो रोष ॥६७॥
इसत रक्त अरुपेट मध्य सो जठरागत दोष।
चौथे धरि सु रक्तिमा राखिन धरौ सन्तोष ॥६८॥
अब इन चारौ दोषन की महिमा कथन—
चौ०—सुक्ति स्पर्श मोती धरै जेह कष्ट लहै तिहा नही सन्देह।
मछाक्षी पुत्रहि सुख देत, रत्न परीक्षक कबहु न लेत ॥७०॥
जाठर दोष करत धन नास आरक्तक प्रानन को त्रास।
इह च्यारन को फल मनिशानि राखौ पहिरौ जिन मुनि वानि।
अब सामान्य पाँची दोष को विचार कथम्—
त्रिवर्त मध्य आवर्त तह ताम पहिरे सो नर होइ अदीन।
चपल दोष देखत बहु रंग अपयस करहि तजो विधि संग ॥७
मलिन दाय अन्तर मल जिहा धन की हानि रहै यह तहाँ।
पारस हीरम अहम पक और हीरम कुल गहै विनेक ॥७
इनके धरइ होहि मति भ्रम विगमूढो धन कीम प्रकास।
पंचम दोष निस्तेज कहाय तेजहीन पद देखु बताय ॥७
यह राखत आरस निस्तेज तम होवत नही उपम देज।
अल्प मृत्यु कारन तन पीर पाँच दोष फल कर मनि धीर ॥७
इन पाचन को फल है यह, पामैं कछु मारिन सन्देह।
अब मोतिम के गुन की बात सुनि मईया करिहौ विख्यात ॥७

दो०—गुन पट मोतिन के कहे, कुभ सुतनि भ्रात।
तिन ढिग राखहि ना भलौ, शास्त्र रीति यह वात॥ ७७॥

सो०—तारक ज्योति समान, याकौ ज्योति प्रकाश पुनि।
प्रथम एह गुन जान, गुण गनती कर लेत हो॥ ७८॥
भारी तोल जु होइ, यह गुन जानहु दूसरो।
चिकनाई लै सोइ, गुन जानहु तुम तीसरो॥ ७९॥
गात वडो गुन जानि, चौथौ मुनि वानी कहे।
गुन पंचम यह गनि, वर्त्तुलता छठओ विमल॥ ८०॥

इन छहो गुन सयुक्त मोती अग धर्‌यौ कौन गुन करै सो कहतु हैं।

चौ०—सव मुनि पूछति है रिपिराय, दोपहीन मोती जो पाय।
राखैं निज तनि जो ठहराय, फल ताकौ कहो मे जु बनाय॥८१॥

मुनि अगस्ति कहतु है,

सुनो मुनिश्वर रत्न के जान यह त्रिध मोतिन करहु बयान।
नव दुपन विन गुन छह संगि, छाया तीन सहित तन रंगि॥८२॥

छाया तीन सौ कहतु हैं—

छाया सेत रु मधु कै वानि, अरु पीयरी यह तीनौ जानि।
यह सव ही गुन मोती धरै, जात पाप ताके खरे॥ ८३॥
और वर्ण मोति ना भलौ, राखत दुख उपजत एकलौ।
अव उतम आकर को भयो, भारी चिकनौ वर्ण ही नयौ॥ ८४॥
तीन मुकता कौ मोल जु सुनौ, गुंज तीन ते लै करि गिणौ।
तीन गुनौ यह भांतिनि मोल, पंचासह ५० चौ गुजा तोल॥ ८५॥

मोठ चोरासी चिरमी पोष छह गुंज तोले मूक छु सोच।
सात गुंज है सत पुनि धारि आठ गुंज को सत पर धारि ॥८४॥
नव गुंजा सत सातव लहै अठयासी ऊपरि मुनि कहै।
दसे सहस एक अठसठि बाढ़ मुनि अगस्ति कहै यह विधि पाठ।
गुंज ग्यारह वाको तोल, चौदहसे अठयासी मोल।
द्वादश गुंजहि से बाईस, साथ कहत मत मानहु रीश ॥८८॥
सहस दोय सत सातक साठि तेरह गुंज मोल मुख पाठि।
चवदह गुंज मोल छहे तीन, सहस च्यारि से ऊपरि कीन ॥८६॥
पनरह रती सहस पट मान छ सौ विदुत्तरि[1] मोल विधान।
इत ते तोल अधिक जो बढ़े, ताको मोल सुनो यों कहै ॥६०॥
अम परिभाषा कहत है—
१०—मंजाडी पुनि तीन सम, मासा कहतु मुनीश।
च्यार माप ते मान मनि तोल मान निस वीस ॥६१॥
साण दोय कर्खंस कहि, मुनि अगस्त मुख वाच।
रूपक दश ते निष्क मुनि सोइ टंका सोच ॥६२॥
कहत कर्खंबत ताहि सौं वाछ पदहि पुनि सास।
मासा द्वय ते आन कुम मै साड़ी मुनि भास ॥६३॥
मुनि मंजाड़ो तीन को दोई दोइ करि अप्प।
ताके पंच समान गिनि मास मान को पिंड ॥६४॥
मसाडी पुनि मञुगिन, जो मुगता इक गुंज।
आठ सात ताको कहौं मोल हेतु मति पुंज ॥६५॥

१—विदुत्तरी २—सास।

चौ०—जो मुगता तन्दुल अठमान[1], ताको मोल कलंज प्रमान।
तापर चढ़त सात अधिकात, वारह गुज छवै कहि भ्रांति ॥६६॥
चढत तौल चावल वाईस, सोलह गुन एक सत अठईस।
पुनि छतीस चावल तिहि तोल, जुग पचीस द्वै सत २२५ तिहिमोल
यह विधि पनरह रति प्रमान, चढत कह्यौ मुनिवच अनुमान।
त्रिक-त्रिक वढत त्रिगुनौ, हीन होत घट-घट भनौं ॥६८।

दो०—तीस गुज ऊपर चढत, तीन चौगुनौ मोलि।
गुजा आठ तीसह अधिक, पंच गिनौं गुन वोल ॥ ६६ ॥
एक लछ सत सहस, इक सतहतरि वाढ।
परम मोलि रिसि कटत इह, यातै[2] अधिक अनाढ ॥२००॥
पुनि पुरान पुरुपनि कह्यौ, ताको मत मनि आनि।
तोल विचारु मोल संग, कहौ जु मो मति मानि ॥ १ ॥
सरपव आठ सुसेतलौ, ता सम तन्दुल एक।
गर्भपाक तिहि नाम धरि, साढी कह्यौ विवेक ॥ २ ॥
तिहि च्यारिनि मानि गिनि, करि ल्यौ गुंजा मानि।
ता सौ मोतिन मोल को, होत सयान वयान ॥३॥
पुनि सीपनि मोतिन भयो, होइ सुवृत सुतेज।
प्रभावंत अरु रूचि विमल, तोल गुज भरि लेज ॥४॥

सो०—ताको मोल पचीस, वीस कही मुनि ईस ने।
यामैं कहा जग रीस[3], रतन परीछक कहतु है ॥५॥

१—अद्ध, २—आने, ३—ईस।

इहि मोतिन यह मोल, गुंज-गुंज उत्तम बढ़ै।
पै गुन दोष रु मोल बाढ़ि घाटि चातुर गढ़ै ॥६॥
पुनि चौसठि गुंजनि कह्यो, गद्या नव इकरूप।
ता सम मोती कोरि इक, मोल देत नर भूप ॥७॥
इहि विधि बढ़तै मोल की बाढ़ि घाटि तें घाटि।
करिहौ परौमनमानि करि कहि तोल पुनि काटि ॥८॥
जिहि ग्रन्थे जिहि विधि कह्यो तिहि विधि कह्यो बनाइ।
दोस इमें कछु नाहिं नै मुनि वच मग ठहराय ॥९॥
तिहि देशहि जो तोल होई राखहु सोइ परमान।
चूक परे तुम अन्यथा होत मोल महि हानि ॥१०॥
तातें मन मैं आनि यह या देशन विख्यात।
सोई ठहरत ठानियइ कहत कुंम भू भ्रात ॥११॥
मोतिन मोल सदा कह्यौ गुंज करत अनुमान।
बढ़त तोल मोलहु बढ़ै घटतें घटत निदान ॥१२॥
पून्यो शशि पूरन कला ता सम मोती होइ।
वृत्ताकार रु मौर सम, सुन्दर मुगता सोई ॥१३॥
सब अवयव संयुक्त तनु तामै कछु होइ।
मछ मयन नूपन तबै मत लेख्यो यह कोइ ॥१४॥
दाप मकरा कछ रख्यो फटीम तामै रेख।
देख्यो अंग सुदेखतै मोल करहु घट देखि ॥१५॥
ताकी छवि पोखरा परी एक औरि गुन चोर।
ताहि धरे में माहि रे आयु क्षय की दौर ॥१६॥

ता मोती को पहिरवौ, कवहु न कीजै मित्त।
जिन के राखे सुख नहीं, तिन पर कैसो चित्त ॥१७॥
छोटे तनि भारी निपट, सेत विमल पुनि गात।
मधु निभछायरूहत्तता, चिकनाई लसकात ॥१८॥
सो मुगता उत्तम कह्यौ, करिहौ यतन करि मोल।
विना शास्त्र को जानीयै, लीजै गुरु मुख वोल ॥१९॥
प्रलय होत आगम घटत, ता कारन कलि माहि।
शुद्ध मोल कलना विकट, कहत कछु ठहराइ ॥२०॥
तोऊ वच ग्रहि वरन के, कीजै मूल प्रमान।
पुनि जो देश विसेस यह, सोइ तोल ठहरान ॥२१॥
मुनियो सास्त्र प्रमान तै, लहै बडन ते दोप।
ताकौ छोरि रिषी कहै, अलप दोष कहा धोप ॥२२॥
कोऊ विग्यानी पुरप, करेजु मुगता आप।
ठग वगनी विद्या गहै, सन्तन होत सन्ताप ॥२३॥

ता मोतिन की परीक्षा कहतु है—

छप्पय—

प्रथम गहौ गोमूत भरहौ, भाड़े मनि आणि।
तामै लोवणु डारि ले ताहु को पुनि छानि॥
सेत वसन ले बांधि, धरहु मुगता मध्य ताके।
दिवस एक पुनि राखि, ता पर थारो द्यौ बाके।
तनि दीजै कीजै आग, गहै हथारी पर दिह।
सारी पुसन सुन्दर रहत, सो गहिने लाइक लहह ॥२४॥

अथ मौक्तर देशानुसारेण मोती की मोल कथम :—

दो० पानी चौदह वचको भाग छेदु चौबीस।
ताहि मानि मोलहु कह्यो यह गूजर अवनीश ॥२६॥

अब मोल करत द्रव्य की सज्ञा कथन—

दो० विसह तुंग पुरान पुनि कहत सोई अब सह।
मुद्रा ताहि को कहतु युग-युग फिरत मतह ॥२६॥
विसह तुंग सु तीससे होत एक दिनार मों।
सुवरन कहु रूप्य तजि तांबा की सी धारि ॥२७॥
ताकी सज्ञा कुम्य धरि, सा तेरह परमान।
भरण कह्यो पुनि सिक्क यह, कह्यौ छह्यौ गुरु ग्यान ॥२८॥
अपने अपने देश को करो मोल व्यवहार।
शास्त्र सिद्ध हम हो कह्यो या को वचन विचार ॥२९॥

॥ इति द्वितीयो वर्ग ॥

अथ माणिक्य व्यवहारो भिधीयते

दो अलख रूप आनन्द मय अमल ज्योति परगास।
याहि के सुमरिन मयै, सकल काज सुप बास ॥१॥
तीन लोक सुख वास को इन्द्रहि इन्यो जु दैत्य।
बलि नामा ताको रुधिर लीयो आप आदित्य ॥२॥
रुधिर लेइ सू मध्य तिहि, ठयौ एक तसु ठौर।
दसमुख मय लेवै अकी की ई आकर यह दौर ॥३॥

कौन ठोर त्यो सो कहतु है—

चौ०—सिंहल देश देशनि महिसार, अवण गंग तेहि मध्य उदार।
तहा रक्त ताकौ तिहि ठयो, वाको कौतुक इहि विधि भयौ ॥४॥
दुहु कंठ तहा होत प्रकाश, जैसे करत खद्योत विनास।
जल महि झलकति पावक रूप, इहि विधि दीसत सदा सरुप ॥५॥
पदमराग मणि सुन्दर वन्यौ, ताकौ भेदु त्रिविधि करि सुन्यौ।
प्रथम सुगन्धिक १ अरू कुडविंद २, पदमराग ३ तीनों यह छन्द ॥६॥
तीनों उतपति एकहि ठाउ, वरण भेद सिंगिरि के नाउ।
जोगन कौ समुझन कै हेत, मुनि अगस्ति भेदहि कहि देत ॥ ७ ॥
दोहा—सुनौ मुनी मुनी कहतु है, उतपति आगर जानि।
गुन सरूप मोलजु सुन्यौ, पाँचौ कहो जु ठाँनि ॥ ८ ॥
चौपाई—पदमराग उतपति यह कही, मणि के आगर सुनि जु लही।
एक एक छाया मनि आणि, भिन्न भिन्न करि कहौ वखानि ॥ ९ ॥
सिंहल देश हि आगर एक, डाहल दूजौ कह्यौ विवेक।
रंध्र देश तीसरे वखानी, तुवर कहियतु चौथी खानि ॥ १० ॥
ताके ढिग मलयाचल देखि, च्यारि खानि कही आगम लेखि।
अवै सवै जन जानत ऐह, ताकौ चिन्ह चीनि गुन गेह ॥ ११ ॥
पद्मराग सिंहल को वन्यौ, लाली लीयई निपट यह सून्यौ।
डाहल को कछु पीयरी मास, तावा वरण अन्ध्र मणि हास ॥ १२ ॥
हरी कांतो तूवर मुनि सुनी, आगर चीन्ह लेहु इह गुनी।
सिंहल को उत्तम ठहराय, करपुर मध्यम कहौ वनाय ॥ १३ ॥

दोहा—रत्न हेरा माणिक अधम, सुंदर कहे वस ज्ञान।
अधमाधम गुनहीन यह नाम हि रतन कहाय॥ १४॥
आगे इनके पुन दोष मोल कथन —
सो०—तीन वरग के आठ दोपरु सोलह गुन कहीं।
मोल करन की ठाठ तीन भाँति गुरु वचन ते॥ १५॥
पदमराग मणि नाम पुनि सुगन्ध कुरुविन्द हुइ।
वांछित पूरन काम, आठौं दोष विचार छ॥ १६॥
प्रथम दोष विछाय द्विपद कही पुनि दूसरौ।
भिन्न जु तृतीय कहाय कर्कर चौथा जानीये॥ १७॥
पंचम लसुनिये दोष कोमल सठल देखियइ।
सप्तम जड़ता पोष अष्टम धूम्र बनाय कहो॥ १८॥
प्रथम विछाय दोष को रूप कथन —
दोहा—छाया तीन हुं जाति की, मिलत परसपर देखि।
तासि कही तुम ठानियौ दोष विछाय विशेखि॥ १८॥
सुनि कुरुविंद सुगंधिते पदमराग गुन बाधि।
छाया हीन न होय तब धरत करत धन नाश॥ १६॥
याको राखि पाइ नर मर होवत नरराज।
अरिगन डर भागे फिरत करत कौरी व राज॥ २०॥
चौ०—तिहुं वरग महि धरत छबि झाँय, ता मुख पंकज करत विछाय।
देरा त्याग पर को है त्याग यह राखन को कहो कहा लाग॥
द्विपद दोष कथन —
चौ०—जमो होवत मन ई पाय ता सम लछन यहाँ ठहराय।
द्विपद दोष वाको करि लेहु ताको लेन कछु जिन देहु॥ २२॥

इनके ढिग राखे दुख होइ, भग होत रण माझिहि जोइ।
पतन अचानक जानहुँ भई, याकौ कोउ न राखत दई॥ २३॥

अब भिन्न दोष कहतु है :—

करतै परतै भंग जु लहै, भंग दोष ताही सौं कहै।
रतन परीछक ताहि न वरै, धरै ताहि फल ऐसो करै॥२४॥
सो नर मूरख अरू मतिहीन, दुःखी होत मुख बोलत दीन।
कहै अगस्ती सुनि मोरी बानि, ताकौ राखत एती हानि॥२५॥
पुत्र नास पुनि त्रिया वियोग, नारि धरत विधवा फल योग।
वश छेद करै रोग विकार, ए सिगरे भिन्नन परकार॥२६॥
भिन्न दोष मानक जो पायौ, विना द्रव्य तौउ करि लायौ।
करत न सुख मन रहत उदास, या कारन कहा इनकी आस॥२७॥

अब कंकर दोष कहतु हैं—

याके गर्भित कंकर रूप, कंकर ताकौ कहत सरूप।
कंकर दोष मुनीसर बानि, तिनकौ फल सुनि राखि न जानि॥२८॥
जाके तन संकर गत दोष, ता तीनि आठ हौं गुन पोष।
ता कारण फल इनको दुष्ट, जानि तजत नर जो ह्वै शिष्ट॥२९॥
पुत्र बन्धु पशु मित्रजु होइ, आश्रित जन-धन मनइ कोइ।
कष्ट मगन सबहिन कौ करि, ता कारन इनि कोऊ न धरै॥३०॥

अथ लसनु दोष कहतु है—

लहसुन कुलीयन के अनुहारि, यामै विन्दु परयौ मध्य धारि।
फल अशोक सम ताकौ रङ्ग, लसुन दोष ता मानिक सग॥३१॥

अथवा मधु सम वर्ण जु कीर्जई बिन्दु पर्यो ता माणिक कीजई।
याहु छद्दसुन दोष मुनि कहै पंचम दोष सुनै सोइ कहै ।।१२।।
याको फल नहीं औगुन रूप नाम दोष को सहज सरूप।
आगे छठउ दोष दिखाय सब भूवन सौ कहत बनाय ।।१३।।
कोमल दोष कहतु हैं मुनि कोमलता ताकी मधु सुनी।
घसे घसत क्यु घासै और कोमल दोष ठहरान मरोर ।।१४।।

कोमल दोष परीक्षा कहतु है—

जा माणिक कौ घसै बनाय चूरन काठ करेज सुकाइ।
तातैं तोल घटै नहीं रती यहै भाँति कोमलता छती ।।१५।।
कोमल दोष भाँति कही तीन, धामइ कहीयइ भेला न मीन।
वर्ण भेद तें जानहु भेद तामैं कछयन अपसत खेद ।।१६।।
प्रथम अशोक समौ है रंग ता कोमल की रासि प्रसंग।
प्रबल तापरू भोग बिलास सबै सबै पूरन मन आस ।।१७।।
पुनि जा मधु के रङ्गनि मन्यौ सो मध्यमी दाता हम सुन्यौ।
जाको रङ्ग बेरमि के मानि ताको फल सुन्दर नहीं आनि ।।१८।।

उत्तम दोष कथन—

सो०—जिहि माणक का रंग चट्ट होइ परकास बिनु।
जड़ता ताके संग कहीइ कहीइ दाप इह ।।१९।।
याको रासि नांहि सुख होवत क्यांहुं कछू।
अपकीरति जग मांहि जाहि कांहि कोई न गुन ।।४ ।।

धूम्र दोष मुनिराज, कहत आठमौ धूम्र सम।
सिंहल बन्यौ अकाज, राखत मतिहानी करै ॥४१॥

निर्दोष मणि धरै ते फल कहतु है—

कवित्त—कहत अगस्ति मुनीश ईश सब दिन कौ सांची।
पद्मराग शुचि राग धरत चिकनाईत काची॥
सुदर ताकौ रूप सूर उगत छवि ओपै।
जो नर धरत सग्यान आन तसु कोऊ न लोपै।
पहिरतै अंग आणंद अति गो भू कन्या दान फल।
पुन्य होत यग्यन[1] कीय सोइ मानिक राखत अमल ॥४२॥

आगे सोरह भांति की छाया कहतु है—

कवित्त—प्रथम कमल पुनि लोद, फूल फूलतनि झांइ।
लाखा रस बन्धुक बिल, कचोलन ठहराई।
इन्द्रगोपनि की वानि जानि केसर रस चखि।
पिकलोचन रु चकोर, नेत्र समौ लखि॥
चीरमीअ आध सिन्दूर सम, पुनि कसुभ दारयौ हसत।
विकसत फूल सिवल[2] समी, इह सोरह छाया कहत ॥४३॥

दो०—पद्मराग १ करूविन्द, सौगन्धिक तीनौ मिली।
सोरह छाय अमन्द, मुनि अगस्ति मुख तै लही ॥४४॥
पुनि अगस्ति सुप्रसन, करत रिषीसर सब मिली।
जुदे-जुदे जग विष्नु, कहौ कौन भाँति भए ॥४५॥

१—यापनकीइ २—संवल

चौ०—अब बोले मुनिराज प्रवीन, पदमराग छाया कुल तीन।
मोरह में जोती है ताहि सो तुम पेखहुँ कछु वनाहि ॥४६॥
रक्त समल की छाया एक, सारस नयन चकी सुविवेक।
चलि चकोर की तीनों गिनी, विकसत दाखों मरवी सुनी।
पिक लोचन सम छाया मिली, इन्द्रगोप छाया यहु मिली।
मखछत अनूपा कही मुनि भूप, पदमराग सातौं छवि रूप ॥४७॥
ससा रुधिर लोध्र को फूल, फूल दुपहरी चीरमी मूल।
त्यधि सिन्दूर प्रगट सुनय कोफूल, छाली ठीये कल्पविन्द म मूल ॥४८॥
अब सौगन्धिक छाया यहि, लाल हींगलू केसर गहै।
कछुक नील छवि छाली घनी इह सोभा सौगन्धिक बनी ॥५०॥

इनहु को मोल विचार कहत है—

दो०—मुनि अगस्ति मुनि सो कहत छाया कही व मूल।
एक एक त्रिक त्रिक गिनत, सब भेदन को मूल ॥ ५१ ॥
कांति रंग इकईस विध तीस सबै मिलि होत।
मोल मेद विस्तार अब, करत मुनि उद्योत ॥ ५२ ॥
कांति रंग उत्तम गति और अधोगति जानि।
पार्श्व गती से ज्यो॑ मध्यम अधम तीन यह ठानि ॥ ५३ ॥

ज्योति रंग कैसे जानीये सो कहत है :—

जो मनि बाहिर ठामीयइ, अगमि राशि सम ज्योति।
परे भरे ता नाम कहि, ज्योति रंग सोइ होत ॥ ५४ ॥

१—ठौ।

पुनि प्रभात रवि मुख समी, या मानिक की काति।
वां मे दरपन ज्योति परत, भाई आप अन भ्राति ॥ ५५ ॥
इन दुहु भ्राति विलौकतै, ज्योति रंग ठहरान।
पुनि आगे सब जाति सुनि, कहत मानि मन आंनि ॥ ५६ ॥
रतनपरीछा जान नर, पद्मराग ले रत्न।
कै विसवा कौ रंग यह, जानि लेहू करि यत्न ॥ ५७ ॥
पाछे मोल विचार कहि, सोऊ लहै नृप मान।
अविचारै लघुता घनी, बनी ठनी विनु ग्यान ॥ ५८ ॥
ता कारन इक मुकर ले, धरीइ दिनकर देखि।
ता पर सरसौ सेत रूचि, ताकी पंकति लेखि ॥ ५९ ॥
ता पर गुजा एक कौ, माणिक राखहु बीच।
जब एकहि पिंडजु वन्यौ, यव तिर[२], हुग कहा वीच[३] ॥ ६० ॥
ताहि बाल रवि किरन तै, परत ज्योति रवि रूप।
जेते सिरसौ गिनि कहौ, ते ते विसे सरूप ॥ ६१ ॥

सो०—ता माणिक की जाति, जाने चाहौ चतुर नर।
तासौं एसी भाति, राखि देखि ठहराय कहि ॥ ६२ ॥

एक ही छत्री ब्रह्म द्वय, तिहौ वेस गिन मीत।
च्यारौ शुद्र सराहीयै, पाचौ विषय प्रतीति ॥ ६३ ॥
ग्रंथांतर सै कहत है, मुनि मत बोल प्रमान।
सुनहु घर नर साधि कै, देहु लेहु गुरु ग्यान ॥ ६४ ॥

२—तिरछा। ३—पीच।

जो मानिक है एक, जिहूं और मल करम दस।
ता को कीयइ विवेक, है सत गिन कीजीयइ॥ ६५॥
पद्मराग पइ मोल कुरविंदी कह्यो ऊनगिनि।
चौथे मागल मूलि अर्द्ध सुगंधिक ठानि॥ ६६॥
करम मम्म अइ हीन गिन, लेखा माँति भली।
है सत दस नही हीन, सत पंचोत्तरि साठि पुनि॥ ६७॥
हीन कहत मुनि केइ, सत्तहत्तरि अपनी इकति।
तासौं आनत येह, इसें सिद्ध अब मम्मता॥ ६८॥
इक पव होवे एक, बढते आठ समान है।
दुगन चुगन सुविवेक मोल बढत मुनि बचन मई॥ ६९॥
सौगंधिक मनि भेद, करम गुनी होवे कहो।
आठ गुनी कई बेद मोल लेहि मुनि बचन सौं॥ ७०॥
मम्म गुनी मनि धाम सतहत्तरि सत पाच मिलि।
तैन लेम यह ठाम मुनि बच मोल हीयइ धरौ॥ ७१॥
ज्युं ज्युं न होवे पाट त्यौं त्यौं सत आधा घटत।
घइ मनि मोल न घाट, मुनि वाच्यौ मन माहि धरि॥ ७२॥
एक बरण के मामि मात्रा पुनि सरसत धरै।
ता घटते घटि वानि बढे बढत मोल त सरस॥ ७३॥
दो०—एक सरसौ जा बढत या मानिक छवि ताहि।
मोल बढत घटते घटत, इह मुनि गुन ठहराहि॥ ७४॥
पुमि कुरविंद सुगंध की भे छबी ऊनी होइ।
एक सरसौ है सत घन्त आनत आनत कोइ॥ ७५॥

सो०—या मानिक कौ तोल, अधिक होइ रुचि छीनता।
ता मानिक को मोल, अधिकाधिक ठहराइयै ॥ ७६ ॥
दो०—रतन जान केते कहत, जंबूद्वीप न मांझ।
कोरि छत्रीस उगणईस लछि, चौदह सहस ज सांझि ॥७७॥
च्यारौ युग आगर इतें, होत कहत मुनिराज।
कूर साच वे ई लहत, के जानत महाराज ॥ ७९ ॥
उपजत सिंहलद्वीप कौ, लछन युत सुभ गात।
भनक भली आगर यही, पद्मराग ठहरात ॥ ८० ॥
या कौ भाग जु छठउ, रंध्र देशि मनि जाणि।
अरू उंबर कोऊनगिनि, यौं है सिंहल खानि ॥ ८१ ॥
तातै भागजु तीसरें, कल पुर भयो जु ऊन।
महा मुनीसर वच विर्ना, कहि नर जानत कौन ॥ ८२ ॥
जा मानिक की वहुत रुचि, ताकौ मोल जु वाढ।
ज्योतिवंत लछन रहित, हीन मोल कहौ बाढ ॥ ८३ ॥
आगर उत्तम को वन्यौ, होइ जो लछन हीन।
तोल वाढ मोल जु वढत, कहत न हूजें दीन ॥ ८४ ॥
हरूओ अरु कुंअरौजन हौ, गहत न कोऊ आहि।
ज्यौं ज्यौं भारी देखीयै, सौ सौ लीजै ताहि ॥८५॥
हीरो हरुउ त्यौं भलो, पद्मराग गरुआत।
यह लेनौ देनौ अधिक, मोल हरख उपजात ॥८६॥
देखत मानिक काहू कौ, उपजत कछु सन्देह।
सहज तथा कृत्रिम वन्यौ, ताहि परीक्षा एह ॥८७॥

घरी [1] दुईक करि एक पुनि, घसें जु होई अशुद्ध।
इहि भाँति करि पारिख्यौ मन दे लें अविरुद्ध ॥८८॥
पद्मराग अरु नील मनि, घसत वज्र तें होइ।
उरे शस्त्र न घासोयई, घसत बिगारत सोई ॥८९॥
इहि अधिकार विचित्र हुव पद्मराग मनि मानि।
अब आगें विस्तार सुनो, नील मणी गुरु ग्यान ॥९०॥

इति तृतीयो वर्गः—

प्रणव नमत पातक गए मई सकल सुख रिद्धि।
इह सानिधि कहुं नीलमनि विवरण ताकी सिद्धि ॥१॥
चौ० बलि नामा दानव कहि सुनी इन्द्रहि हन्यौ बन्यौ इह गुनी।
दैत्य आस्थि लौह दस दिसा गए भए लोचन कहा बसा ॥२॥
इन लोचन तो आगर भयौ इन्द्रनील मनि नाम जु ठयौ।
सिंहल देश नील भवि धनी मानहु देव गंग सम गिनी ॥३॥
ताके तीर नेत्र वहा ठए, इन्द्रनील अति सुन्दर भए।
कछु कलिंग त्वपति हूं जानि आगर अधम कह्यौ मुनि बानि ॥४॥
सिंहलदीप भयौ जो नील, तीन लोक परसिद्ध न डील।
और कहियत नील कलिंग तेई नाम धरत धरि लिंग ॥५॥
कलिंग देपि यह होत सदोष इन संग्रह कौ धरहो न पोष।
मनुष लोक माहि आगर होय चारि जाति यामें सुनि होई ॥६॥
सेत नील छबि जाकी बनी ताकी ब्राह्मण जाति सुनी।
रक्तनील छाया तनि लीयइ ताकौ क्षत्री कहि करि दीनीयई ॥७॥

१—घसी

पीयरी प्रभा वेस गिनि लेहु, कारी नीली सूद्रक देहु।
इह भाँति वर्ण जु जानीयउ, ताके लछन मन आनीयइ ॥८॥
धेनु नयन सम याकी भास, अरु सेनन चखि होत प्रकाश।
यह दोऊ गिनी इनही भले, रीपि केई युंही कहि मिले ॥६॥

अथ नील मनि के दोष गुण छाया कथन—

दो०—दोष छहै गुन चारि सुनि, पुनि छाया दश एक।
सोरह भेद जु मोल के, ताकौ कहु विवेक ॥१०॥

अडिल्ल—प्रथम दोष आकाश पटलछाया लीजयउ।
दूजै कर्वुर दोष पोष जान हो होई।
पुनि तृतीय यह दोष रेख करि होत है।
चौथे भंग जु दोष रत्न चिन्दु युं कहै ॥११॥
पचै मिटे या दोष मध्य गत याहि कै।
षष्टम मध्य गत होहि पाषाण जु ताहि कै।
अब इन दोषन होई फलाफल जौ कहू ॥
जैसे कहे मुनिराज तिहि विधि हुं लहु ॥ १२ ॥
अभ्र छाया दोष मणी लै जे धरै।
नर नारी मध्य कोल ताहि वंसु छय करै ॥
ता पर उलकापात अचानक देखीयै।
प्रथम दोष फल एह मुनीवच लेखीयै ॥ १३ ॥
कहत कवरा दोष दूसरो ताही कौ।
फल जानौ तुम मित्र व्याधि भय वाहि कौ ॥

दुगम सदधि नर जात वैद सो कंहु मिळे।
तऊ न ता तन रोग योग किहि विधि टळे ॥ १४ ॥
दोप तीसरो रेख मध्यगत भाखीइ।
फळ ताको यह होय हीय मंहि राखीइ॥
या नर के कर मध्य रहै इह सुन्दरी।
ता तनि पीरा होय सुनहो तुम सुंदरी ॥ १५ ॥
पुनि तिहि बाप वयाळ मयाकुळ से मही।
तृष्टी जीप है जेइ तेइ करै नर को मही।
दोष यह सुनि कानि मानि गुरु वाच को।
तजो नीळ मणि¹ यह देइ सुख साच को ॥ १६ ॥
इन्द्रनीळ मनि जेइ धरै गुन भंग को।
भळप चोर कहै संग सोई नही संग को॥
मिळा विमूक्ष जानि आनि अंगनि धरै।
विधवा होइ विग्मान नाहि मिह्चै मरै ॥ १७ ॥
कहिके चौथो दोप सुनौ अब पाच कों।
इन्द्र नीळ के मध्यमिहि सुनि पाचको।
ताको राखत अंग पीर होइ मास तें॥
रोम रोम गिनि लेहु देहु किहि पास तें ॥ १८ ॥
नीळ मध्य पाषान दोप शठ सुन्यौ।
धाको फळ रिपि राज कह्यो त्यौंही फुन्यौ॥
संग होइ रण माझि बांझि बानी कही।
लागे मस्तक घाउ दाउ दुरजन कही ॥ १६ ॥

इह वहु दोप को फल भयो। आगे च्यारौ गुन कथन :—

दो०—कहै अगस्ति मुनि सवन कौ, सुन हौ गुनी गुन एह।
च्यारौ चरचा करि कहु, मन थिर सुनि हौ तेह॥ २०॥

(पहिलै भारी [1] दूसरै चिकनाई तिन हौ गुनी गुन एह।
च्यारौ चरचा करि कहुँ, मन थिर सुनिहौ तेह॥ २१॥
पहिलै भारी दूसरै, चिकनाइ तिन जानि।
ज्योति भलीउ इह तीसरौ, चौथे रजक मानि॥ २२॥
सेत वस्तु ऊपरि धरै, अपनी छाया ताहि।
देत करत निज रंग कौ, रजक कहीइ वाहि॥ २३॥
फिरि वौलै मुनिराज सौ, रिषि सवै गुन एह।
आगे छाया सुनन कौ, लागे निह्चै तेह॥ २४॥
गुन छाया के योग तै, होत मोल परकास।
तातै कहत अगस्ति मुनि, सुनहो ताहि प्रभुदास॥ २५॥

छप्पय—प्रथम मोर पर रूप[1] दुतीय नारायन रंगह[2]।
तृतीय नील सम छाय[3] कपूर वल्ली फल संग्रह[4]॥
अरसी फूल जु पांच[5] कंठ कोकिल[6] छठउ गिनि।
भमर पछ सम सात[7] सरस फूल न अठउ मनि॥
कमल नील नव कीर गिन हौ दशइ शुक कंठहि समी॥
ग्यारह ही धेन नयन सरिस मन भ्रम राखौ ह्वै भ्रमी॥ २६॥

चो०—ए एग्यारह छाया रूप, करत परीछा पहिरन भूप।
छाया देखि करत जौ मूल, ताकौ कछुय न होवत भूल॥ २७

दो०—पिंड प्रकाश रु दोष गुन, लखन ए सब चीन्ह ।
करहो मोल तुम रतनविद होवत मन न मलीन ॥ २८ ॥
और परिखो करन कौ जो भैंसन पय लेहि ।
राखि रहै पुनि काढ़ि तिहि, देखहु पय रंग देह ॥ २९ ॥
जो पय नीली छवि धरै, तो कहिए मणी नील ।
ऐसे परीक्षक रतन को कबहु न कोमे ढोल ॥ ३० ॥
शास्त्रहि सो सुन्दर कहत इन्द्रनील मनि ईश ।
चन्द्र रेख या मध्यगत सो कहि बिसे नु बीस ॥ ३१ ॥
जो रंजक आगे कह्यौ औरन को रंग सोइ ।
अपनो रंग आगे करे बहुत मोल पौ होइ ॥ ३२ ॥

मोल कथन

चौ० इन्द्रनील यवमान जु होई पिण्ड प्रकाश बन्यौ गुन जोई ।
ताको मोल अधिक कीजीये दोष रहित निहचै कीजीये ॥३३॥
पिंड कांति ताकी मनि मापि मोल अधिक बनौ मतिमानि ।
पुनि इक पारस रंजक कह्यो एक पल रंग है कहिठयो ॥३४॥
दो०—पारस रंग तासों कहौं निकट ठई जो वस्तु ।
एक चहुरंगहि धरै, सुनि[1] मुनि कहत अगस्त ॥३५॥
ताको मोल सु पंच शत रतन शास्त्र मग देखि ।
जब पिरन ठहराय कहौ गुनन बन्यौं लिहिलेखि ॥३६॥
अब आठम को नील मनि चौसठ सहस प्रमान ।
कहत ग्रन्थ अगस्त्य गति यातें अधिक न आन ॥३७॥

१—मन

रतन जात जु कहत यह, देशकाल गति बूझि।
कही पमुख बातहिं ससी, लहीयइ सुधियन सूझि ॥३८॥
कह्यौ मोल विस्तार यह, कहत रत्नविद लोग।
बाल वृद्धि पुनि भेद युत, कहै लहैं सुख योग ॥३९॥

प्रथम बालस्वरूप कथन—

हिम सीच्यौ दिन आदि, फूल ज्यौं फूलत नयौ।
आरसी खेतन मध्य, महामुनि यौं कह्यौ॥
बाल कहति तिहि नाम, धाम बहु रूप कौ।
कहत कहा नर कौई, ज्युं मेंडक कूप कौ ॥४०॥

त्यौहि फूल अमोल बन्यौ अरसीन कौ।
मध्य समै रुचि छीन भयो तिहि दीन कौ।
कारीय रूषी ज्योति भई दई दे दई।
याहिन कौ कहै वृद्ध, मुनि मनियु भई ॥४१॥

पुनि इक अरसी फूल सीत जल सीचतै।
रवि डूबति तिहि काल बन्यौ तिहि बीचतै॥
ज्यौं जल परि सेवार रंग तिहि भांति कौ।
सो परिपक्व कहावई रहा इन भाँति कौ ॥४२॥

भौंति भौंति बहु रह्न पृथ्वी माहे जानीयै।
होत परवांन अनेक परीछा ठानीयइ॥
नीलमणी निरदोष धरै जो अंग सौ।
ता घरि लछ भराय कहै मुनि रह्न सौ ॥४३॥

आयु वृद्धि आरोग्य प्रताप सवा बढ़ै।
पुत्र पौत्र बहु मित्र महा यश करि चढ़ै॥
ताहि सनीचर दोष न होइ सदा सुख सो रहै।
इह विधि कुंभ मुनीश नीलमनि गुन कहै॥४४॥

चतुर्थो वर्ग—

अथ मरकत व्यवहारो निरूप्यते—

दो—प्रणव नमूं सब गुन मयी यामैं पांचहो रूप।
याहि के सुमरिन सबै, पावत सिद्ध स्वरूप॥१॥
सब मुनि मिलि पूछत मुनी कुंभ भूत गुरु ग्यान।
मरकत मनि के भेद सुभ कहौ बनाय बखान॥२॥
कहत अगस्ति सुनौ सबै मरकत मन की बात।
बलि अंगम ते इह भई सबै रत्न की जाति॥३॥
बलि मांसन पेसी परत धर बासुकी नाग।
अति उछक मिश्र गेह प्रति, गरुड़ डगनि सुम लाग॥४॥
देखि गरुड़ तिहि छेन मनि कीयौ भयौ भयभीत।
पर्यौ बासुकी बदन ते, धारा सम्य मह रीत॥५॥
विषम ठौर दुरगम सुघर, पर्यौ विपुरि सब ठौर।
म्लेच्छ देश जलनिधि निकट, पोट पहारनि दौर॥६॥
धरणीधर नामा सु गिरी महा आगर भयौ आनि।
मरकत मनि मरकत तहां महामुनी बानि॥७॥

चो०—भाग्यवन्त देखत यह मनी, महारत्न गुरु वानी सुनी।
अल्प भाग्य देखत हौ[1] कैसे, देखत जाकौ होयरौ हसे ॥८॥
सपत दोष गुन पाच जु वनै, छाया आठौ काननि सुने।
वारह भाँति मोलनि की गिन्यौ, याकौ व्योरो आगे सुनो ॥९॥

अथ दोष कथन—

दो०—रुखन १ फूटन २ दूसरौ, तीजौ मध्य पषान।
कंकर मलिन रु जठर फुनि, सिथल सात यह मान ॥१०॥

फल कथन—

रूखो राखत पास कहा फल अग की।
व्याधि एक शत आठ उठत न संग की ॥
भग होत छन माहि ताहि फूटक कहौ।
ताहि धरे सिर घाउ खडग कौ तिहि भयौ ॥ ११ ॥
पत्नो दोष पषान समान ह्वै।
ताकौ फल निज वंध वैर मुनि जन चवै ॥
मिलिन दोष जिहि गात भ्रात वातै लहै।
अंध वधिर फल जानि मानि करि को ग्रहै ॥ १२ ॥
कंकर दोष विचित्र त्र[2] फल विधग्ता।
पुत्र मरण अध होइ कोइ नही षता ॥
पत्नो जाठर दोष जरावै भूपना।
सिंह सरप भय जानि ताहि क्यौ राखना ॥ १३ ॥

१—देखत कहौ कैसे २ त्रस फल

सिद्ध रूप पुनि होय पाहि मुनि मरकते।
राखै कोउ ताहि जीव ना फिरि फिरै॥
कह्यो सातहों रोप मुनी मुख भाखते।
फल धरि हियरा माहि गह्यो गुन सोच ते॥ १४॥

दो०—प्रथम स्वच्छता गुरु चतुर स्निग्धइ अरु गुरु पिंड।
हरित तनू रंजक पनो सप्तम कांति अखण्ड॥ १५॥

यह गुन को विस्तारकथन —

चौ०—नील कमल दल उपरि ठयो दीसत स्वच्छ नीरकन भयो।
ऐसे निर्मलता जहाँ होय स्वच्छ गुनी पन्नो कहो सोई॥ १६॥
गुन भारी जानहु तिहि तोल अधिक जान ठहरावत मोल।
चिकनाई याते तनि बनी गुन चिकनाई अतीव ठनी॥ १७॥
पिंड बड़ो गुन चौथो कह्यो हरित तन गुन पंचम लह्यो।
रंजक गुन को यहै विचार जे पन्नो करि धरि निरधारि॥ १८॥
धरत सूर सनमुख सब लोक, तन छाया ना रहु विलोक।
याकी कांति बनी बहु भली कांति रतन गुन सातों मिली॥१९॥
आगे छाया आठ प्रकार, गुन हो मिश्र कहुँ ताहि विचार॥
ताको अति उत्तम जानिये द्रव्य देइ निज घर आनिये॥ २०॥
प्रथम कह्यो शुक पक्ष समान, कंदा पत्र सम दूजी जान।
तीजहिं विधि होवत सेवार, चौथे पोष बनी मनुहार॥ २१॥
पंचम मोर पिछ ज्यो होत, छठई फूल सरसों की ज्योति।
सपतम मोरमूष का रंग अष्टम बास पिछ सम अंग॥ २२॥

आठौ छाया कहि वनाय, पंच रत्न यातै ठहराय।
यामै च्यारौ वण विवेक, छाया भेद करि तिहि छेक ॥ २३ ॥
जिहि पन्नहि नीली ह्वै छाय, कृष्ण काति तामै झरकाय।
थूथा रंग समानैं रंग, नील स्याम मरकत कह्यो चंग ॥ २४ ॥
पन्नो हरित स्वेत वनि रह्यौ, सरस पत्र सम वनकजु कह्यौ।
स्यामल सेत कहत तिहि नाम, और कहा ढूढत यह ठाम ॥ २५ ॥
शुक पिछ सम छाया तोइ, यातै[1] सुवरण कातिज होइ।
पीत नील पन्नो तेहि जानि, जाति तीसरी यह ठहरानी ॥ २६ ॥
इरि वर्ण रेखा तनि नही, चिकनाई दीमति द्युत सही।
तनक तनक सेवा रस नूर, रक्त नील पन्नो गुन पूर ॥२७॥
यही भाँति पन्नो गुन भूर, नर पावत पुन्यह अंकूर।
याकौ नाम पुरातन कहै, रतन काकणी गुरु वच कहै ॥२८॥
चक्रवर्त्ति कंठन में हुतौ, कारन हीति यह जुतौ।
तउ सकल गुन रंजक सार, पै दीसति नरपति भण्डार ॥२९॥
कोटि सुवर्ण लहियइ कहाँ, विष थावर जंगम नहीं तहाँ।
पद्मराग मोल जु मुनि कह्यौ, ताहि भाँति पन्नो पुनि प्रह्यौ ॥३०॥
च्यारि भाँति पन्ना की जाति, गरूडोद्गार प्रथम विख्यात।
इन्द्रगोप दूजो यह भेद, तीजौ वंश पत्र नहीं खेद ॥३१॥
थोथा चोथा जाति बखानि, इन च्यारन सुनीय मुनि बानि।
थावर विष जंगम मनि सुद्ध, मेटत यामै नाहि विरुद्ध ॥३२॥
जल पईइ ताकौ जु पखारि, विष टारत मुनि वय अनुहारी।
पद्मराग को च्यार प्रकार, मोल धर्यौ तिहिं इनहि विचार ॥३३॥

---

[1] यामैं

अडिल्ल—कांति पिंड विस्तार विषद्दन लक्षना।
सुक पंखनि सम रूप मध्यगत पन्नना ॥
यातैं सेवड स्याम अधिक है ताहि कौं।
दरपन कीजै दीठ सु दीजै ताहि कौं ॥३४॥
फूल सरीस सुरीत[1] कह्यौ पन्नौ।
मोल एक शत मापि दशौ सो झेलि छै।
पांच यवन को मान ताहि सत पंच की।
कीमति कीजै तान जानि कहि साच की ॥३५॥
इहि विधि यव की वाढि बढावै द्रम्य कौ।
शुद्धवन्त कहि देइ सदा शुभ दिम्य कौ ॥
आठ यवनि के मानि अम्बु जो पाईयै।
साठि सहस परि च्यारि सहस ठहराइयै ॥३६॥

दोहा—गरुडोद्गारव प रतननि होई परै कोउ हानि।
लक्षन पूरन गुन सकल विष बल नहीं तिहि सानि ॥३७॥
पुनि लछमी दीक्षा कहत ताही ते मुनिराज।
गरुडोद्गार सरस कह्यौ मरकत च्यार हो मांझि ॥३८॥
जो सदोष मानक करहि, मोल रत्नविद् रूज।
सो मरकत हू कहत अधिक करम कह्यौ कोम ॥३९॥
जामैं होइ विचार चित पन्नो शुद्ध अशुद्ध।
ताहि परत पाथर परनि मखत माहि अविरुद्ध ॥४०॥

१—सरीत सरीस

ज्यौं अनेक रंगनि वन्यौं, पन्नो होत जु हीन।
ताकौ देवत पंचशत, मन मत करहु मलीन ॥४१॥
होत आध शतपत्र छवि, मोल मुनि की वाच।
ताहि लेहु ठहराइ तुम, मुनि वच गिनइ साच ॥४२॥
गरुडोद्‌गार सदा सरस, इन्द्रगोप इह दोउ।
एह घटि पईयत नृप घरहि, कहौं इक होवत कोउ ॥४३॥

इति मरकत व्यवहारो पंचमो वर्ग

अथ उपरत्न व्यवहारो निरूप्यते—

परम पुरप परमातमा अनहद अगम अनन्त।
नमन ताहि करि कै कहौं, और रत्न विरतन्त ॥१॥
महारत्न पाचौं कहे, अव उपरत्न वखानि।
कहौ सवै मुनि नृपनकौ, इह अगस्ति मुनि वानि ॥२॥
हीरा मोती पदम रूचि, नीली मरकत पांच।
च्यारौ रत्न उपरि कहत, होवत साच ही सांच ॥३॥

सो०—गोमेदक पुकराग, कहत लसनीयौ तीसरौ।
अरू प्रवाल महाभाग, चारि जाति उपरत्न यह ॥४॥

दो० - फुनि फाटिक पंचम रहत, कनक कांति अरू लीन।
घन रूचि सौगंधिक सुन्यौ, कहत कहा करि ढील ॥५॥
गोमेदक तासौ कहत, जो गोमूत समान।
अति निर्मल भारी वन्यौ, चिकनाई जुति दान ॥६॥

पुनि कञ्जक पीरी सतक, ममक होत बहुमूल।
बरण भेद न्यारो बरन, प्रगट करो हो तिनि मूल ॥७॥
चौ०—सेत कांति ब्राह्मण तनु मन्यौ, रक्त वर्ण क्षत्री ॥
पीयरी ममक कहावे वैस, शूद्र स्याम छवि ॥८॥

गोमेदक अधिकार सम्पूर्ण

अथ पुष्कराग कथन—

दो० पुष्कराग उपजत सदा जहाँ देस कलइन्य।
पीत वर्ण तामै अधिक, यामै नाहिं अकरन्य ॥९॥
सिंहल देश तहा जन्यो, पिंगल तनु पुखराग।
सयी पुहप तनु रंग सम मिरमल कांति पराग ॥१०॥
चिकनाई कुंवरी ललक, दोष रहित गुन पोष।
ताहि परत अरचा करत ता पर लछमी पोष ॥११॥
पुत्र कहि गुरू दुष्टता, पीर न ताहि स थान।
जग में सोई सराहीयै, होवत नृप बहुमान ॥१२॥

इति पुखराग। अब बैडूर्य लहसुनीयौ कहत है।—

दो०—म्लेछ[1] खण्ड के मध्य जहाँ पैन नाम नग एक।
ताहि निकट खानिज बनी ताको रंग बिबेक ॥१३॥
सिटी कंठ सम रंग जिहि, सौंधि सूत्र तिहि ठांव।
पम्हि दीप्ति भारी सरस, इह मुनीस मुख नांव ॥१४॥
कर्कर देश आगर सुनहो, होवत पीयरी भास।
सूत्र शुद्ध जो होइ तिहि ले मनि धरहु हुलास ॥१५॥

—————
१—म्लेछ। २—म्लेन।

दीपति जो अगार दुति, अंधीयारी निसि माझि।
क्षेत्र सुद्ध वैडूर्य तिहि, कर्कोद गहि साझि ॥१६॥
होत विडाल नयन सम, मध्य सूत्र गत देखि।
पुनि लहसुनि रुचि देखियतु, मध्य नेत्र सु विशेष ॥१७॥
इनि दोउनि उत्तम कहत, पुनि कठिनाई अंग।
चिकनाइ मरकत तनक, निरमल तालि संग ॥१८॥
मोल करहो मतिमान पुनि, देश काल ठहराइ।
लहसुनीया विधि यह कही, मूगा कहत बनाय ॥१९॥

अथ परिवारि (प्रवाल) कहतु है—

दो०—दिशि पश्चिम लवनोद तहा, हेमकंदला सेल।
रहत वारि मध्यग सदा, ता कूलनकी एल ॥२०॥
तहा मूङ्गा की खानि है, रग दुपहरी फूल।
पुनि सिंदूर समानि छवि, दास्यो पुहपनुकूल ॥२१॥
पुनि जावक रंग जु गहे, होवत इह छवि मान।
होत कठिन कीटन रहत, सो कहुं सुन्दर जान ॥२२॥

प्रवाल समाप्त

अथ चारों उपरत्न की महिमा कहतु हैं —

चौ०—गोमेदक परवारी होइ, रूपा मुहरी मूल जु होइ।
लहसुनीया पुखरागन मूल, सुवरन मुद्रा करि सम तोल ॥२४॥
मंद बुद्धि नर समुझन काजि, पंच रत्न मोल जु कहो साझि।
हीरा मोती उज्जल कहै, मानिक छवि लाली ले गहै ॥२५॥

नील स्याम रंगनि खानीइ पन्ना नीली छबि ठानीइ।
सेत पीयरी छबि गोमेद, पुखराज पीयरी छबि भेद ॥२६॥
लहसुनी हारित छबि सेत लहसुन रंग कहत हित हेत।
परवारन छबि कहि सिंदूर, रंग कहत यह नाहि न कूर ॥२७॥
कही परीक्षा यह मुनिराय मोल कहत याते ठहराय।
इस्त समस्या वस्त्रनि करौ गुपत मोल यह मुनि खिमि धरौ ॥२८॥
देरा काल गाहक गुन देखि ब्यापारी ब्यवहार विशेषि।
करत मोल सोच बस कहै इह विधि सील मुनीसर कहै ॥२६॥
इतने मव रत्न की परीक्षा भई। आगे नवग्रह के रत्न कहत है।

चौ —पदराग रबि मनि खानीयइ चन्द्ररतन मोतिन ठानीयइ।
मंगल मूगा स्वामी कहौ बुध पन्ना सामी मनि गहौ ॥३०॥
देव गुरु पुखरागन मिली शुक्ररत्न हीरा यह मिली।
नील मन्द की कहीयइ सही, राहु रत्न गोमेदक कही ॥३१॥
केतु कहत लहसुनीया मुनि इह मोतिन मुनि मुखतें सुनी।
अब आकर कहत मुनि केतु बिसि कहीइ तिहां तिहि धरि केतु॥[१]
सूत परि वर्तुल करि लेहु च्यार कोन चंद्रहि धरि देहि।
धर त्रिकोण मगल ठहराय शशि सुत नागरि पत्र ठहराय ॥३३॥
पंच कोण धर गुरु कौं करे, शुक आठ कोणो ले धरै।
शनि धर करि शस्त्रनि आकार सूप समो धर राहु बिचार ॥३४॥
केतु गैर ध्वज के अनुमान यह धर करि मुनि चच ठहराम।
वर्तुल सुन्दर करि सुन्दरी ता मर पहुची कर दे धरी ॥३५॥

१—धरि।

उच्च राशि अंश शनि ग्रहहोइ, उदयवंत अपनी दुति जोइ।
फल दायक लायक तिहि काल, जरीयै भरीयै घर बहुमाल ॥३६॥
मेख राशि दश अंसनि सूर, वृख के तीन अश शशि सूर।
भौम मकर अव वीस प्रमान, कन्यागन पनरह बुध मान ॥३७॥
करक अरु पंचम गुरू उच्च, शुक्र मीन सतवीस[1] समुच्च।
तुलहि शनीसर वीस हि अंस, राहु मिथुन बोलत मुनि वश ॥३८॥
केतु कहत मुनि राहु सरूप, इहि विधि सहि धि लेहु सुखभूप।
इन विधि नव ग्रह जरि लीजीइ, जतना आपनैं करि कीजीइ ॥३९॥
प्रथम एक वर्त्तुल आकार, घर कीजे ता मध्य विचार।
कहत अगस्ति मुनि क्रम जानि, यह[2] सरूप बनाइ सुठानि ॥४०॥
दिसि पूरवतें अनुक्रम लीयैं, सृष्टि पथ मन अन्तर कीय।
जरि दीजै निज सनुमुख हीर, इह पूरव जानहु तुम धीर ॥४१॥
अग्नि कूँण मोतिन ले धरौ, यामै कछु धोषा जिनि करौ[3]।
दिशि दछन मूगा ले धरि, नैरति[4] गोमेदक तहा जरी ॥४२॥
नील रत्न पश्चिम गिनि लाग, ताहि घरत उधरत यश भाग।
वायु कोन लहसुनौ देहु, फल उत्तम ताकौ गिनी लेहु ॥४३॥
पुखराग उत्तर हि भलौ, पन्ना ईश कौन ले मिलौ।
मानिक मध्य सबहि ठहरात, यही भाति मुनि मुख की बात ॥४४॥

कौन समय जरीइ ताको—

दो०—शुभ मुहूरत शुभ लगन दिन, उदयवन्त जो होइ।
ताकौं जरीय जुगति सौं, फल उत्तम कर सोइ ॥४५॥

१—सतवीस। २—घर। ३—धरौ। ४—नैरनि।

अथ फल कथन—

सुघर पुरुष पारखौं जो धरे, ताहीं सुखी निहचै यह करे।
राज्यमान लछमी है धनी, निहचै रहत ताहि घरि घनी ॥४६॥
लोक सकल तिहि देवत मान, सुखी होत गुरु मुख यह ग्यान।
यह नवरत्न विचार सु भयौ, कहत अबै मुनि इनतै भयौ ॥ ४७ ॥

इति उपरत्न मौल्य वर्नन नाम षष्टो वर्ग:

अथ नाना प्रकार के रत्नकौ विचार कथन —

प्रणव नमति मनि आनि पुनि गुरु मुख आगम पाय।
मुनि अगस्ति मग दिख गहै, आगे कहौं बनाय ॥ १ ॥
व्यास अगस्ति बराह अरु, रिषी सबै मिली एक।
रत्न उदधि मथि यह करै व्याम मबाम विवेक ॥ २ ॥
साठि भाम सुनि सुघर नर, कहौं पुराण प्रमाण।
ताहि समुझि नृप मान कहि, होत अग्याम समान ॥३॥

कवित्त छप्पय—पद्मराग पुखराग मिन हौ पनौ' कर्केतन'
वज्र अरु वैडूर्य' कांति शशि' सूरज' मधि मनि।
नवम कह्यौ मरकत' नील महानील सु ठान्यौ ' ॥
इन्द्रनील व्यवहार'' रोग हार '' सुगुन पिछान्यौ ॥
विमलक विषहर'' शूम्बर '' राजुरत्न धुव राग कर'
लोहित रुचक मसारगल्ल हंस गर्भ '' विद्रुम विमर'
अंजन ' अंक अरिष्ट शुद्ध मुगता भीकांतह'
शिषंकर शिवकांत' हो ही मिय कहत तह''
कही भद्रक मृत आन आमंकर जान हो
चंद्रप्रभमित आमि सुपरि सागरप्रभ' ठान हो

सुंदर अशोक[37] कौस्तुभ[38] अपर प्रभानाथ[39] वीतशोक[40] यहि
सोगंध[41] रत्न गंगोद कहि[42] अपराजित[44] कोटि यहि ॥ ५ ॥

चो०—पुलक[45] प्रभंकर[46] अरु शोभाग,[47]
सुभग[48] धृतिकर[49] पुष्टिकर[50] लाग।
ज्योति सार[51] गुण माल[52] वखाणि,
सेतरुची[53] हंस माल[54] प्रमाण ॥६॥

अंशुमालि[55] पुनि देवानंद,[56] खीर तेल फाटिक घ ति चंद।
मणि त्रिधा अरु गरुडोद्गार, चिंतामणि मिलि साठि प्रकार ॥ ७ ॥

अथ इन साठि रत्नकी जातिन मांभि काहू काहू रत्न की प्रसिद्धि है ताको लछन कहतु है :—प्रथम स्फटिक की जाति के च्यार नाम को दोहरा

सूर्यकांति शशिकांति दोइ, हंसगर्भ जलकांत।
इन च्यारन के गुण कहत, मुनि वच गहि निभ्रांति ॥८॥

चन्द्रकांत गुण कथन :—

ग्रीषम रति नर कोइ, होइ अटवी पर्यौ,
लग्यो ताहि तन ताप तिसायौ तिहा अर्यौ।
चंद्रकांति ढिग होइ धरै मुख मांभि को,
मिटे ताहि तन ताप करै यह सांभि को ॥ ६ ॥

सूर्यकांति गुन कथन :—

अडिल—सूर्यकांति मनि लेइ धरौ रवि तापमौ।
ताके नीचे ठानि गहै कर आपनौ॥
रुई अति सुचि रूप तलै धरि ऊपनी।
भरति अगनि तिहि मांभि तुरत ऊठत जली ॥ १० ॥

अथ जलकांत परीक्षा :—

जहाँ अगाध जल होइ, तहा इक वास छे।
ताके मुख जलकांत लगायो भों चले।
ता पैसाम तुम छेइ चर दो, बीच बीच सो।
जाइ ज्यौं तिहि जम मगन है बीच सो ॥ ११ ॥
फटै वारि चिहु ओर कोर न्यारौं गई।
दीसत भूमि सरूप भूप ज्यौं कहतु है।
होवत यह बहु मोल तोल याको कहा।
जहीमे जहीमहि माहि होत पुण्य हु महा ॥१२॥

जलकांत भयो चौथो हसगर्भ कहत है।

हसगर्भ जल मध्य सोभि तिहि चीजोइ
विष भवूरछ न्याल श्याल तिहि पीजीइ
जावर जंगम दोऊ कोउ लोपत नहीं।
यह मुनि मुख की वानि जानि हम कों कही ॥ १३ ॥

अथ परीक्षा लक्षण —

चौ०—पीरोजा जो पीयरे रंग निर्मल दीठि करत तिहि संगि।
भाग्य जगत अरु भजत हरिद बढत प्रताप करत रिपु दिव ॥ १४ ॥
रक्त वर्ण पीरोजा जन्यो ताहि धरत फल मुनि मुख भन्यौ।
वसीकरण या सम नहीं काम याहि धरौ मनि धरि गुर ग्याम ॥१५॥
स्याम रंग पीरोज समान, ताहि धरत विष नाहि निदान।
सर्पादिक विष अमृत पीयइ, जो नर अल्प आयु बहु जीवइ ॥१६॥

अथ चिंतामनि लछन—

हीरा काति समान दुति, दोप रहित निज अंग।
षटकौनो हरवौ तिरत, टांक सवा सुभ रंग॥ १७॥
या परि चिंतामनि रहै, तीन साम्भि तिहि ठौर।
अरचा करि फल लीजीयइ, औरन की कहा दौर॥ १८॥

इति सप्तमो वर्ग

अथ मणि व्यवहारो निरूप्यते —

अनेक रूप अनंत गुन, चिदानंद चिद्रूप।
भय भंजन गंजन अरी, रंजन सकल सरूप॥ १॥
ताहि नमनि करके कहतु, मनि के भेद विचित्र।
याके रूप गुन सुनत, लहत भूप वर मित्र॥ २॥
कौनौ कही कौन्यौ सुनी, कहां वनी तिहि भांति।
कहत सुनत मज्जन वरन, आनंद अति उपजात॥ ३॥
ईश कहत उमया सुनत, तिहि भाति तिन ग्रहि पंथ।
भाषा मग ढिग आनियह, ग्रंथ जानि पुनि ग्रंथ॥ ४॥
ईश कहत इक दिन गयौ, ब्रह्मा लीय जु साथि।
सुनि सुन्दर रेवा तटहि, तीर्थ शुक्र मग हाथि॥ ५॥
रतन पहार तहा रहै, कहै ता माग सु इंद्र।
इंद्रहि ठयौ नयौ जु यह, मनुज ताप हर चद॥ ६॥
याके दर्शन ते सकल, पाप मुक्त ह्वै लोगु।
रोगी रोग विमुक्त ह्वै, गत संशय गत लोगु॥ ७॥

तहाँ तीरथ पूजा करहिं, मन इ मान करि ठौर।
ते पावत शिव पद सुमिर, कहत देव सिर मौर ॥ ८ ॥
तहा भवानी कुंड महि, करहिं अष्टमी आनि।
माइन पूजन भक्ति तै होहि पाप मल हानि ॥९॥
यही आनि सब देवगन करि विहि कुंड स्नान।
फिर केदार गहे कहत पद मन्त्रनि सग मान ॥१०॥
पिण्डी गुरु पापी तहाँ दरसन पाके पाप।
मजत मजत कहत पद, माहण हत्या ताप ॥११॥
चतुर्दशी अरु अष्टमी पूर्णमासी आन।
पूजत जे पुन्यातमा, सो शिव लोक निदान ॥१२॥
इन्द्र हि तिहां मजु गु भक्षौ धनविहि भक्षौ जु कोस।
इम हुँ मन्त्र तहा भरे सुंदर मुनि गुन पोस ॥१३॥
तहाँ गरुड अगार तै महामही मनि काढ।
भई ज्योति परकास कर, पाप मलन सब ब्याढ ॥१४॥
ता महिमा तें मगट हुय मनि यह नाना रूप।
भोगद मोक्षद गदहरन, सकल गुनन को कूप ॥१५॥

पार्वती कहत है—

चौ० मणि उत्तम मो सो कहौ स्वामी पूछत तुमसौं हूँ सिर नामी।
जाहि भाँति जो मनि प्रभु होई लेवन पूजन विधि कहो सोइ ॥१६॥

ईश्वर कहै —

जाहि केदार तहि जू जाय भवमहो पूजहुँ ताके पाय।
यथा शक्ति लोकहु कौ पूजि पूजा बहु दीजै मन बूझि ॥१७॥

च्यारौं दिशि तहाँ वलि दीजीये, मन सुद्धि ताकौ जप कीजीयै।
महानदी पे जई इं तहां, रत्न खानि उपजत है तहा ॥१८॥
प्रथम मंत्रमय देह वनाय, गोजीभी रस लेपहु काय।
पाछ हि रत्न परीछा करौ, शास्त्र वचन मन मैं यह धरौ ॥१६॥
तप्त हेम सम वर्ण जु होइ, नीली रेखा जामहि कोइ।
श्वेत रेख धर रेखा पीत, रक्त रेख धर धरीइ चीत ।२०॥
स्याम रेख जामैं परछाई, नीलकंठ ता नाम कहाई।
ज्ञान भोग सो देत जु घनौ, दीरघ जीवत कर यह सुनौ ॥२१॥
जो मनि नक्षत्र के मानि, सेत रेख ता मध्य कहात।
सो मनि राखत होत कवीस, वढत आयु सुख भोग जगीस ॥२२॥
यो मनि कारी नीले रेख, बिल्लि नयन समौ पुनि देखि।
सोई करत धन लाभ अनेक, यह राखन कौ धरहु विवेक ॥२३॥
पुनि जो लाली तन मैं धरे, अरु पारद रुचि तनकिक परै।
इन्द्रनील रेखा छवि सेत, द्रव्य देवता कौ संकेत ॥२४॥
शुद्ध फटिक सम रूप जु होई, नीली रेखा तामैं कोई।
विष्णु रूप ता मनि कौ नाम, देत राज मन पूरन काम ॥२५॥
कृश्न विंदु या मनि के मध्य, सो मनि पूरत सिगरी सिद्धि।
पीत स्वेत रेखा तहा वनी, स्वच्छ नाम ताही को गिनी ॥२६॥
वन्यौ कवूतर कंठ समान, ता महि सेत विंदु ठहरान।
ताकौ दृढ चित करि जो धरै, ता तन कौ विष पीरा टरै ॥२७॥
सारंग नयन समी रूचि याही, महा मत्त गज नेत्र लखाई।
श्वेत बिंदु कवहु तहा रहे, ताकौ विपहर ईश्वर कहै ॥२८॥

केश हरे केसे है छाळ, के शामिनि सुम रुचि मुविसाळ।
के पिकलोचन छाया बने ए सबहिन के गुन यों सुने ॥२९॥
करि बांधव कोय नर राज भूत प्रेत ब्यंतर सब भाजि।
बाल और पीरा हि टरें, पृथिवीपति प्रीति जु बहु करें ॥३०॥
नाना रंग धरत तन मांझि, नाना रेखन की तहा मांझि।
बिंदु अनेक परे तसु कहो नाग वर्ण हर ताहिस कह्यौ ॥३१॥
कामकुंतल सुपहरन जु सुन्यौ हम अपनी रुचि ताको वन्यौ।
काहत ईसा बग सुख के काजि सबे उपद्रव टरत अकाज ॥३२॥
नील वर्ण सुन्दर तन भयो बिंदु पांच गुन ताकौ ठयौ।
निरमल भग छाय तिहि काळ, भुव गरुड़ सुन कहौं अनभाळ ॥३३
जो सिंदूर छाय तन गई रेखा सुन्दर ता महि रई।
हरन वण कछु कीजे सरूप, टारत बिष अमृत गुन रूप ॥३४॥
कारी रंग धरत मनि कोई, नाना विधि रेखा बहु होई।
बिंदु भांति भांतिन के बने क्वर नाशन गुन ताकौ गिनै ॥३५॥
पीयरी छाया सेत अनूप रेखा है ता मध्य सरूप।
सेत बिंदु तिहि मध्यहिं परे, बिछू बिष उत्तर कहा करे ॥३६॥
इन्द्रनील सम ताकी सोम सेत पीत गुन रेखा थोम।
नेत्र रोग टारत यह शूल जल पीवत ताकौ जिनि भूलि ॥३७॥
सेत पीत रेखा बनी हरित बर्न तन छाव।
ताकौ जलपान जु कीजीइ, बिष सब देत बहाय ॥३८॥
गिल्ही बने पीयरी तन गज नयन सम ताव।
सेत बिंदु ता मध्य गत मिटत अजीरन पाव ॥३९॥

लाली आधे तनि लीइ, अर्द्ध रहत पुनि स्याम।
रक्त शूल चख हर, कह्यो ईस गुन धाम ॥४०॥
निरमल स्फाटिक सो वन्यौ, तनक श्याम कछु लाल।
विष वीछू काटत पुरत, मेटत तनु दुख लाल ॥४१॥
अर्द्ध कृश्न पुनि अर्द्धमहि, लाली उजरी छाय।
तनक परत सब विष हरत, 'कहत ईश ठहराय ॥४२॥
रक्त देह पुनि रेख तहाँ, रक्त बनी शुभ छाय।
भमर परत ता मध्य यह, गरुड नाम ठहराय ॥४३॥
यातैं सर्प रहै सदा, और विषनि कहा वात।
सुर उदय तम ना रहत, गुन यह कहीयत भ्रात ॥४४॥
पीत अंग पीयरी परी, रेख रक्त पुनि ताहि।
सकल रोगहर जानीयै, मृगनयनी मन मांहि ॥४५॥
पीयरे तन कारी परत, रेखा विंदुअन लेख।
मेटत विष अहिराज को, औरन कोन विशेष ॥४६॥
कूष्माडी फूलन भनक, तामें विंदु अनेक।
रोग सकल नयनां हरत, यह गुन याकी टेक ॥४७॥
रक्तवर्ण बहु विंदु युत, तेज पुज तिहि देह।
ए सब विषनासन कहो, यामैं कहा संदेह ॥४८॥
विंदुनाभ यह नाम भनि, महा तेज तिहि मांझि।
कृश्न विंदु भूषित सकल, रोग हरन गुन सांझि ॥४९॥
फल आमरन समान रुचि, ता महि कारे विंदु।
सोई पुत्र सुख देन तुम, कुल कुमुदन को इन्दु ॥५०॥

शंखोपुहप समान दुति कृष्न बिंदु कन आन।
सो सौभाग्य करै प्रिया पद हर बच परमान ॥५१॥
कुंद फूल सम मनि बन्यौ, बन्यौ धुव आकार।
सो बिष मर्दन आमीयई, हर बचननि अनुसार ॥५२॥
जागत नेत्राकार मनि, मजारी मय नाम।
गरुड़ तेज सम तेज है, पूजत पईयत काम ॥५३॥
मनि मयूर चित्र जु बन्यौ कछु यक स्फाटिक ज्योति।
सो सब राजा ताहि के मन बंछित फल होत ॥५४॥
मनि शुक पिछ समान है, सेत बिंदु तिहि मांझि।
बिघन कोरि मेटत मनि धारि करि सकय न गांझि ॥५५॥
पारद बर्ण समान रुचि ता महि उजरी रेख।
आयु बढ़त पामिय बढ़त या महि मीन न मेख ॥५६॥
सकल बर्ण या रत्न महि, नाना रेख सरूप।
अर्थ बिबिध पर देत सो मान देत बर भूप ॥५७॥
बिबिध रूप पर बिबिध मनि दीसत है जग माहि।
ते सब गरुड़ समान तूं बिषमदक गिनी ताहि ॥५८॥
उदर मध्य उजरी भनक, कृष्न बर्ण तिहि पीठ।
सर्प सरूप बन्यौं सरस, बिष नाशत दृग दीठि ॥५९॥
सुनि उमया ईस जु कहत, यहै रत्न कीपा बात।
हम तो कही तुम तो सुनी, यही भांति अवदात ॥६०॥

यहो मणि बिचार—

दो०—मेढक मनि अरु मनुज मनि, सर्पन की मन आनि
ए तीनों की जाति गुन कछु इमै जु बखानि ॥६१॥

मांटक मनि लछन—

चौ० हरित वर्ण अरु होत त्रिकोण, सिंघारन आकारन और।
जेत वहुत गुजा त्रिहि मांन, सोई मेंडक मनि परिमान ॥६२॥

ताको फल कहतु है—

या घरि मेडक मस्तक वनी, मनि होवत सो नर ह्वै धनी।
धन विलसत नरपति दै मान, वर अधिकार न खण्डत आन॥६३॥

अथ सर्प्पमनि लछन कहतु है—

कजल सामल तनु जिहि रूप, अरु वर्त्तुल आकार अनूप।
तेजवन्त दर्प्पन अनुहार, तामै प्रतिविंबत आकार॥६४॥
तोल पाँच गुजा तीहि होत, कठिनाई गुन अधिक उदोत।
वासिग कुलछैत्री ह्वै नाग, ताके सिर उपजत यह त्याग॥६५॥

ताको गुन कहतु हैं—

इन है सर्पन को विष नसै, जल पखारि पीवत सुख लसै।
कबहूँ कठ बन्ध, तिहि भयौ, जल नहि उगरत तिहि यह कयौ॥६६॥
सर्प डंक ऊपरि मनि धरो, लगि ताहि तूँवी परि खरो।
उतरि बिष पीवत नर सोई, विष टारन यह और न होई॥६७॥
पाछै धरीय भाजन भरी, उतरि परत पय मांझि जु हरी।
होत नील छवि पय जानीयइ, जल पखारि निज घरि आनिये॥

नरमनि विचार—

कोउ उत्तम नर जो होइ, ताके मस्तक उतपति लोइ।
चोकोनी ह्वै पांडुर रंग, पीत छाय ताके तनि सग॥६८॥

ष्यार गुंज सम ताको तोल, वस्तु अनोपम होत अमोल।
याके ढिग यह रहत सग्यान सो नर पूजा लहत सयान ।।७०।।
सोक्ष भाग्य अधिक नर कह्यो सो प्रधान नर शास्त्र कह्यौ।
तिहि रत्न माहि न जोतिहि कोई, जहाँ विवाद तहा विजयी होई ।।७१।।
अगिन आत रहै न कह्यौ पाठ, यह नरमनि फल को कहि ठाठ।
पढ़ै गुनै सो होई सग्यान सुनत नराधिप देत मान ।।७२।।
रत्न जाति पाछे मैं कही, ताको रात्तन की विधि यही।
सहज बन्यौ त्यौ ही रासिवौ घाट करन घसिवौ घासिवौ ।।७३।।
जब हो छोड़ न घसीयई सोई, त्याम रहन छेदन फल होई।
भरन अठारह गुनकी हानि ग्यान विशारद मुनिकी बानी।।७४।।
पुनः अगस्ति मुनि कहत है—
हम ही तुम सौ यह सुनो रत्नपरीक्षा जिहि विधि बनी।
भाग्यवन्त नरके इह हेत करत परीक्षा गहि संकेत ।।७५।।
पठत सुनत याको धरि ग्यान ताको देवत नरपति मान।
करत निरन्तर यो अभ्यास लक्ष्मी ता घर पूरन आस ।।७६।।
जस जग मैं ताको विस्तरै, रत्न विविध ताके घरि भरै।
यामे कछुजन जानहो कूर, रहत रिद्ध घरि होत सनूर ।।७७।।
अब ग्रन्थालंकार कथन—

अडिल्ल—मुनि अगस्ति जब मांनि कह्यो यह रत्न की।
पाठ सबै गुन जानि आनि मनि यत्न की।।
भाषा को सुख पाठ ठाठ सज्जन गहै।
यह मा मति अनुहार सार यामै कहै ।।७८।।

अति सरूप गुण धाम काम आकृति बन्यौ।
याकौ यश कैलास कास विकसित्त सुन्यौ[1] ॥
चन्द्र किरण मुगतानि वानि तिहि जग फिरै।
आन नहि कोऊ जोरि होरि कहौ क्यों करै ॥७६॥

छप्पइ—विद्या विनय विवेक विभो वानी विधि ग्याता।
जानत सकल विचार सार शास्त्रन रस श्रोता ॥
भीमसाहि कुलभान साहि संकर शुभ लछन।
पढत गुणत दिनरयन विविध गुन जानि विचछन ॥
कुल दीपक जीपक अरीय भरीय लछि भण्डार जिहि।
होहि रत्न व्यवहार रस इह प्रारथना कीन तिहि ॥८०॥

दो०—ता कारन कीनौ अलप, ग्रन्थजु मो मति मानि।
सज्जन सुनि सुध कीजीयउ, जहाँ घट मात्र जानि ॥८१॥
अंचल गछपति श्रीअमर,- सागरसूरि सुजान।
ताके पछि वाचक रतन,- शेखर इतिऽनिधान ॥८२॥
तिनि कीनी भाषा सरस, पढत होत बहुमान।
प्रथम लेख सुन्दर लिख्यौ, विवुध कपूर सग्यान ॥८३॥
रवि शशि मंडल मेरु महि, जौ लौ हूअ आकाश।
पढ़ै सो तौ लु थिर लहै, लीला लछि विलास ॥८४॥

इति श्री वाचक रत्नशेखर विरचिते रत्न व्यवहारो सारे
श्री मच्छ्री शंकरदास प्रियेण मणि व्यवहारो नामाष्टमो वर्ग

इति रत्न परीक्षा ग्रन्थ सम्पूर्ण

हिरण्यगर्भ[27] अंजन[28] अंक[29] अरिष्ट[30] श्रीकात[31] शिवकर[32] शिवफ्त[33] कौस्तभ[34] प्रभानाथ[35] वीतशोक[36] सौगंधकरत्न[37] गगोद[38] पुलकित[39] प्रभकर[40] ज्योतिसार[41] गुणमाल[42] सेतरुची[43] हंसमाल[44] अंशुमालि[45] हकाक[46] दाहिण फिरद्न[47] पारस[48] मरकत[49] सलेमानी[50] सगङगेम[51] संगकपूरी[52] कपूरजटी[53] कपूर[54] पचगम[55] वाफेड[56] फिटक[57] फिटक चुलोचा[58] दतला[59] तुलमरी[60] मोनेला[61] धोनेला[62] नावग[63] विलोर[64] लालडा[65] पटोलीया[66] मुसका[67] लाजवरद्न[68] हमानी[69] जवनीया[70] गोदता[71] तनजावरी[72] नेमावरी[73] भसमा[74] चूना[75] वावागोरी[76] गोमरली[77] जबरजद[78] संगमरगज[79]

परिशिष्ट (१)

॥ अथ नवरत्न की परीक्षा लिख्यते ॥

१—माणक रंग लाल श्री सूर्जजी को रतन॥ असल पुराणी खाण घाट कुतबी तलफसार वीस विश्वा रङ्ग रत्ती एकरो होवै तो मोल रुपीया पाचसै पावै आगे सवाई तोल अर दूणो मोल पावइ॥ १॥

२—मोती श्री चन्द्रमाजी रो रतन रंग सुफेत। असल पूतली पडतौ दाणो रती सवा रो होय तो रुपीया सौ १०० रो होय आगे सवायो तोल दूणो मोल जाणवो॥२॥

३—मूँगो रग लाल वीडवन्ध मंगलजी को रतन दक्षण देश मे उत्पन्न मासै १ रो असल रंग होय वेऐब होय॥३॥

४—पन्नो रग हरयो वीड़दार असल पुराणी खाण रत्ती १ रो घाट कुतवी तलफसार वीस विश्वा रंग होवै तो रुपीया २००) रो जाणवौ। आगे सवायो तोल दूणो मोल। श्री बुध देवता को रतन॥४॥

५—पुखराज रंग जरद तथा सुपेत श्री वृहस्पत देवता को रतन असल पुराणी खाण रती वीस रो होय तो रुपीया पांच सौ री कीमत पावै पछै सवायो तोल दूणो मोल जाणवौ॥ ५॥

६—हीरो रंग सुपेत असल गंगाजली घाट कुतबी शुक्र देवता को रतन। रती दोय होवै तो रुपीया हजार एक मोल पावै॥ ६॥

७—नीलम रंग नीलो अलसी रा फूल के रंग भी शनीसर जी को रतन। असंख पुराणी लाण घाट कुलवी रती पांच री होवै तो बेसरम, बेऐब सो दाम रुपीया पांचसे मोल पावे॥ पछे सवाई तोल दूणो मोल जाणवा॥

८—गुमेदक रंग गुडीया भी राहु देवता को रतन पीड़दार

९—लसनीयो रंग अरद अथा सीहीमायल केत देवता को रतन जात तीन कनकेत १ धुमकेत २ कृष्णकेत ३ कनककेत रंग अरद १ धूमकेत धूम्रवर्ण २ कृष्णकेत काले वर्ण ३

॥ इति नवरतन नाम सम्पूर्णम्॥

परिशिष्ट (२)

अथ मोहरां री परीक्षा लिख्यते

कैलासगिर पर्वत ऊपरि क्रीडा बिलासी महादेवजी बैठा थकां सिखर पाषाण लेई ने हाथ सुं घसी ने मोहरा कीधा। तिवारे पारवती हठ निमि करी सकोमल वचने करी महादेवजी ने आप वस करी ने मयगमय कीधो। बकद सारिलो करी किंकर थको करी ने पूछिवा लागी—प यटा रो कारण किसुं? तिवारे महादेवजी पारवती आगे कीहवें बर्ले मोहरां री परीक्षा कही। श्री गुरुप्रसाद थकी भेद कहीजे छे। मोहरां सघळां री आ परीक्षा छे। ॐ ह्री श्रीं सर्व काम फल प्रदायकं कुरु स्वाहाः॥"

वार २१ दूध मन्त्री मोहरो दूध माहे मूकीजै प्रभाते जोईजै दूध जमै तो लक्षण जोईजे। जिको मोहरो सघळोई सोना रै वर्ण होय, नीली पीली धवली काली राती माहे रेखा होय, तीको नीलकंठ मोहरो कहीजे तीको तीरे राखीजै तो समस्त सम्पदा लक्ष्मी भोगवै। घोड़ा चौपद पामीजै ज्ञान विद्या पामीजै कवीश्वर होय घणी आयु होय १।

जिको मोहरो रूपा सोना रै वरन होय धवली रेखा होय धवला बिंदु होय काला बिंदु होय मिनकी सारिखो होय तिको मोहरो धन धन लाभ दीये, तिण में संदेह नहीं २।

जिको मोहरो पचाया पारा रे वरण होय राता पारा सारिखो होय वरसालेरा इन्द्रधनुप सारिखो होय दोय तथा तीन धवली रेखा होय तिको मोहरो नारायणजी सारिखो कहीजे, तिणा थी सर्व अर्थ सिद्ध होय भलो प्रताप करइ अस्त्री ने वलभ होय सुख दाता होय ३।

जिको मोहरो पाडुर वर्ण होय माहि धवली रेखा होय मोर पींछ सारिखी मांहें मोज होय तिण थी द्रव्य लाभ होय, ठकुराई घणी होए महाईश्वर धनवंत होय ४।

जिको मोहरो कास्मीर रा दल सरीखो होय ऊजलो होय माहे नीली रेखा होय काला बिंदु मांहे होय महातेजवंत होय, तिको मणि कहीजे सघलाई काम अर्थ सिद्ध होय मन वछित फल पूरे ५।

जिको मोहरो पीत वर्ण होय धवळी मांहि रेखा होवै मणि
रे वर्ण सरीखो रस अथवा मोहरा बिंदा होय तिको मोहरो
सगळा गुणा करि संयुक्त कहीजे। तिण थी वैरी रो नाश होवै,
सघळा ही रोग नासै ६।

जिको मोहरो पारेवा रा गळा सरीखो वर्ण होय, धवळा
बिंदु मांहि होवै साप रा गळां सरीखी मांहि मोज होवै अथवा
मोतिया वर्ण सरीखो मांहि मोज होवै, तिको मोहरो सुध मणि
सारिखो कहीजे तिण थी सर्व विष नासै। अफीम वछनाग,
सोमलखार, सापू सिंदूर, प्रमुख विष नासै तिको मोहरो अमो
लक कहीजे ७।

जिको मोहरो हिरण रा वर्ण सरीखो महा तेजवंत होवै,
हाथी री आंख सरीखी मांहे बिन्दी होवै अथवा धवळी बिन्दी
होय हाथी री आंख रे आकारे होवे धवळी रेखा बिंदी उजळी
होय तेज करती होय मणि सारिखी बिन्दी होवै तिण थी भली
लक्ष्मी पामीजै घणा दीकरा होवै, अनेक प्रकार रा विष नासै,
संग्राम मांहि जय होवे शत्रु रो नास होवै, वैरी मे जीपै, घणा
प्रकार रा भोग पामीजै चतुरंग लक्ष्मी पामीजै मनवंछित
दीप ८।

जिको मोहरो नीली छवि होय अथवा नीला टबका होय,
सूर्य उगता सारिखो वर्ण छवि होय, अथवा कार्तिक बीजळी
सारिखो होय विच विच रूपा सारिखो होय, धवळी रेखा होय,
मोहरो चादुओ होय, चादुआ टबका होय तिको मोहरो हाथ

वांधीजै तिहरी प्रसिद्ध घणी भूइं ताइं होए, तिको मोहरो मणि सारिखो कहीजे, तिण थी सघला प्रकार नो विप नासइ द्रव्यवंत होए, दलद्री पिण धनवान होए, समत प्रथवी जगत वसि होए ६

जिको मोहरो चिरमी सारिखो होए विच-विच पंच वरणी रेखा होए विच-विच पंचवर्णा वाटलाविंद होए, सोभायमान तेजवंत होवै, निरमलो होए सहस्रफण शेपनाग रो विष तिण थी उतरैं। वले पूज्यो थको स्वर्ण मणि माणिक मोती दुपद चौपद रो लाभ करे, श्रेष्ठ तिको मणि कहीजै तिको मनुष्य प्रसिद्धवंत होए सिद्धिवंत पुण्यवान होवैं तिणरौ मोहरो इसो घरे आवै ॥१०॥

जिको मोहरो पीले वर्ण होए, पांच विंद होए सोभायमान होए, उजला विंदु वाटुला होऐ तिण थी स्त्री दीकरा रो सोभाग घणो होए ॥११॥

जिको मोहरो हंस रा वर्णा सारिखो होए अथवा हंस रा सारिखी रेखा होए पचवरणी रेखा होए, घणी रेखा होए पंचवर्णा घणा विन्दु होए तिण थी ताप तपति जाय समाध होय ॥१२॥

जिको मोहरो सिन्दूर वर्ण सरीखो होए विच धवली रेखा होए, काला विन्दु विचैं होए तिण थी सगला विष नासै ॥१३॥

जिको मोहरो पीले वर्ण होए, विचै वे तथा ४।५ रेखा होए विचै धवला बिन्दु होए तिण थी अजीर्ण मिटै अढारै जातरा विच्छु तणो विष नासै ॥१४॥

जिको मोहरो धवले पीले ही वर्ण होय, इन्द्रधनुष सारिखा नीली धवेही रेखा होय तिणथी आंख्यां रा रोग वेग पाणी विकार पाण दाह मुरखा आंख सूल ए रोग जाय ॥१५॥

जिको मोहरो काळो अथवा हरयो वर्ण होय माहि धवळी रेखा होय पीळी रेखा होय तिको निकेवळ विष रे काम आवे ॥१६॥

जिको मोहरो पीळी छाया होय गिद्ध रे वरणे होय हाथी री आंखे सारिखा धवळा बिन्दु होय, तिको मोहरो कुष्टि रे काम आवे कुष्ठादि हारो विष नासे अरुचि अजीर्ण आफरो समाधि होय ॥१७॥

जिको मोहरो पंच वर्ण होय अने करमाहे मोर होय महा तेजवंत होय तिण थी निकेवळ विष जाय समाधि होय ॥१८॥

जिको मोहरो सूर्य सारिखो ऊजळो होय किय कांइ एक राती पीळी छाय होय तिण थी बिछु रो विष नासे अने वळे परे सर्व सिद्धि होय ॥१९॥

जिको मोहरो राते वर्ण होय, कांइक पीळी छाया होय मांहि धवळा बिन्दु होय अथवा जिको मोहरो चिरमी सारिखो रातो होय मांहि विच विच धवळी रेखा होया ३ बिन्दु वळे मांहि होय अणविंध्यो होय तिको मोहरो जीमणे हाथ बांध्यो होय तो जगत्र पृथ्वी तिण रे वसि होय ॥२०॥

जिको मोहरो हींगळु अथवा चिरमी सरिखो रातो होय बिचे पीळे वर्णो होय ऊपर वळे रातो होय जिको मोहरो मणि

कहीजै लोहीठाण सूल आख री सूल आवै रोग एता रोग जाय ॥२१॥

जिको मोहरो मजीठ सारिखो रातो होए अथवा मजीठ रा रंग सारिखो होए विच विच नीले वण होवै पंच वर्णा विन्दु होए तिको मोहरो सर्व रोग हरे सर्व काम ऊपर चालै ॥२२॥

जिको मोहरो आधो रातो होए आधो कालो होए माहे धवली रेखा होए धवलाविन्दु होए एहवा मोहरा थकी साप रो विस नासै ॥२३॥

जिको मोहरो धूवा रै वर्ण होए अथवा आभै रे वर्ण होए, तेजवंत होए, पंचवर्णा अथवा वीजाइ प्रकार रा बिन्दु होए, तिण थी सगलाई प्रकार रा दोप जाय भूत प्रेत व्यंतर मोगो सीकोतरी शाकनी डाकिनी झोटिंग ए सर्व दोष जाए वले सिद्ध दाता होए ॥२४॥

जिको मोहरो पीले वर्णं होए, माहि पीली रेखा होए मांहे झल-झल सोभाग मा तेजवत बिन्दु होए तिण थी साप रो विष जाय ॥२५॥

जिको मोहरो पीली छबि होए, विच-विच काले वर्ण होए अथवा पीली रेखा होवै अथवा चिरमी सारिखी घणी राती रेखा होवं तिको मोहरो जिण रे घरे होए दूध गाय रा सुंहले ने घरे राखीजै चुपग ऊपर छांटा नाखीजै सर्व रोग जाए शुभसांती होए रोग घरे नावं ॥२६॥

जिको मोहरो रूपा वर्ण होय धवली रेखा होवै तेजवंत मनोहर होय निमळो पाणी होय तिको मोहरो ६ गुण करै अमोलक कहीजै मोती समान गुण मोल छै ॥२७॥

जिको महरो कोहळा रा फूल सारिखो वर्ण होय नीळी भाव होय भळा भळा बिन्दु होय तेजवंत बिंदु होय तिको मोहरो सर्व व्याधि हरे समस्त विष हरे ॥२८॥

जिको मोहरो ममोळिया सारिखो रातो होय भळा प्रकार रा माँहे बिंदु होवइ तेजवंत रूपवत होय तिको मोहरो सयळाइ प्रकार रा विष नासे ॥२६॥

जिको मोहरो दही सारिखो ऊजळो होय तेजवंत होवै कुंकम सारिखी माँहे रेखा होय, तिण मध्ये आंखो होवै माँहे त्रिशूळ होय तिको मोहरो शूळ रोग हरै पेट दुखतो रहै ॥३०॥

जिको मोहरो तांबा रें वर्ण होय, माँहे बिन्दु होय ३।४ आंखो होवै तेजवंत होय माँहे त्रिकोणा होय तिको मोहरो राससमास करै राज्यावसि सदा सर्वदा सुखी होय ॥३१॥

॥ इतिश्री ३१ मोहरां री पारिख्या समाप्त ॥

अथ २८ जात रा मोहरां रा नाम लिख्यते :—

१ पद्मराग २ पुष्पराग ३ मरकत ४ कर्केतन ५ वज्र ६ वइडूर्य ७ सूर्यकान्त ८ चन्द्रकान्त ६ जलकान्त १० नील ११ महा नील १२ इन्द्रनील १३ शूळहर १४ विषहर १५ रूपमणि १६ गरुड़मणि १७ चूनी १८ लोहिताक्ष १६ मसारगल्ल २० हंसगर्भ २१ पुळक २२ चिंतामणि २३ क्षीर २४ गंगोदक २५ मुक्ताफळ

२६ रोगहर २७ विद्रुम (परवालो) २८ विषहर २६ प्राबुहर ३० मह्नरत्न ३१ सोगंधिक रत्न ३२ ज्योतिरस रत्न ३३ अंजन रत्न ३४ सुभग रूप ३५ वैरोचन ३६ आजन पुलकरत्न ३७ जाति-रूप रत्न ३८ अंक रतन ३६ फरिक रतन ४० अरिष्ट रतन ४१ हीरो। इति श्री ४१ मोहरा रत्ना रा नाम सम्पूर्णम्

१—तथा दूध नं सन्ध्या रे वखत कोरी तावणी मे मोहरो घात जमावै प्रभाते दिन पोहर १ चढ्या दूधरो रंग जोईजे जो राते वर्ण दूध होव तो रण संग्राम कटक मे जीत होए आप रै पास राखीजै १

२—जो दूध काले वर्ण होय तो सरप रो जहर जावै तथा वीजाइ जहर जावै खोल पाइजै २

३—जो दूध पीले वर्ण होय, पीलीयो वाव कमलीवा वाव जाय ३

४—जो दूध वीतरै तो पेट पीडा सूल निजर चाख जाय ४

५—जो दूध काच सारिखो होय थण वले तो लाग वाव गोलो छणि जाय ५

६—जो दूध स्त्री रे थण सरीखो होय ओ मोहरो पास राखीजै, राज दरवार में महात्मपणो पामइ ६

७—जो दूध हरयो रंग होवें तो ताप तप गमावै ७

इति परीक्षा संपूर्णम्

सवत् १६०३ मिती आषाढ़ शुक्ल पक्षे पचम्या तिथौ सूर-वासरे लिखितं विक्रमपुरे मगनीरामेन ॥ शुभं भवतु ॥ श्रीरस्तु ॥

मोहरा परीक्षा ।

श्वेत पीत समायुक्ता इन्द्रनील सम द्युतिः ।
अधि रोगं च शूलं च अन्न पानात् व्यतोहते १
हरिद्र वर्णो भवेयस्तु श्वेत रेखा समन्वितः ।
पीत रेखा समायुक्तो निर्विष ग्रेव विषापहः २
यस्तु गोधूम वर्ण स्यात् गज नेत्राकृतिः शुभः ।
श्वेत बिन्दु भरो नित्यं भूताकीर्णं विनाशकः ३
रक्तांग श्वेत रेखा च बिन्दुत्रय समन्वितं ।
अरिष्ट भंगमेद्रस्ते गजवश्य विधायकः ४
गज नेत्रा कृतियंस्य विडालाक्षि सम प्रभ ।
तार्क्ष्य तेजो महातेम तेजस्वी जन वल्लभः ५

॥ इति मोहरा परीक्षा ॥

परिशिष्ट ३

कृत्रिम रत्न

अमेरिका में प्रकाशित एक रिपोर्ट 'इण्डस्ट्रियल एण्ड इंजि नियरिंग कैमिस्ट्री', में बताया गया है कि कृत्रिम ढंग पर तैयार किये गये नीलम और माणिक के पत्थर प्राकृतिक नीलम और माणिक के पत्थरों से अधिक शुद्ध स्वच्छ, बड़े तथा अपनी भौतिक एवं विद्युतगत्विक विशेषताओं की दृष्टि से अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं।

साथ ही, कृत्रिम नीलम और माणिक मणियाँ आभूपण के रूप मे अधिक मूल्यवान मानी जाती हैं, क्योंकि उनकी चमक प्राकृतिक रत्नों और मणियों से अधिक स्पष्ट होती है।

इस समय कृत्रिम नीलम का सबसे अधिक प्रयोग चश्मों के उद्योग मे होता है। कृत्रिम माणिक की सहायता से वैज्ञानिक 'मेसर' के नवीन संसार मे पहुँचने मे सफल हुए हैं। मूलत. 'मेसर' ऊर्जा-लहरियों को विस्तारित करने मे बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है। ये लहरियाँ रेडियो या प्रकाश लहरियाँ हो सकती हैं। मेसर का उपयोग रेडियो-विज्ञान के अन्तर्गत दूरवर्ती नक्षत्रावलियों से सम्पर्क स्थापित करने में किया जाता है।

कृत्रिम रत्न बनाने की विधि का प्रारम्भ १९०४ से हुआ, जब आगस्ट क्विटर लुई नामक एक फ्रासीसी रसायनशास्त्री ने ऐल्यूमिनियम आक्साइड और क्रोमियम आक्साइड के प्रकाश पुंजों को सम्मिलित करके कृत्रिम माणिक का निर्माण किया। आजकल यूनियन कारबाइड की लिण्डे कम्पनी एक जटिलतर विधि का प्रयोग करके विद्युदाणविक उपकरणों, चश्मों और आभूषणों के लिये नीलम के बड़े-बड़े मनके तैयार करती है।

(विज्ञान मार्च, १९६२)

नवरत्न रस

यह नवरत्न रस हीरा, पन्ना, मोती, माणिक, आदि नव-रत्नों की भस्म और सुवर्ण आदि के संयोग से तैयार किया

जाता है। यह अनेक कष्टसाध्य व्याधियों में अत्युत्तम सिद्ध हुआ है। शरीर में स्थित रस, रक्त आदि धातुओं की उत्तरोत्तर वृद्धि, शुद्धि और पुष्टि करता है। पुष्टि मिलने से निर्बलता दूर होकर शरीर नवयौवन प्राप्त करता है।

स्त्रियों के गर्भावस्था होनेवाले पांडु, रक्त की कमी, हाथ और पैरों में शोथ तथा श्वास आदि रोगों की उत्पत्ति को रोकता है। अल्प-सत्वयुक्त प्रजा होती हो या बालक जन्मते ही मर जाता हो तो नवरत्न रस प्रथम मास से प्रसवकाल तक सेवन करने से प्रसव सुखपूर्वक होता है। बालक भी तन्दुरुस्त जनमता है। अकालप्रसूति और रक्त-स्राव नहीं होता। बालकों के लिये भी महौषध है। इससे बालक हृष्ट-पुष्ट बनता है।

—आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका
(मई १९५२)